हिन्दी प्रचारिणी सभाः (कैनेडा) की अंतर्राष्ट्रीय त्रैमासिक पत्रिका
Hindi Chetna: International quarterly magazine of Hindi Pracharini Sabha Canada
वर्ष : १७, अंक : ६६, अप्रैल २०१५ •Year 17, Issue 66, April 2015

हिन्दी चेतना

**ढींगरा फ़ाउण्डेशन–
हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय
साहित्य सम्मान**

उषा प्रियंवदा

चित्रा मुद्‌गल

डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी

शिवना प्रकाशन

पाल ले इक रोग नादाँ...
(ग़ज़ल संग्रह)
ISBN: 978-93-81520-07-9
गौतम राजरिशी
मूल्य : 200 रुपये

दस प्रतिनिधि कहानियाँ
(कहानी संग्रह)
ISBN: 978-93-81520-17-8
सुधा ओम ढींगरा
मूल्य : 100 रुपये

कसाब.गांधी@यरवदा.in
(कहानी संग्रह)
ISBN: 978-93-81520-18-5
पंकज सुबीर
मूल्य : 150 रुपये

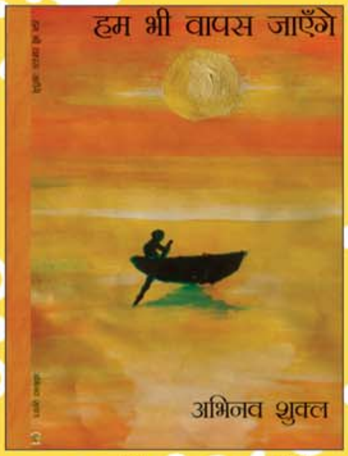

हम भी वापस जाएँगे
(कविता संग्रह)
ISBN: 978-93-81520-19-2
अभिनव शुक्ल
मूल्य : 100 रुपये

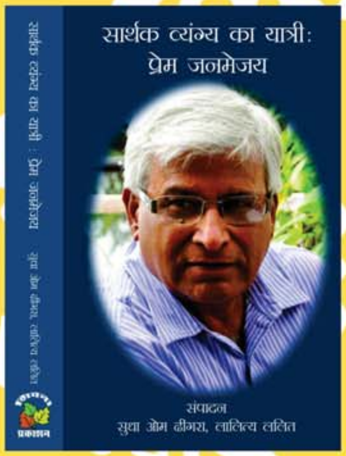

सार्थक व्यंग्य का यात्रीः प्रेम जनमेजय
(हिन्दी चेतना ग्रंथमाला)
ISBN: 978-93-81520-16-1
सं. सुधा ओम ढींगरा, लालित्य ललित
मूल्य : 350 रुपये

शिवना प्रकाशन की पुस्तकें अब सभी प्रमुख ऑनलाइन शॉपिंग स्टोर्स पर उपलब्ध हैं

http://www.flipkart.com

http://www.amazon.in

http://www.ebay.in

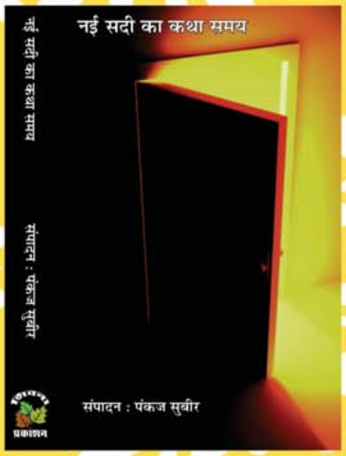

नई सदी का कथा समय
(हिन्दी चेतना ग्रंथमाला)
ISBN: 978-93-81520-14-7
सं. पंकज सुबीर
मूल्य : 200 रुपये

शिवना प्रकाशन

शॉप नं. 3-4-5-6, पी. सी. लैब, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्यप्रदेश 466001
फोन 07562-405545, 07562-695918, मोबाइल +91-9977855399
Email: shivna.prakashan@gmail.com, http://shivnaprakashan.blogspot.in

संरक्षक एवं प्रमुख सम्पादक
श्याम त्रिपाठी
(कैनेडा)

सम्पादक
सुधा ओम ढींगरा
(अमेरिका)

सह-सम्पादक
रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' (भारत)
पंकज सुबीर (भारत, समन्वयक)
अभिनव शुक्ल (अमेरिका)

परामर्श मंडल
पद्मश्री विजय चोपड़ा (भारत)
कमल किशोर गोयनका (भारत)
पूर्णिमा वर्मन (शारजाह)
पुष्पिता अवस्थी (नीदरलैंड)
निर्मला आदेश (कैनेडा)
विजय माथुर (कैनेडा)

सहयोगी
सरोज सोनी (कैनेडा)
राज महेश्वरी (कैनेडा)
श्रीनाथ द्विवेदी (कैनेडा)

विदेश प्रतिनिधि
डॉ. एम. फ़िरोज़ ख़ान (भारत)
चाँद शुक्ला 'हदियाबादी' (डेनमार्क)
अनीता शर्मा (शिंघाई, चीन)
अनुपमा सिंह (मस्कट)

वित्तीय सहयोगी
अश्विनी कुमार भारद्वाज (कैनेडा)

आवरण चित्र तथा अंदर के रेखाचित्र
रोहित रूसिया (छिंदवाड़ा)

डिज़ायनिंग
सनी गोस्वामी (सीहोर, भारत)
शहरयार अमजद ख़ान (सीहोर, भारत)

हिन्दी चेतना

(हिन्दी प्रचारिणी सभा कैनेडा की त्रैमासिक पत्रिका)
Hindi Pracharini Sabha & Hindi Chetna
ID No. 84016 0410 RR0001
Financial support provided by
Dhingra Family Foundation
वर्ष : १७, अंक : ६६
अप्रैल-जून २०१५
मूल्य : ५ डॉलर ($5), ५० रुपये
'हिन्दी चेतना' को आप ऑनलाइन भी पढ़ सकते हैं :
http://www.vibhom.com/hindi chetna.html
http://hindi-chetna.blogspot.com
फेसबुक पर 'हिन्दी चेतना' से जुड़िये
https://www.facebook.com/hindi.chetna

HINDI CHETNA

6 Larksmere Court, Markham Ontario, L3R 3R1
Phone : (905) 475-7165, Fax : (905) 475-8667
e-mail : hindichetna@yahoo.ca

Hindi Pracharini Sabha & Hindi Chetna ID No. 84016 0410 RR0001

Hindi Chetna is a literary magazine published quarterly in Toronto, Ontario under the editorship of Mr. ShiamTripathi. Hindi Chetna aims to promote the Hindi language, Indian culture and the rich heritage of India to our children growing in the Canadian society. It focuses on Hindi Literature and encourages creative writers, young and old, in North America to write for the magazine. It serves to keep readers in touch with new trends in modern writing. Hindi Chetna has provided a forum for Hindi writers, poets, and readers to maintain communication with each other through the magazine. It has brought local and international writers together to foster the spirit of friendship and harmony.

इस अंक में

वर्ष : 17, अंक : 66, अप्रैल-जून 2015

सम्पादकीय 5

उद्‌गार 6

कहानियाँ

इमेज
प्रज्ञा 11

मोहभंग
वंदना देव शुक्ल 17

शारदा
महेन्द्र दवेसर दीपक 21

गॉड ब्लैस यू ...
डॉ. वंदना मुकेश 24

रस्म-ए-इजरा
भूमिका द्विवेदी अश्क 29

लघुकथा

आखिरी पड़ाव का सफर
सुकेश साहनी 33

भीतर की आग
डॉ. सतीशराज पुष्करणा 33

चेतना
मधुकान्त 41

विश्व के आँचल से

एक थी माया
गरिमा श्रीवास्तव 34

प्रवासी साहित्य की अवधारणा और स्त्री कथाकार
निर्मल रानी 39

दृष्टिकोण

अमेरिका में बसे प्रवासी और उनकी काव्य साधना
मंजु मिश्रा 42

गीत

रजनी मोरवाल 44

कविताएँ

डॉ. कविता भट्ट 45

प्रिया राणा 46

प्रेम गुप्ता 'मानी' 46

सुशीला शिवराण 47

अभिनव शुक्ल 48

सौरभ पाण्डेय 49

रेखा भाटिया 49

पारुल सिंह 50

सविता अग्रवाल 'सवि' 51

नीलम मलकानिया 51

दोहे

अशोक अंजुम 52

ग़ज़ल

सुशील ठाकुर 53

रमेश तैलंग 53

हाइकु

डॉ. सुरेन्द्र वर्मा 54

डॉ. अर्पिता अग्रवाल 54

डॉ.गोपाल बाबू शर्मा 54

भाषांतर

ज़ेबा अल्वी 55

अविस्मरणीय

नज़ीर बनारसी 56

संस्मरण

फूलों की महक-सा गमकता हुआ कथाकार
सैली बलजीत 57

ओरियानी के नीचे

औरतपन
रेनू यादव 60

पुस्तक समीक्षा

आँख ये धन्य हैं : नरेंद्र मोदी
देवी नागरानी 61

रंग ज़िंदगी के
पूनम माटिया 62

पुस्तकें 63

साहित्यिक समाचार 64

विश्व पुस्तक मेले की झलकियाँ 69

विलोम चित्र 73

आख़िरी पन्ना

सुधा ओम ढींगरा 74

'हिन्दी चेतना' की सदस्यता प्राप्त करने हेतु सदस्यता शुल्क 200 रुपये (एक वर्ष), 400 रुपये (दो वर्ष), 1000 रुपये (पाँच वर्ष) अथवा 3000 रुपये (आजीवन) आप 'हिन्दी चेतना' के बैंक एकाउंट में सीधे अथवा ऑनलाइन भी जमा कर सकते हैं।

Bank : YES Bank, **Branch :** Sehore (M.P.)
Name : Hindi Pracharini Sabha Hindi Chetna
Account Number : 041185800000124
IFS Code : YESB0000411

**भारत में 'हिन्दी चेतना' के सदस्य बनने हेतु संपर्क करें-
पंकज सुबीर, पी. सी. लैब, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्य प्रदेश-466001
मोबाइल : 09977855399, दूरभाष 07562-405545**
ईमेल : subeerin@gmail.com

'हिन्दी चेतना' सभी लेखकों का स्वागत करती है। अपनी मौलिक रचनाएँ चित्र और परिचय के साथ भेजें। 'हिन्दी चेतना' एक साहित्यिक पत्रिका है, अत: रचनाएँ भेजने से पूर्व इसके अंकों का अवलोकन ज़रूर कर लें। रचनाएँ भेजते समय निम्नलिखित नियमों का ध्यान रखें:

- 'हिन्दी चेतना' जनवरी, अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होगी।
- प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों का पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक पर होगा।
- पत्रिका में राजनैतिक तथा विवादास्पद विषयों पर रचनाएँ प्रकाशित नहीं की जाएँगी।
- रचना को स्वीकार या अस्वीकार करने का पूर्ण अधिकार संपादक मंडल का होगा।
- प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जाएगा।
- सामग्री यूनिकोड अथवा चाणक्य फॉण्ट में भेजें, पीडीएँफ़ अथवा स्कैन इमेज न भेजें।
- बहुत अधिक लम्बे पत्र तथा लम्बे आलेख न भेजें।

पत्रिका में प्रकाशित सामग्री लेखकों के निजी विचार हैं । संपादक मंडल तथा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है ।

लिपि के बिना भाषा का अस्तित्व कहाँ रह जाता है ?

कैनेडा के प्रधान मंत्री श्री हार्पर के निमन्त्रण पर भारत के प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी कैनेडा आ रहे हैं ओंटेरियो के टोरंटो नगर में, जहाँ भारतीयों की बहुतायत है। यहाँ की संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने एक सामूहिक योजना बनाकर, मिडिया के ऑन लाइन माध्यम से अधिक से अधिक लोगों तक मोदी जी के विचार पहुँचवाने की व्यवस्था की है। लोग उनका हिन्दी में भाषण सुनने के लिए बेहद उत्सुक हैं। एक बात उल्लेखनीय है कि जबसे मोदी सरकार ने देश की बागडोर अपने हाथ में ली है, हिन्दी भाषा जगमगा उठी है। हिन्दी का प्रचार और प्रसार ज़ोर पकड़ रहा है। हिन्दी के समाचार तथा मोदी जी के हिन्दी में समयानुकूल भाषण सुनकर नई प्रेरणा और ऊर्जा मिलती है।

एक तरफ तो प्रधान मंत्री विदेशों में हिन्दी में भाषण देते हैं। दूसरी तरफ अंग्रेज़ी के लोकप्रिय उपन्यासकार चेतन भगत ने हिन्दी को लोकप्रिय बनाने के लिए देवनागरी छोड़कर रोमन में लिखने का सुझाव दिया और कहा है कि सारी दुनिया की भाषाओं के लोग ऐसा कर रहे हैं। यह सुन कर दु:ख नहीं निराशा हुई; क्योंकि समय –समय पर हिन्दी के कई प्रतिष्ठित लेखकों ने हिन्दी को रोमन में लिखने का विकल्प सुझाया है। अंग्रेज़ी वाले ऐसे बातें करें तो आश्चर्य नहीं पर स्वयं हिन्दी लेखक अपनी लिपि को समाप्त करने पर तुले हैं, उस नींव को मिटा रहे हैं, जिस पर वे टिके हैं। लिपि के बिना भाषा का अस्तित्व कहाँ रह जाता है? क्या हिन्दी जब रोमन में लिखी जाएगी तो एक भाषा के रूप में उसका वैशिष्ट्य बचा रहेगा? चित्रलिपि (Ideographic scripts) – चीन, जापान एवं कोरिया में प्रयुक्त लिपियाँ कैसे रोमन में बदली जा सकती है? क्योंकि हर एक भाषा की लिपि का एक आकार, एक स्वरूप होता है, जिसे जीवित रखने में युग लग जाते हैं और पीढ़ी दर पीढ़ी उसे सुरक्षित रखना पड़ता है। अंग्रेज़ों ने हमारे इतिहास, साहित्य, संस्कृति, सभ्यता और भाषाओं के साथ अन्याय किया, अब देसी अंग्रेज़ भाषा के साथ खिलवाड़ कर रहे हैं। यूनिकोड के पदार्पण के बाद देवनागरी का रोमनीकरण (romanization) अब अनावश्यक होता जा रहा है। क्योंकि धीरे-धीरे कम्प्यूटर पर देवनागरी को (और अन्य लिपियों को भी) पूर्ण समर्थन मिलने लगा है। रोमन को हिन्दी में लाने के लिए जो बाहरी ताकतें अपना तंत्र प्रयोग कर रही हैं, देशवासियों को उनसे सतर्क रहना पड़ेगा। इससे देश का एक और बंटवारा होगा। किसी देश को कमज़ोर करने का यह एक तरह से हथियार है। अंग्रेज़ीदां और देवनागरी प्रेमियों के बीच दूरी बढ़ जाएगी और साथ ही भारत और इंडिया की भी।

एक विशेष सूचना देते हुए हमें हर्ष हो रहा है कि इस वर्ष ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन और हिन्दी चेतना अपने अंतर्राष्ट्रीय सम्मान समारोह नार्थ कैरोलाइना अमेरिका में 30 अगस्त 2015 को आयोजित कर रही है। इसके अंतर्गत उषा प्रियंवदा, यू एस ए (समग्र साहित्यिक अवदान हेतु), चित्रा मुद्गल, भारत (प्रसिद्ध कहानीकार) और डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी, भारत (उपन्यासकार) को सम्मानित किया जाएगा।

मैं 'हिन्दी चेतना' के सह संपादक और भारत के संयोजक प्रतिष्ठित कहानीकार, उपन्यासकार श्री पंकज सुबीर का हिन्दी चेतना की टीम की ओर से विशेष रूप से आभार प्रकट करना चाहता हूँ; जिन्होंने इस बार दिल्ली के पुस्तक मेले में शिवना प्रकाशन और हिन्दी चेतना तथा ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन के स्टॉल पर अनथक कार्य किया। श्री नीरज गोस्वामी, सनी गोस्वामी, शहरयार अमजद ख़ान और पारुल सिंह का भी हार्दिक धन्यवाद, जिन्होंने श्री पंकज सुबीर का वहाँ साथ दिया।

पत्रिका कैसी लगी? आपकी प्रतिक्रियाएँ जाने की उत्सुकता रहती है। अपनी राय से अवगत कराते रहें।

आपका,

श्याम त्रिपाठी

श्याम त्रिपाठी

उद्‌गार

कविताओं ने मन मोह लिया

मेरी प्रिय साहित्यिक पत्रिका--हिन्दी चेतना--जनवरी अंक जब मिला तो दिल बाग-बाग हो उठा। इस अंक में प्रकाशित कविताओं ने मन मोह लिया। अटल बिहारी बाजपेयी जी, लालित्य ललित, नरेन्द्र व्यास, पूनम मनु, शार्दुल नोगजा, अनिल पुरोहित, ममता किरण आदि की कविताएँ बेहद उत्कृष्ट रहीं। मेरी कविताएँ छापने पर हिन्दी चेतना का तहे दिल से शुक्रिया। इसके साथ दोहे व हाइकु भी प्रशंसनीय रहे। लघुकथा व कहानियों में भी ताज़गी रही। अन्य अंक भी सदा की तरह लाजवाब लगे। संपादकीय और सुधा जी का आख़िरी पन्ना बेजोड़ है। महिला रचनाकारों की संख्या वृद्धि आधे आकाश की जीत का द्योतक है। हिन्दी चेतना के डैने कितने सशक्त, सुदूरगामी और समृद्ध हो गए है, यह मुझे मेरी कविताओं पर मिले फ़ोन और संदेशों से ज्ञात हुआ। एक अत्यंत मँझी हुई, सोद्देश्य, सफल पत्रिका के रूप में पत्रिका ने अपनी पहचान स्थापित कर ली है। हर अंक संग्रहणीय है। बधाई!!!

-शोभा रस्तोगी (भारत)

****

साहित्य की सम्पूर्ण पत्रिका है

आपके द्वारा सुसम्पादित मासिक 'हिन्दी चेतना' का जनवरी-मार्च 15 अंक पत्रिका के भारतीय संयोजक श्री पंकज सुबीर जी के सौजन्य से प्राप्त हुआ। चर्चा तो खूब पढ़ी-सुनी थी लेकिन पहली बार अवलोकन का सुयोग हुआ, अत्यंत सलीके से बेहतरीन सामग्री परोसी गई है। साहित्य की सम्पूर्ण पत्रिका है विशेष रूप से कहानियाँ, रघुविन्द्र यादव के दोहे, अटल जी की कविता। हरीश नवल जी ने लोकोक्ति से अपने व्यंग्य का बेहतर तानाबाना सजाया है। कुल मिलाकर इस बेहतरीन प्रकाशन के लिए मैं सम्पूर्ण पत्रिका परिवार को बधाइयाँ देता हूँ!

-अशोक अंजुम (भारत)

****

सारगर्भित और रोचक

हिन्दी चेतना का अक्टूबर 2014 का आलोचना विशेषांक अंक पढ़ा। बहुत ही उच्च कोटि का है। इस अदभुत कार्य के लिए आप सभी को हार्दिक शुभकामनाएँ और बधाई! हिन्दी चेतना एक ऐसी पत्रिका है, जिसके नए अंक की प्रतीक्षा रहती है और मुझे कुछ नया लिखने की प्रेरणा देती है।

-सविता अग्रवाल 'सवि' (कैनेडा)

****

प्रवासी साहित्यकारों पर गर्व

जनवरी 2015 का 'हिन्दी चेतना' का अंक मिला। यूँ तो मैं कई वर्षों से इस पत्रिका की पाठक हूँ। किन्तु पिछले कुछ वर्षों से पत्रिका में आए स्तरीय परिवर्तन को देखकर मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि अच्छे लेखक, कवि और कहानीकार केवल भारत में ही नहीं, आज विश्व के अनेकों देशों में बैठे हुए प्रवासी लेखक अपनी व्यस्त कार्यप्रणाली में रहकर प्रशंसनीय काम कर रहे हैं। हिन्दी चेतना के किसी पुराने अंक में दिवेसर जी कहानी 'दो पाटन के बीच' में पढ़ी थी, जो अभी तक मेरे भीतर गूँजती है। मेरे सामने यह नया जनवरी 2015 का अंक है और मैं 'बहता पानी' अनिल प्रभा कुमार की कहानी पढ़कर पत्र लिखने से अपने को रोक नहीं पाई हूँ। मैं इस लेखिका को हृदय से बधाई देती हूँ; जिसने इस कहानी से मुझे मेरे अतीत से जोड़ दिया। प्रवासी जीवन की कुछ ऐसी विषम विडम्बनाएँ हैं; जो इस कहानी की आधार शिला हैं। जिन्हें केवल वही लोग समझ सकते हैं; जो यह यथार्थ भोग चुके हैं।

विदेश में आकर जब दुबारा अपने प्रियजनों से मिलने जाते हैं, और जिन धागों से बँधे हुए होते हैं, वे वहाँ टूटे मिलते हैं; इस पीड़ा का इतनी मार्मिकता से दृश्य-चित्रण लेखिका ने किया है, जिसे पढ़कर आँखें नम हो गईं एक बेटी विदेश से, जब अपने पति के घर से, अपने मायके जाती है उसकी क्या-क्या आशाएँ होती हैं। माता-पिता का दुलार, भाई-बहनों का स्नेह,उसके क्या-क्या सपने होते हैं! वे बीते दिन, जो एक साथ खुशियों के साथ बिताये थे, चल-चित्र की तरह सामने आ जाते हैं। लेकिन जहाँ पर माता-पिता स्वर्गवासी हो गए हों तो वहाँ पर एक बेटी के ऊपर क्या बीतती है, जब उसे भाभी और भाई की बेरुख़ी वाला व्यवहार झेलना पड़ता है। अभिव्यक्ति बहुत ही संवेदनशील है। उसके मन में आता है कि उसे वहाँ नहीं जाना चाहिए। वह घर अब उसका नहीं रह गया। उसे पंजाब के लोक गीत याद आते हैं और उसे जीवन की सच्चाई खूब समझ में आती है। उस बेटी के मन में कितने प्रश्न उठते हैं, इन सभी का उत्तर कहानीकार ने बड़ी कुशलता से दिया है। कहानी में एक सरलता है, गम्भीरता है, और भावुकता है। कहानीकार ने अपने कथानक के साथ पूर्ण निर्वाह और न्याय किया है। कहानी के गुणों और तत्त्वों की कसौटी पर यह कहानी खरी उतरती है। विदेशी साहित्य के कहानीकारों की चर्चित कहानियों में से यह कहानी मेरे विचार से बहुत ही सुंदर लिखी गई है। आशा है कि भविष्य में भी 'हिन्दी चेतना' अनिल प्रभा कुमार की अन्य कहानियाँ को पढ़ने का अवसर प्रदान करेगी। मुझे प्रवासी साहित्यकारों पर गर्व है कि वे अपनी कहानियों से विदेश और स्वदेश दोनों संस्कृतियों को निकट लाने का प्रयास करते हैं, और बेहतरीन कहानियाँ रचते हैं।

-नेहा शर्मा (कैनडा)

****

बहुत सुन्दर अंक

इस बार की चेतना अभी समाप्त कर के उठी हूँ, बहुत सुन्दर अंक है। कविताएँ, ग़ज़ल, लेख, सुधा जी का लिया गया साक्षात्कार, कहानियाँ सब बहुत सुन्दर और प्रभावकारी हैं। सरस दरबारी की कहानी 'इष्टाबाई' ने सामाजिक सुरक्षा की कीमत चुकाती हुई स्त्री की व्यथा को मार्मिक तरह से आँका है, तो कंचन सिंह चौहान की कहानी 'मोरा पिया मोसे बोलत नाहि' ने स्त्री की प्रेम की आशा और इच्छा को झटके से चूर-चूर होते दिखाया है। कहानी अपनी बुनावट से पाठक की उत्सुकता को बढ़ाती चलती है..और अंत में पाठक की संवेदना चरम पर पहुँच जाती है।

इस बार की सभी कहानियाँ स्त्री व्यक्तित्त्व के किसी न किसी पक्ष के आहत होने को बहुत मार्मिकता से दिखाती हैं। चीनी आत्मकथा का अनुवाद मन को दु:खी कर गया, स्त्री सौन्दर्य के लिये स्त्री यातना का क्रूर कर्म करने वाले उस सामाजिक इतिहास को हमारे सामने लाने के लिए सुधा अरोड़ा जी बधाई की पात्र हैं। कविताएँ सब एक से बढ़ कर एक ! अटलबिजारी बाजपेयी जी की कविता बहुत प्रेरणास्पद है। हरीश नवल जी का व्यंग्य हमेशा की तरह बहुत धारदार, और सच्चा रहा। आप लोग पत्रिकाओं और पुस्तकों के छपने का समाचार हम तक पहुँचा कर बाहर की दुनिया से हमें जोड़ते हैं, इसके लिये आपका बहुत-बहुत धन्यवाद। अटल जी की पंक्ति 'ज़रूरी यह है /कि

ऊँचाई के साथ विस्तार भी हो' की सूक्ति 'हिन्दी चेतना' पर खरी उतरती है; जिसमें ऊँचाई के साथ-साथ विस्तार भी है। सुधा जी और श्री श्याम त्रिपाठी जी की मेहनत और लगन को नमन और बधाई !

-डॉ. शैलजा सक्सेना (कैनेडा)

****

एक से बढ़कर एक रचनाएँ

हिन्दी चेतना का नया अंक मन प्रफुल्लित कर गया। एक से बढ़कर एक रचनाएँ हैं। सुप्रसिद्ध कहानीकार मृदुला जी की भाषा में उर्दू के शब्दों का प्रयोग अधिक है, किन्तु उनके अनुभव मन पर छाप छोड़ते हैं। आख़िरी पन्ना तो सदा प्रभावी होता है। चयन और कुशल संपादन के लिये बधाई !

-शकुन्तला बहादुर (अमेरिका)

****

सभी पत्र /पत्रिकाओं से आगे

भारतीय मूल के कैनेडा/अमेरिका वासियों की साहित्यिक अभिरुचियों को परिष्कृत करने वाली हिंदी चेतना वर्तमान भारत में प्रकाशित लगभग सभी पत्र /पत्रिकाओं से आगे है। धर्मयुग, साप्ताहिक हिंदुस्तान, वामा, सारिका, निहारिका आदि जैसी पत्रिकाओं के लिए मैं नियमित रूप से लिखती थी, जो सुखद स्मृति मात्र रह गईं हैं। जो अभी भी चल रही हैं, उनका स्तर अब वैसा नहीं कि जिनके लिए लिखने में गर्व हो, पूर्ण आत्मसंतुष्टि हो। इस पत्रिका के लिए में लिखना चाहूँगी।

-इंदिरा मित्तल (अमेरिका)

****

'बहता पानी' की लेखिका बधाई की पात्र

अनिल प्रभा कुमार की कहानी 'बहता पानी' मैंने 'कथांतर अमरीका से हिंदी कहानियाँ' किताब में पढ़ी थी, अब हिन्दी चेतना में और साथ ही कहानी भीतर कहानी में इसकी समीक्षा भी पढ़ी। कथांतर में प्रभाकर श्रोत्रिय ने लिखा है--'कथांतर' इसलिए अर्थवान है कि इसमें संग्रहीत कहानियाँ केवल प्रवासी भारतीय लेखक ही लिख सकते थे, जिन्होंने उन अनुभवों को जिया है। कुछ भारतीय लेखकों ने भी विदेशों को रचने की कोशिश की है, परंतु वह उनकी संवेदना, चेतना और कला का भाग है-अनुभव का नहीं। यहाँ सभी कहानियाँ जो तनाव झेल रही हैं वे उनका शिल्प नहीं, कथ्य हैं। वे संबंधों का आतंक और जद्दोजहद उस तरह उतारकर नहीं फेंक सकी हैं जैसे पश्चिमी मनुष्य उन्हें उतार फेंकता है। अपने देश से मोह-भंग की पीड़ा भी उसी व्यक्ति को अधिक सालती है, जो परदेश के अजनबीपन को धकेलने के लिए एक विशेष मोह से देश आया है-'कौन सी ज़मीन अपनी' या 'बहता पानी' जैसी कहानियों में इस आघात को देख सकते हैं। सुशील सिद्धार्थ एक अच्छे आलोचक हैं पर इस कहानी पर की गई आलोचना, मैं समझ नहीं पाई। हो सकता है कि गहरी आलोचना समझना मेरे जैसे पाठक के बस की बात ना हो। हाँ एक बात ज़रूर समझ में आई है कि प्रवासी लेखक जब भारतीय आलोचकों की बेरुखी की चर्चा करते हैं, तो वे क्यों करते हैं? भारत के आलोचक प्रवासी लेखन को समझने की चेष्टा ही नहीं करते। संवेदनाओं के जिस धरातल पर प्रवासी साहित्य लिखा जाता है, उस धरातल तक कोई पहुँचना ही नहीं चाहता। 'बहता पानी' की लेखिका बधाई की पात्र हैं। मैं स्वयं इसी तरह के अनुभवों से गुज़र चुकी हूँ और इस कहानी के भीतर की कहानी और दर्द को पहचानती हूँ।

-डॉ. पारुल वर्मा (न्यूयॉर्क, अमरीका)

****

कहानियाँ पढ़कर विभोर हूँ

'हिन्दी चेतना' के जनवरी अंक की कहानियाँ पढ़कर विभोर हूँ। 'सितम के फ़नकार' मृदुला गर्ग की कहानी का शिल्प बहुत पसंद आया। उर्दू के शब्दों की भरमार कुछ अटपटी लगी, ना पात्र मुस्लिम थे, ना माहौल। पर कहानी ने बाँध लिया। 'सिगरेट बुझ गई' नीना पॉल की कहानी शक से तबाह हुए संबंधों के यथार्थ को बखूबी चित्रित करती है। शक देश-विदेश किसी भी धरती पर उग सकता है। ऐसी कहानियाँ देशों की सीमाओं से पर होती हैं। मोरा पिया मोसे बोलत नाहि.. कंचन सिंह चौहान की कहानी आज की युवा पीढ़ी का सही प्रतिनिधित्व करती है। आज संबंधों में देह का महत्त्व अधिक है। आज का प्रेम भी कपड़ों की तरह बदला जाता है। अनिल प्रभा कुमार की 'बहता पानी' अपने साथ बहा ले गई। देश में बढ़ रही भौतिकवादी संस्कृति और सोच संबंधों पर हावी हो रही है। गाँवों में तो फिर कुछ रिश्तों की गरिमा बची है, पर शहरों में तो सब उथला चूका है। 'बहता पानी' बहुत प्यारी कहानी लगी। माँ-बाप की मृत्यु के बाद मैंने भारत में ही रह रही कई लड़कियों के साथ इस तरह का व्यवहार होते देखा है।

मुझे दूसरे देशों के बारे में जानने की बहुत इच्छा रहती है और विदेशों से जुड़ा कुछ भी मैं खूब पढ़ती रहती हूँ। प्रवासी कहानियों को पढ़ने का शौक भी इसी इच्छा के तहत हुआ। प्रवासी कहानियों में परिवेश, वर्णन मुझे बहुत आकर्षित करता है। बहुत सी प्रवासी कहानियों का परिवेश विदेश का है पर पात्रों की पीड़ा, सरोकार अपने देश के महानगरों के बाशिंदों के लगते हैं। कविताएँ, दोहे, हाइकु, व्यंग्य, डायरी के पन्ने सब कुछ समेटा हुआ है, इस पत्रिका में। साक्षात्कार से पता चला, विदेशों में हिन्दी कैसे पढ़ाई जाती है! मैंने हिन्दी चेतना में कभी यात्रा-संस्मरण नहीं देखे। देश वासियों को इसी बहाने विदेश की यात्रा करवाएँ। सुधा जी का आख़िरी पन्ना सबसे पहले पढ़ती हूँ। थोड़ा लम्बा लिखा कीजिए तो और भी आनंद आए, एक कसक रह जाती है; जैसे प्यास बुझ नहीं पाती।

-सुलभा धर (जे एन यू, दिल्ली, भारत)

****

यह पहला पन्ना होना चाहिए

'हिन्दी चेतना' का नया अंक मिला। यह आकर्षक और पठनीय है। सम्पादकीय में त्रिपाठी जी ने लिखा है कि श्री नरेन्द्र मोदी के हिन्दी प्रेम के कारण विदेशों में भी हिन्दी भाषा के प्रति जागरूकता में वृद्धि हुई है। उन्होंने सुधा जी को उनके पुरस्कृत होने पर बधाई दी है। मैं भी उनके साथ सुधा जी का अभिनन्दन करता हूँ। उन्हें आगे और भी पुरस्कार सम्मान मिलेंगे, जो साधक है उसे ही सिद्धि मिलती है। इस अंक की कहानियों ने इसका गौरव बढ़ाया है। अनिल प्रभा कुमार की कहानी एक अच्छी कहानी है, जो पीहर की स्मृतियों की वेदना पर लिखी गई है। अटल बिहारी बाजपेयी की कविता ऊँचाई स्वयं कवि की ऊँचाइयों की याद दिलाती है। नासिरा शर्मा पर पुष्पा सक्सेना का संस्मरण भी लेखिका के व्यक्तित्व को उद्घाटित करता है। सुधा ओम ढींगरा के आख़िरी पन्ने को पढ़कर मुझे कई बार लगा की यह पहला पन्ना (सम्पादकीय के बाद) होना चाहिए। इसमें पाठक लेखक के साथ 'हिन्दी चेतना' की त्रिवेणी की चर्चा शुरू करके एक अच्छी बहस शुरू की गई है, जो आगे भी चलती रहनी चाहिए।

-डॉ. कमल किशोर गोयनका
उपाध्यक्ष केंद्रीय हिंदी संस्थान

****

ढेर सारी बढ़िया सामग्री

मुझे अच्छा लगता है देखकर कि 'हिन्दी चेतना' पत्रिका अब बहुत रुचिकर हो गई है और उसका साहित्यिक स्तर भी खूब उठ गया है। ढेर सारी बढ़िया सामग्री पढ़ने को मिल जाती है। भारतीय साहित्यकारों के साथ मिलकर सामग्री उपलब्ध कराने से उसमें वैविध्य भी आ गया है और उसका क्षेत्र भी व्यापक हो गया है। यह बहुत सही बात है कि हम जब यहाँ से पत्रिका निकालें तो वह सिर्फ़ यहीं के लेखकों और पाठकों तक सीमित न हो बल्कि भारत व दुनिया के दूसरे हिन्दी प्रेमियों तक भी वे पहुँच सकें। किशन किशोर जी ने भी ऐसी ही पत्रिका निकाली थी, पर वे ज़्यादा देर जीवित नहीं रह पाई। आशा करती हूँ और कामना भी कि 'हिन्दी चेतना' निरंतर यूँ ही प्रकाशित होती रहे।

-सुषम बेदी (अमेरिका)

****

विषय वैविध्य तथा शिल्प वैविध्य

'हिन्दी चेतना' का जनवरी अंक कहानियों का एक गुलदस्ता लेकर आया। विशेष बात यह कि सारी कहानियाँ लेखिकाओं की थीं। यह भविष्य के हिन्दी साहित्य की ओर किसी संकेत की तरह लगा। कहानियाँ सारी पठनीय थीं और विषय वैविध्य तथा शिल्प वैविध्य की झाँकी-सी प्रस्तुत कर रही थीं। मृदुला गर्ग जी की कहानी 'सितम के फ़नकार' सूक्ष्म ऑब्ज़र्वेशन की कहानी है। इस कहानी का पाठ उनके मुँह से सुन चुका हूँ, पढ़ने में और भी आनंद आया। नीना पॉल जी की कहानी 'सिगरेट बुझ गई' बिल्कुल नए अंदाज़ में सामने आती है। पाठक उसमें अपने आपको बहता हुआ पाता है। कंचन सिंह चौहान की कहानी 'मोरा पिया मोसे बोलत नाहि...' प्रेमिल कहानी है जिसमें नैराश्य और टूटन की किरचें, पढ़ते समय मन में महसूस होती हैं। सरस दरबारी की कहानी 'इष्टा बाई' कुछ संस्मरणात्मक लगी। और अंत में जिस कहानी की चर्चा करना चाहता हूँ, वह है अनिल प्रभा कुमार की कहानी 'बहता पानी। अनिल प्रभा कुमार ने बहुत कुशलता से इस कहानी को लिखा है। इस प्रकार से पात्रों को और घटनाओं को रचा है कि मुख्य पात्र का दर्द, उसकी पीड़ा पाठक को अपने अंदर महसूस होती है। छूटे हुए के दर्द को बहुत ही अच्छी तरह से अनिल प्रभा कुमार ने व्यक्त किया है। चूँकि कहानीकार हूँ इसलिए कहानियों पर इतना ही।

-पंकज सुबीर (भारत)

****

लेखकों से अनुरोध

बहुत अधिक लम्बे पत्र तथा लम्बे आलेख न भेजें। अपनी सामग्री यूनिकोड अथवा चाणक्य फॉण्ट में वर्डपेड की टैक्स्ट फाइल अथवा वर्ड की फाइल के द्वारा ही भेजें। पीडीएँफ़ या स्कैन की हुई जेपीजी फ़ाइल में नहीं भेजें। रचना के साथ पूरा नाम व पता, ईमेल आदि लिखा होना ज़रूरी है। आलेख, कहानी के साथ अपना चित्र तथा संक्षिप्त सा परिचय भी भेजें। चित्र की गुणवत्ता अच्छी हो तथा चित्र को अपने नाम से भेजें। पुस्तक समीक्षा के साथ पुस्तक आवरण का चित्र, रचनाकार का चित्र अवश्य भेजें।

-सम्पादक

सूचना

'हिन्दी चेतना' पत्रिका अब कैनेडा के साथ-साथ भारत से भी प्रकाशित हो रही है। पत्रिका के सदस्य बनना चाहते हैं तो संपर्क करें-

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'
मोबाइल : 9313727493
पंकज सुबीर
मोबाइल : 9977855399

Hindi Pracharni Sabha

(Non-Profit Charitable Organization)

Hindi Pracharini Sabha & Hindi Chetna ID No. 84016 0410 RR0001

'For Donation and Life Membership we will provide a Tax Receipt'

Annual Subscription: $25.00 Canada and U.S.A.

Life Membership: $200.00

Donation: $

Method of Payment: Cheque, payable to "Hindi Pracharni Sabha"

सदस्यता शुल्क (भारत में)

वार्षिक : 200 रुपये
दो वर्ष : 400 रुपये
पाँच वर्ष : 1000 रुपये
आजीवन : 3000 रुपये

Contact in Canada:
Hindi Pracharni Sabha
6 Larksmere Court
Markham,
Ontario L3R 3R1
Canada
(905)-475-7165
Fax: (905)-475-8667
e-mail: hindichetna@yahoo.ca

Contact in USA:
Dr. Sudha Om Dhingra
101 Guymon Court
Morrisville,
North Carolina
NC27560
USA
(919)-678-9056
e-mail: ceddlt@yahoo.com

Contact in India:
Pankaj Subeer
P.C. Lab
Samrat Complex Basement
Opp. Bus Stand
Sehore -466001, M.P. India
Phone: 07562-405545
Mobile: 09977855399
e-mail: subeerin@gmail.com

ढींगरा फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय साहित्य सम्मानों की घोषणा

उषा प्रियंवदा, चित्रा मुद्गल एवं पद्मश्री डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी को मोर्रिस्विल, अमेरिका में प्रदान किया जाएगा सम्मान

'ढींगरा फ़ाउण्डेशन-अमेरिका' तथा 'हिन्दी चेतना-कैनेडा' द्वारा प्रारंभ किये गए सम्मानों के नाम चयन के लिए प्रबुद्ध विद्वानों की जो निर्णायक समिति बनाई गई थी, उस समिति के समन्वयक श्री नीरज गोस्वामी द्वारा प्रस्तुत निर्णय के अनुसार समिति ने 2014 में प्रकाशित हिन्दी उपन्यासों और कहानी संग्रहों पर विचार-विमर्श करके जिन साहित्यकारों को सम्मान हेतु चयनित किया है, वे हैं -'ढींगरा फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय साहित्य सम्मान' : (समग्र साहित्यिक अवदान हेतु) उषा प्रियंवदा (अमेरिका), 'ढींगरा फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय कथा सम्मान' : कहानी संग्रह- 'पेंटिंग अकेली है' सामयिक प्रकाशन (चित्रा मुद्गल) भारत, उपन्यास-'हम न मरब' राजकमल प्रकाशन (डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी)।

सम्मान समारोह 30 अगस्त 2015 रविवार को मोर्रिस्विल, नॉर्थ कैरोलाइना, अमेरिका में आयोजित किया जाएगा। पुरस्कार के अंतर्गत तीनों रचनाकारों को 'ढींगरा फ़ाउण्डेशन-अमेरिका' की ओर से शॉल, श्रीफल, सम्मान पत्र, स्मृति चिह्न, प्रत्येक को पाँच सौ डॉलर (लगभग 31 हज़ार रुपये) की सम्मान राशि, अमेरिका आने-जाने का हवाई टिकिट, वीसा शुल्क, एयरपोर्ट टैक्स प्रदान किया जाएगा एवं अमेरिका के कुछ प्रमुख पर्यटन स्थलों का भ्रमण भी करवाया जाएगा।

प्रेमचंद सम्मान तथा डॉ. मोटूरि सत्यनारायण पुरस्कार से सम्मानित प्रतिष्ठित कहानीकार, उपन्यासकार उषा प्रियंवदा प्रवासी हिंदी साहित्यकार हैं। उनकी प्रमुख कृतियों में कहानी संग्रह -फिर वसंत आया, जिन्दग़ी और गुलाब के फूल, एक कोई दूसरा, कितना बड़ा झूठ, शून्य, मेरी प्रिय कहानियाँ, संपूर्ण कहानियाँ, वनवास तथा उपन्यास -पचपन खंभे लाल दीवार, रुकोगी नहीं राधिका, शेष यात्रा, अंतर्वंशी, भया कबीर उदास, नदी आदि हैं। समग्र साहित्यिक अवदान हेतु उन्हें सम्मान प्रदान किया जा रहा है।

व्यास सम्मान, इंदु शर्मा कथा सम्मान, साहित्य भूषण, वीर सिंह देव सम्मान से सम्मानित हिन्दी की महत्त्वपूर्ण कहानीकार चित्रा मुद्गल के अभी तक तीन उपन्यास -एक जमीन अपनी, आवां, गिलिगडु, बारह कहानी संग्रह- भूख, जहर ठहरा हुआ, लाक्षागृह, अपनी वापसी, इस हमाम में, ग्यारह लंबी कहानियाँ, जिनावर, लपटें, जगदंबा बाबू गाँव आ रहे हैं, मामला आगे बढ़ेगा अभी, केंचुल, आदि-अनादि आ चुके हैं। सम्मानित कथा संग्रह 'पेंटिंग अकेली है' उनका नया कहानी संग्रह है जो सामयिक प्रकाशन से प्रकाशित हुआ है।

पद्मश्री, राष्ट्रीय शरद जोशी सम्मान, कथा यूके सम्मान, यश भारती सम्मान, सहित अनेक प्रतिष्ठित पुरस्कार एवं सम्मान से सम्मानित- पद्मश्री डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी भोपाल में हृदय विशेषज्ञ के रूप में कार्यरत हैं। अब तक प्रकाशित कृतियों में कहानी संग्रह - रामबाबू जी का बसंत, मूर्खता में ही होशियारी है, उपन्यास -नरक यात्रा, बारामासी, मरीचिका, हम न मरब, व्यंग्य संग्रह -जो घर फूँके, हिंदी में मनहूस रहने की परंपरा प्रकाशित हो चुके हैं। उन्हें उनके राजकमल प्रकाशन से प्रकाशित उपन्यास 'हम न मरब' के लिये यह सम्मान प्रदान किया जा रहा है।

उल्लेखनीय है कि 2014 से प्रारंभ किये गए ढींगरा फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय साहित्य सम्मान पिछले वर्ष साहित्यकारों सर्वश्री महेश कटारे, सुदर्शन प्रियदर्शिनी तथा हरिशंकर आदेश को कैनेडा के टोरण्टो में प्रदान किये गए थे।

'ढींगरा फ़ाउण्डेशन-अमेरिका' की स्थापना भाषा, शिक्षा, साहित्य और स्वास्थ के लिए प्रतिबद्ध संस्थाओं के साथ मिलकर कार्य करने हेतु की गई है ताकि इनके द्वारा युवा पीढ़ी और बच्चों को प्रोत्साहित कर सही मार्गदर्शन दिया जा सके। देश-विदेश की उत्तम हिन्दी साहित्यिक कृतियों एवं साहित्यकारों के साहित्यिक योगदान को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सम्मानित करना भी इसका उद्देश्य है।

उत्तरी अमेरिका की त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका 'हिन्दी चेतना' को गत 16 वर्षों से हिन्दी प्रचारिणी सभा प्रकाशित कर रही है। हिन्दी प्रचारिणी सभा की स्थापना 1998 में हुई थी। हिन्दी प्रचारिणी सभा गत 17 वर्षों से विदेशों में हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार में एक विशेष भूमिका निभा रही है। ❐

Beacon Signs

1985 Inc.

7040 Torbram Rd.Unit # 4, Mississauga, ONT.L4T3Z4

Specializing In :

Illuminated Signs Awnings & Pylons
Channel & Neon Letters

Banners
Silk Screen

Arthitectural Signs
Vehicle Graphics
Engraving

Design Services

Precision CNC Cutout Letters
(Plastic, Wood, Metal & Logos)

Large Format Full Colour Imaging System
Sales - Service - Rentals

Manjit Dubey

दुबे परिवार की ओर से हिन्दी चेतना को बहुत बहुत शुभकामनायें

Tel:(905) 678-2859 Fax :(905) 678-1271

Email: beaconsigns@bellnet.ca

कहानी

प्रज्ञा दिल्ली विश्वविद्यालय से हिन्दी साहित्य में पीएॅच.डी हैं और 'नुक्कड़ नाटक : रचना और प्रस्तुति', नुक्कड़ नाटक-संग्रह 'जनता के बीच जनता की बात', 'तारा की अलवर यात्रा','आईने के सामने' प्रकाशित पुस्तकें हैं। राष्ट्रीय दैनिक समाचार-पत्रों और विभिन्न पत्रिकाओं में नियमित लेखन और प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में कहानियाँ प्रकाशित। रंगमंच और नाटक की कार्यशालाओं का आयोजन और भागीदारी। सम्प्रति : दिल्ली विश्वविद्यालय के किरोड़ीमल कॉलेज के हिन्दी विभाग में एसोसिएट प्रोफ़ेसर के रूप में कार्यरत।
सम्पर्क : ई-११२, आस्था कुंज, सैक्टर-१८, रोहिणी, दिल्ली-११००८९
ईमेल: pragya3k@gmail.com

इमेज

प्रज्ञा

इतवार की अलसाई-सी सुबह कितनी शांति और सुकून के एहसास से भरी होती है। न कोई भागमभाग न ही कोई पहले से सोची-समझी दिनचर्या। नहीं तो सोमवार से शनिवार तक अगले दिन की चिंता ही खाए जाती है। सारे कामों को सिलसिलेवार करने के चक्कर में रात से ही अगले दिन के घंटे तय कार्यक्रम के मुताबिक भागने लगते हैं। ऑफिस जाने से पहले सैकड़ों काम, दरवाज़े से निकलने से पहले भी मम्मी जी को ज़रूरी हिदायतें देना, काम वाली बाई से जूझना, भागते-भागते ऑफिस पहुँचना और फिर न जाने कितनी बार हंड्रेड मीटर, हर्डल और मैराथन भागते ही रहना। पर आज तो नीता के हाथ में चाय का मग है, अदरक की हल्की तीखी गंध वाली चाय है और वो टेबल पर पैर पर पैर चढ़ाए खुली खिड़की से सर्दी की हल्की ठंडक को जी भर के जी रही है। नीता ने ठान लिया था कि आज ''इत्मीनान से अखबार पढ़ूँगी, कहीं भी कुछ भी खरीदने नहीं जाऊँगी और रसोई में तो रत्ती भर नहीं घुसने वाली। पंद्रह दिन में आधे दिन की मेरी भी छुट्टी बनती ही है।''

यह सब सोचते-सोचते नीता कुर्सी पर अधलेटी से लेटी मुद्रा में आ गई। एक झपकी लेकर बड़ी मुश्किल से अपने को समेट-उठाकर मुँह धोने गई तो आईने ने आज के दिन का पहला काम प्रस्तुत कर दिया। बालों का कटाया जाना अब और मुल्तवी नहीं किया जा सकता था। बाल बड़े बेतरतीब हो रहे थे। उँगलियों से उन्हें सँवारकर बिठाने की कोशिश भी की पर सब व्यर्थ। जगह-जगह से छोटी-बड़ी पुँछड़ियाँ-सी निकल रही थीं। और बाल कटाने के काम ने उसका सारा सुकून एकबारगी छीन लिया।

''अब पहले रूपल दी को फ़ोन करो, टाइम लो फिर टाइम पर पहुँचकर भी अपनी बारी का इंतज़ार करो यानी पंद्रह मिनट के काम के लिए एक डेढ़ घंटे की बर्बादी।'' सारी बातें सोचते ही आलस से लेकर इत्मीनान और हवा की ठंडक से लेकर चाय का स्वाद सब काफूर होने लगे। बचपन में याद कराई कहावत सामने थी ''मैन प्रोपोसिज़ बट गॉड डिस्पोसिज़''।

''ये भगवान से मेरा एक दिन का चैन भी देखा नहीं जा सकता।'' छुट्टी का सारा नशा उतरने लगा

और कामों की लिस्ट बनाने में लगा दिमाग दर्द करने लगा। वही ढाक के तीन पात। घर भर उठकर अपने कामों में लग गया और नीता जल्दी-जल्दी पोहा बना रही थी।

ठीक समय से पार्लर पहुँच गई पर रूपल दी के केबिन के बाहर लाइन लगी थी। केबिन के शीशे से झाँकते हुए पहले अपनी हरदिल अजीज़ मुस्कान बिखेरी फिर कसकर होंठों को चोंच सा बनाया, नाक ज़रा ऊपर की ओर सिकुड़ गई; जिससे आँखें सिमट गईं इस मुद्रा को देखने की आदत हो गई है नीता को। जानती हूँ इसके बाद चेहरे की उसी याचक-सी आकृति से सिर को टेढ़ा करके तीन बार हिलाते हुए मुझसे सांकेतिक भाषा में कहेंगी ''प्लीज़ थोड़ा इंतज़ार कर लो। बस अभी आ जाऊँगी नीता जी।'' और नीता भी तमाम झुँझलाहट और परेशानी समेटकर एक अच्छी-सी हँसी से जवाब देती आयी है ''कोई बात नहीं।'' अब करें भी तो क्या नाई, दर्ज़ी, डॉक्टर क्या रोज़-रोज़ बदले जाते हैं। और फिर रूपल दी एक अनार सौ बीमार। मालकिन होते हुए भी कर्मचारी ही लगती हैं। नई-पुरानी तीन-चार लड़कियाँ भी हैं उनके यहाँ पर छुट्टी के दिन तो कितने ही लोग हों काम ही काम है। ऊपर से कटिंग का कोई एक्सपर्ट नहीं उनके सिवाय। बीच-बीच में नई लड़कियों की ट्रेनिंग, पुरानी लड़कियों को सिलसिलेवार ढंग से काम बताना ताकि किसी को लंबा इंतज़ार न करना पड़े। उनके चाय-पानी का इंतजाम, कैश कांउटर सँभालना, संगीत-टीवी की व्यवस्था देखना, बीच-बीच में प्रोडक्ट्स बेचने वालों से डील करना, क्लांइट को चेहरा-मोहरा ठीक रखने के उपाय बताना, कितने काम थे उन्हें। फिर नए क्लाइंट को इस तरह काबू में करना कि नीता दी के अलावा उसे कोई और नाम सूझे ही नहीं अगली बार। एक हाथ में कैंची थामे और एक हाथ से निर्देश देते हुए वो देवी की प्रतिमा-सी लगतीं जिसके कई-कई हाथ हैं।

''तो बताओ नीता जी कैसी कटिंग करूँ इस बार?''

''दी वही अपना तो ओल्ड इज़ गोल्ड।''

''नहीं, इस बार चेंज करो थोड़ा। इतने सालों से एक जैसा ही। न... न इस बार मैं नहीं सुनूँगी आपकी। ट्राई करो और यकीन करो सूट करेगा।''

''यकीन ही तो है दी। बस ज़्यादा चेंज नहीं

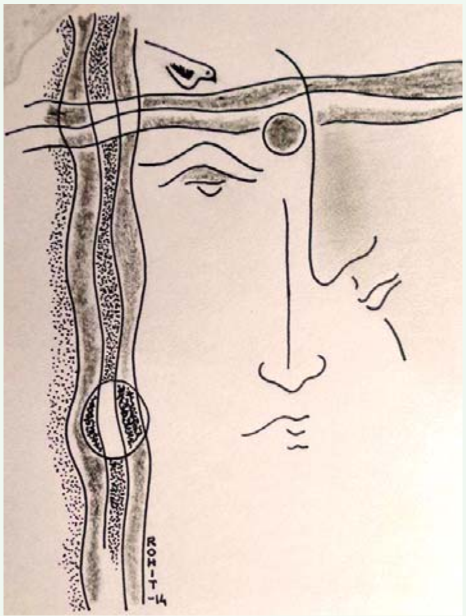

प्लीज़।''

अपना काम करते-करते रूपल दी बच्चों के बारे में पूछना नहीं भूलतीं और न ही अपने इकलौते बेटे के बारे में बताना। ''देखो नीता जी मैंने तो भेज दिया है हॉस्टल। अब वहाँ पढ़ता है या क्या करता है राम जाने। पढ़ाई का तो बचपन से ही चोर है तो वहाँ क्या झंडे गाड़ेगा जानती हूँ। अच्छा है थोड़ी शांति है।''

''अकेला नहीं लगता आपको?''

''टाइम किसके पास है यहाँ। ये सारा दिन ड्यूटी पर और मैं पार्लर में। फिर एक नया काम शुरू कर दिया है?''

''नया पार्लर खोला है क्या?''

''पार्लर के काम से तो अब ऊब-सी होने लगी है। ग़रीब, बेसहारा लड़कियों को सिलाई-कढ़ाई सिखाने के बारे में सोच रही हूँ। आपका क्या विचार है?''

''नेकी और पूछ-पूछ। ''

''पर नीता जी आपकी मदद भी चाहिए मुझे। सिर्फ़ हौसला बढ़ाने से काम नहीं होगा।''

''ऐनी टाइम दी''

''ठीक है फ़ोन करुँगी आपको। और लो देखो नया कट।''

''वाउ दी संडे वसूल कट'' रूपल दी को थैंक्स करके जब घर लौट रही थी तो नीता को कई साल पुरानी उनकी कही बातें याद आने लगीं। रूपल दी को बचपन से ही कटिंग का चस्का लग गया था। चोरी-छिपे अपने बाल काटा करती थीं। खुद उन्होंने बताया था कि कैसे बचपन में एक दिन परांदे में बाल गूंथे थे। जब सहेलियों का खेल खत्म हुआ और परांदा खोलने की कोशिश की तो बाल उलझ गए। इस कदर उलझ गए कि मम्मी के डर से उन्होंने कैंची से काट लिये। बस उसके बाद तो कैंची छूटी ही नहीं। सभी उन्हें पगली कहते बस पापा ही सारे एक्सपेरीमेंट्स कराने को हाज़िर थे। धीरे-धीरे हाथ सध गया और फिर लगे हाथ कटिंग और ब्यूटिशियन का छोटा-सा एक कोर्स भी कर डाला। शादी के बाद सबके खिलाफ़ जाकर जब दी ने काम शुरू किया था, तब इस इलाके में बहुत कम महिलाएँ ये काम कर रही थीं और ढंग का काम करने के कारण रूपल दी की धाक भी जम गई थी। किराए की जगह से लेकर अपनी स्थायी जगह बनाने और अकेले से लेकर लड़कियों को मदद के लिए तनख़्वाह पर रखना कैसे ईंट-ईंट करके अपने सपने को साकार किया था रूपल दी ने। एक बार ठान लिया तो बस पूरा करके ही माना। गज़ब की इच्छा शक्ति और ज़बरदस्त महत्त्वाकांक्षा। ससुराल वालों ने तो उनकी छेड़ 'नाई' ही रख दी थी, जो आज भी यथावत् कायम है पर दी को क्या। उन्हें तो अपना मनचाहा काम करना था, किसी भी कीमत पर।

पर आज की उनकी बातों से नीता ये समझ नहीं पा रही थी कि जिस काम को दी दीवानों की तरह चाहती हैं, उसे छोड़कर एकदम नए तरह का काम वो कैसे कर पाएँगीं? और फिर पार्लर कौन चलाएगा? नए काम में सिरदर्दी और नए तरह की भागदौड़ होगी और अब उसके बाल कौन काटेगा? दी की बड़ी चिंता से भी ज़्यादा बड़ी चिंता नीता को खुद की हो गई।

रोज़ की भागदौड़ में नीता रूपल की बात भूल ही जाती कि एक दिन रूपल का फ़ोन आ गया।

''नीता जी भूल गए न आप?''

''नहीं दी। बताओ।''

''अरे आप इस विधायक से मिलवा दो न। आपके हस्बैंड को तो जानते हैं वो। बस एक बार मेरी मुलाकात हो जाए...।''

''उससे क्या काम आ गया दी? ''नीता रूपल के जवाब का इंतज़ार करती रही पर जवाबी प्रतिक्रिया में जब एक चुप्पी मिली तो समझ गई कि बात गंभीर है और रूपल दी अभी कुछ और शेयर करने के मूड में भी नहीं हैं। समझदार को

इशारा काफी था।

''ठीक है दी...इनसे पूछकर बताती हूँ, आपको।''

''ज़रा जल्दी। हाँ..ठीक है फिर बात करती हूँ आपसे।''

हाँ तो नीता ने कर दी थी पर अनुराग का डर भी कम नहीं था। उसे पता था बात छेड़ते ही कहेंगे--''पता नहीं क्या पड़ी रहती है तुम्हें दूसरों की। अरे काम है, तो खुद मिल लो। हमें क्या कोई मिलवाने गया था। खामखाँ का एहसान लो। मिलना-मिलाना कुछ नहीं। ऐसे ही सबको ले जाते रहो फ्री-फंड में, तो कल को हमारे जेनुइन काम कौन कराएगा? और ये विधायक क्या चैरिटी में सब करते हैं, सब अपना फायदा देखते हैं। और तुम्हें पड़ी है धर्मात्मा बनने की। अरे कह देतीं हम नहीं जानते या कोई बहाना लगा देतीं। जब देखो फँसा देती हो मुझे यों ही।''

और वाकई यही हुआ, ठीक इन्हीं शब्दों के साथ बल्कि इससे कुछ ज़्यादा और कुछ तीखे ही। अनुराग को पता था नीता की गरज है, तो अपने दिल में छिपे गुस्से की परतों का अगला-पिछला सारा हिसाब क्लीयर कर लिया। नीता बखूबी वाकिफ़ है अनुराग की इस आदत से पर इतना भी जानती है कि सबके बाद करेंगे वही जो नीता चाहती है। नीता सही थी। अनुराग ने जल्द ही रूपल दी का काम बनवा दिया। बाद में अनुराग ने ही बताया कि रूपल दी एक एन.जी.ओ. टाइप संस्था शुरू करने जा रही हैं; जिसके लिए फंड की ज़रूरत है। इन विधायकों के पास ऐसे कई फंड होते ही हैं और फिर ये स्वपोषित संस्था ग़रीब लड़कियों की शिक्षा और रोज़गार के सामाजिक उद्देश्य से जुड़ी थी, तो फंडिंग में कोई बहुत बड़ी अड़चन यूँ भी नहीं आनी थी। तीसरी और सबसे ज़रूरी बात थी चुनाव नज़दीक थे और विधायक को भी अपनी पार्टी के प्रचार के लिए रूपल दी जैसे 'स्मार्ट' लोगों की ज़रूरत थी। हालाँकि ये तीसरी बात नीता को ज़रा भी नहीं भाई। इस 'स्मार्ट' शब्द के पीछे किसी भी औरत का मज़ाक उड़ाने से लेकर मज़ा लेने तक के सारे दरवाज़े तंग सोच लोग अपने आप खोल लेते हैं। अनुराग को आँखें तरेरकर देखते हुए उसे बस यही संतुष्टि थी कि रूपल दी का काम बन गया। इस बात को काफी दिन बीत गए। नीता ने कई दिन रूपल दी के शुक्रिया का इंतज़ार किया पर कोई फ़ोन नहीं आया। फिर बात कई महीनों के लिए आई-गई हो गई। इधर नीता ने लंबे बाल रखने का मन बना लिया था तो पार्लर जाना भी नहीं हो सका।

''अरे अनुराग ! देखो यार रूपल दी की तस्वीर छपी है अखबार में।'' अचानक एक दिन सुबह की जल्दबाज़ नज़र जब अखबार पलट रही थी, तो नीता चिल्लाई। देश में बढ़ती मँहगाई के विरोध में हुए व्यापक धरने में अग्रिम पंक्ति में रूपल दी अलग ही दिखाई दे रही थीं। पहली नज़र में तो नीता तस्वीर देखकर बड़ी खुश हुई पर कुछ क्षण बाद ही उसे लगा कि ''ये किस काम में लग गई रूपल दी? एक तो अपना जमा-जमाया काम अनदेखा कर रही हैं और फिर जिस नए काम का बीड़ा उठाया उसकी तो कोई प्रोग्रेस दिखाई नहीं दे रही। आख़िर ये क्या चक्कर है?'' उस दिन कई बार नीता का मन किया भी कि रूपल दी को फ़ोन करके कहूँ--''दी आपकी तस्वीर देखी आज।'' पर बार-बार मन ने कहा 'चल छोड़ न नीता'। उसी दिन शाम को घर लौटते समय शालिनी मिल गई। वही शालिनी जो दस-बारह साल से रूपल दी के पार्लर में काम कर रही है। उसे आज के अखबार की बात बताते ही सारी तस्वीर साफ़ होने लगी।

''भाभी आंटी तो पार्लर में बैठती ही नहीं कई महीनों से। और रोज़ ही कभी किसी धरने या रैली में जा रही होती हैं। और आपने शायद उनका पहला फोटो देखा है। पार्लर में तो आजकल कई अखबार मँगवाती हैं आंटी रोज़ ही, किसी न किसी में उनकी

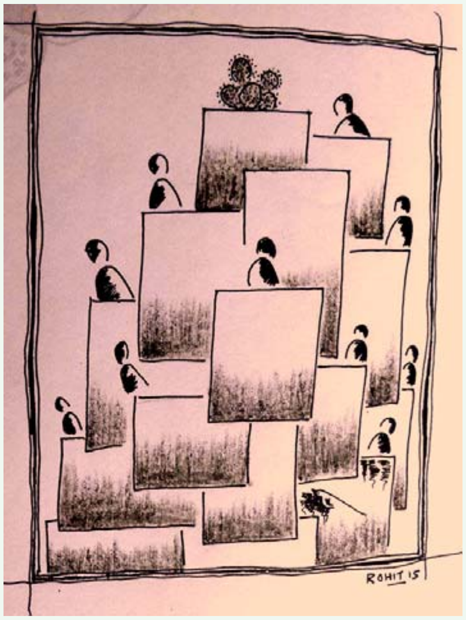

फोटो लगती ही रहती है। मैं उन्हें काट-काटकर सँभालती रहती हूँ। रात को आती हैं बस पैसों के हिसाब के लिए। पार्लर में मुझे ही रुकना पड़ता है भाभी, देर तक।''

''और उनकी संस्था का क्या हुआ?''

''पार्लर के साथ वाला फ्लैट किराए पर लिया है। दो कमरों में एक जिम खोल लिया है और तीसरे में 'शक्ति' का बोर्ड लगा है। कुछ लड़कियाँ आती हैं। एक लड़की रखी है, जो उन्हें अक्षर ज्ञान सिखाती है। कभी-कभी सिलाई वगैरह।''

''और उन लड़कियों के लिए रोज़गार?''

''पार्लर का काम ही तो रोज़गार है उनका। रोज़गार के नाम पर मुफ्त सेवा। किसी तरह एक घंटा गुज़रता है पढ़ाई का, बस फिर हम किसी को थ्रेडिंग सिखाते हैं, किसी को वेक्सिंग कोई साफ-सफाई देखती है तो कोई ऊपर के काम। वो भी खुश हम भी खुश। वैसे भी उनका पढ़ने-वढ़ने में कोई मन नहीं। स्लम की ये लड़कियाँ तो यही सोचकर खुश हैं कि कुछ और नहीं तो शादी के लिए और शादी के बाद मेकअप करके पति और ससुराल पर रौब जमा सकेंगी।''

शालिनी ने अपना मुँह कुछ और खोला तो नीता का मुँह खुला का खुला रह गया--''पर भाभी, आंटी बदल गईं हैं पूरी तरह।''

बातों की गहराई में जाकर नीता ने जाना कि रूपल दी के पार्लर की सब पुरानी जमी-जमाई लड़कियाँ शादी-ब्याह के बाद पार्लर छोड़कर इधर-उधर चली गईं एक आध विश्वसनीय लड़कियाँ रह गईं हैं अब शालिनी जैसी। आस-पास मँहगे पार्लर्स की बढ़ती ख्याति, काम का तनाव, पार्लर ठप्प होने की आशंका, उससे जुड़ी आर्थिक अनिश्चितता और फिर खुद को नई महत्त्वाकांक्षा के अनुरूप गढ़ने की लगन--इन सबने किसी और ही दिशा में सरका दिया रूपल दी के सपनों को। स्थानीय नेताओं की सरपरस्ती यूँ ही नहीं स्वीकारी उन्होंने। एक सामाजिक रूसूख कायम किया और सत्ता को इर्द-गिर्द रखकर एक सुरक्षा कवच भी तैयार किया। फिर इस नई संस्था में शामिल स्लम एरिया की ये लड़कियाँ जिस उद्देश्य से यहाँ जोड़ी गईं, वो बोर्ड के 'शक्ति' शब्द तक सीमित रहीं और उसके बाद उनका अपने सिरे से इस्तेमाल। देना-दिलाना कुछ था नहीं उन्हें। नीता को अचानक लगा कि रूपल दी ने जिस इंसानियत की दुहाई देकर मदद माँगी

थी वो तो जैसे काफी दिनों की तगड़ी प्लैनिंग का कोई पत्ता था। कई सवाल घुमड़ रहे थे नीता के दिमाग में। पर अचानक एक सवाल उठा ''शालिनी पार्लर में अब हेयर कट कौन करता है? उसकी एक्सपर्ट तो रूपल दी ही हैं। बरसों से ये काम तो न उन्होंने किसी लड़की को सिखाया न किसी और को दिया है? और हेयर कट तो वैसे भी किसी भी पार्लर की ऑक्सीजन होता है।''

''इसका इंतज़ाम भी किया जा चुका है भाभी। पहली बार रूपल दी के पार्लर में एक लड़का रखा गया है इसके लिए। आंटी के पास टाइम ही कहाँ है। पता नहीं किस-किस समिति-फमिति से जुड़ गई हैं। पर भाभी सिर्फ़ आपको बता रही हूँ, अगर उन्हीं से कट कराना हो, तो दो दिन पहले फ़ोन पर रिक्वेस्ट कर लो। आंटी रात को टाइम निकाल लेती हैं कई बार पर बड़ी मुश्किल से। पर भाभी प्लीज़ ये मत कहना मैंने बताया आपको वरना डाँट खानी पड़ेगी मुझे। आंटी बड़ा भरोसा करती हैं न मुझ पर... दिल टूट जाएगा उनका। अच्छा भाभी चलूँ अभी हिसाब लिखना है आज का।''

शालिनी को बेफ़िक्र रहने को कहकर नीता अपने रास्ते चली तो आई पर दिमाग उन्हीं बातों में उलझा रहा। मन खिन्न था बुरी तरह। एक बार तो जी में आया अब कभी रूपल दी से न मिलूँ पर कुछ देर बाद ये बात भी सिर उठाने लगी शायद शालिनी ने उनके काम को सही तरह न समझा हो और अपनी लो इंटलैक्ट में मुझे बहका दिया हो। इसी उधेड़ बुन में उसे शालिनी की सलाह याद आई। उसने खट से रूपल दी को फ़ोन लगाया पर उम्मीद के अनुरूप फ़ोन फट्ट से रिसीव नहीं किया गया। दो-तीन बार के प्रयास के बाद किसी भीड़ की आवाज़ को चीरती रूपल दी की आवाज़ को नीता अपने बढ़े हुए बालों का रोना ही पहुँचा पाई और उसी भीड़ से आती उनकी आवाज़-''परसों आठ बजे'' ये तीन शब्द ही नीता तक पहुँचा पाई। अभी दो दिन शेष थे वैसे भी कल का सारा दिन तो रात के खाने की मेहमाननवाज़ी में जाने वाला था नीता का। सो उसने अपना ध्यान रूपल दी की ओर से हटाया और अपने पड़ोसी मित्र मिसेज आशा देशपांडे दंपती पर लगाया। उनकी पसंद के हिसाब से मेन्यू तय करते हुए नीता सोचने लगी--हम से अच्छी तो घरेलू औरतों की ही ज़िन्दगी है, यहाँ तो दोहरे काम के बोझ तले दबे रहो। ऑफिस भी

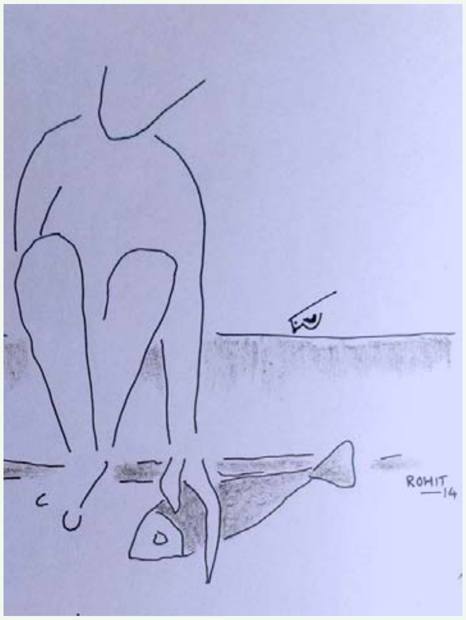

सँभालो और होममेकर की भूमिका भी निभाओ। सारी ज़िन्दगी इसे ही बेलेंस करने में निकली जा रही है। बस मम्मी जी की सहारा है, नहीं तो बच्चे कौन सँभालता?

अगली रात अनुराग और आशा के पति तो खाने से पहले पीने में मसरूफ हो गए। बच्चे आपस में और हम दोनों लेडीज़ अपनी बातों में। पेशे से डायटीश्यिन आशा ने खाने का मुआयना किया और खुश हो गई। धीरे-धीरे बातों के दौरान उसने मुझसे समय निकालकर एक नई संस्था से जुड़ने का सुझाव रखा, जिसके साथ वो हाल ही में जुड़ी है। संस्था का नाम सुनकर चौंकने की बारी मेरी थी। वो संस्था कोई और नहीं 'शक्ति' ही थी, पर मेरे सामने फिर एक नए रूप में प्रेज़ेंट हो रही थी।

''देखो नीता, इस संस्था में हमें ज़्यादा कुछ नहीं करना है। बस हफ़्ते में अपना थोड़ा समय देना है और मासिक दो हज़ार रूपये। ग़रीब, बेसहारा लड़कियों की मदद के लिए स्कीम्स बनानी हैं। इस संस्था में हम जैसी कुछ अच्छे पद वाली और ढंग का सोचने वाली औरतों की ज़रूरत है। सभी को नहीं बुलाया जाता। हाँ ये ध्यान रखा जा रहा है कि एरिया की हर सोसायटी से ऐसी इन्फ़्लूऐन्शियल महिलाएँ इससे जुड़ जाएँ।''

आशा की बातों से नीता ने जान लिया कि 'शक्ति' खास तबके की महिलाओं को जोड़ने के प्रयास में है। पर ये दो हज़ार वाली बात उसकी समझ में नहीं आई तब आशा ने खुलासा करते हुए यही समझाया हमें तो दान करना है। और इस दान की भरपाई भी हो जानी है। रूपल ने कहा है दो हज़ार देने वाली महिलाओं का मंथली ब्लीच, फेश्यिल, कटिंग, थ्रेडिंग सभी। ''सोच लो नीता बुरा सौदा नहीं है। दान का दान, समाज सेवा और पार्लर का खर्चा मुफ्त।'' आशा के परिवार के विदा होने के समय नीता ने उससे सोचने का समय लिया। उस रात नीता ने पहली बार संघर्षशील रूपल और व्यावसायिक बुद्धि वाली रूपल को एक साथ सामने रखकर तौलने की कोशिश की। बार-बार जिस सवाल से नीता जूझ रही थी शायद उसका कोई सिरा हाथ लग ही जाए।

''आखिर क्या पड़ी है रूपल दी को ये सब चक्करबाज़ी करने की? कर तो रहीं थीं अपना काम तसल्ली से। इतने साल का जमा-जमाया काम था ही। क्या चल नहीं रहा था पार्लर?'' खुद से सवाल करने के क्रम में आख़िरी सवाल पर नीता ठिठककर ठहर गई... शायद यही है वो सिरा, पार्लर चल नहीं रहा था शायद उतनी अच्छी तरह। अकेली रूपल दी और समस्याओं का बढ़ता हुआ जंगल, दुनिया भर के दंद-फंद। ऐसे में भी दी किसी भी तरह अपनी इमेज को खत्म नहीं करना चाहती थीं। शुरू से ही देखा है नीता ने हरदम पार्लर की बेहतरी के लिए उन्हें नया सोचते-करते हुए। और अब ये नई संस्था सच में बेसहारे का सहारा ही बनने जा रही थी। दरअसल रूपल ब्यूटी पार्लर के कमज़ोर कदमों को ही शक्ति चाहिए। बाज़ार के दबाव के चलते उससे बचाव के लिए पैदा किया एक और बाज़ार थी यह संस्था-- 'शक्ति'। दो हज़ार रुपये का नियमित भुगतान 'शक्ति' के लिए नहीं पार्लर की संजीवनी थी। अब समझ आने लगी आशा की बात-'हमें तो बस ऐसी महिलाओं की चेन क्रिएट करनी है।'

आज नीता को रूपल दी से मिलने में वैसी सहजता महसूस नहीं हो रही थी जैसे कि बरसों से होती आई थी। एक ज़रूरी बात ये भी थी कि अब तक महीने में एक बार काम के लिए मिल लेने के बाद क्या दखल रह जाता था दोनों का एक-दूसरे की ज़िन्दगी में, पर संस्था से जुड़ने पर पता नहीं मुझसे उनकी क्या उम्मीदें होंगी और क्या मैं पूरा कर पाऊँगी? ऐसे सवालों ने नीता की मुद्रा को असहज बना दिया था। पार्लर पहुँची तो काम खत्म-सा हो रहा था। एक हाई-फाई लड़का हेयर ब्रश

लेकर एक लड़की को बालों की केयर के टिप्स दे रहा था। यह वही था जिसके बारे में शालिनी ने पहले ही बता दिया था। शालिनी अस्त-व्यस्त पार्लर में पूरे दिन का हिसाब लिख रही थी। अंदर के कमरे में एक कमज़ोर-सी लड़की बिखरे सामान को व्यवस्थित कर रही थी, जिससे कल काम ठीक तरीके से शुरू किया जा सके। नीता ने अंदाज़ा लगाया कि ये लड़की ज़रूर 'शक्ति' से जुड़ी हुई स्लम की लड़की है। साढ़े आठ के आस-पास रूपल दी गुलाबी साड़ी और मैचिंग मेकअप में लिपटी, हैंडबैग लटकाए दाखिल हुईं उन्हें देखकर लग ही नहीं रहा था कि वो नीता के काम से पार्लर में आई हों। थके हुए चेहरे पर चिरपरिचित मुस्कान के साथ उन्होंने नीता का स्वागत किया।

"लाना शालिनी मेरी कैंची, अब तो वो भी मुझे भूलने-सी लगी है नीता जी।"

इसी बीच उस नए लड़के से और शालिनी से ज़रूरी बात करके अंदर काम कर रही लड़की को देखने गईं और थोड़ी देर बाद बंद दरवाज़े से उनके डाँटने की आवाज़ें आने लगीं।

"चोर कहीं की...इन लोगों को कितना ही अच्छा बनाने की कोशिश करो, रहेंगे तो झुग्गी वाले ही।"

दाँत पीसते हुए उनके शब्द दरवाज़े से बाहर निकलते हुए नीता को साफ सुनाई दे गए। नीता भीतर तक हिल गई। तो ये है रूपल दी का व्यवहार अपनी संस्था की लड़कियों से? इस तरह के पूर्वग्रहों से चलाएँगी 'शक्ति' को?

लड़की को धमकाते हुए जब वो नीता की सेवा में हाज़िर हुईं तो झटपट पल्ले को कमर में खौंसकर अपना सूती कोट पहनकर सामान्य सेविका बन गईं नीता को अब वह पहले जैसी रूपल दी ही लगने लगीं। कटिंग के दौरान बातों ही बातों में अपनी संस्था और उससे जुड़ी व्यस्तताओं के बारे में बताती रहीं।

"देश में गरीब लड़कियों की हालत बड़ी खराब है नीता जी। हम नहीं सोचेगें तो कोई नहीं सोचने वाला इनके बारे में। इसीलिए मैं इस काम से जुड़ी। समाज सेवा को मैंने अपना लिया है। पर अकेले नहीं हो सकता ये सब। आप भी मदद करो न।" नीता का उखड़े मन से 'हाँ-हूँ' करती रही। वह रूपल के व्यवहार के दोनों पक्षों का मुआयना भी करती जा रही थी।

इसके बाद दो हज़ार वाली स्कीम की पेशकश नीता के आगे भी रखी गई और वही बातें दोहराई जाने लगीं, जिनका ज़िक्र आशा कर ही चुकी थी। केवल वही नहीं रूपल ने नीता को एक रजिस्टर भी दिखाया जिसमें ग़रीब बेसहारा लड़कियों की लिस्ट और रोज़गार के कुछ उपाय से लिखे हुए थे। कहीं मसाला पीसने की मशीन दिलाने के वादा, कहीं सिलाई मशीन तो कहीं घर में काम दिलाने का। कहीं भी ज़िक्र नहीं था कि वे इस समय पार्लर का काम भी सीख रही हैं या मदद कर रही हैं। उन्हें विधायक की पार्टी के लिए रोज़ ही किसी समिति, बैठक, रैली में जाना पड़ता था, इसके बारे में रूपल दी ने नीता से कहा-"अगले ने मदद की है तो बदले में हमें भी तो मदद करनी पड़ेगी।"

कटिंग के बाद चाय मँगवाकर रूपल दी एकालाप करती रहीं। उनकी बातों का कुल जमा यही सार था कि उनके पास आज कई महिलाएँ जुड़ गईं हैं। सबके दिए गए सुझाव अब रूपल दी के सुझाव हो गए हैं--जीवन का लक्ष्य गरीबों की सेवा है, इसलिए डिस्टेंस एजूकेशन से रूरल डेवलेप्मेंट का डिप्लोमा कोर्स भी कर रही हैं, ऐसा उन्होंने ही बताया। इन बेसहारा लड़कियों को इकट्ठा करके हर सोसायटी में रोज़मर्रा के समान बिकवाने से लेकर तीज-त्योहार पर ब्यूटी प्रोडक्ट्स बिकवाने से लेकर मेंहदी लगवाना और फिर घर-घर में पार्लर की सेवा देना, महीने में एक बार शक्ति से जुड़ी महिलाओं की किट्टी पार्टी, पिकनिक का प्रोग्राम रखना ताकि मिलने-जुलने के अवसर हों। विधायक

जी की पत्नी भी शामिल हैं इसमें। एरिया की महिलाओं के लिए रेस, खेल आदि प्रतियोगिताएँ और जीत पर पुरस्कार की योजना। और न जाने क्या-क्या ताकि हर सोसाइटी शक्ति से अछूती न रहे और एक चेन क्रिएट हो बस ...पॉवरफुल चेन। नीता को ये सभी आइडियाज़ बड़े बेतरतीब से इसलिए लग रहे थे कि इन्हें व्यवहार में लाए जाने की कोई ठोस योजना नहीं थी रूपल के पास। ठोस योजनाओं के क्रियान्वयन का टाइम न रूपल के पास था न चेन बनाने वाली महिलाओं के पास। नीता को लगा समय के साथ भागते-भागते ये काम भी छू भर लिया जाए, ऐसे ही प्रयोग जारी थे शक्ति के साथ। आजकल कायदे और गुणवत्ता का जमाना नहीं है न। चलो बाकी महिलाएँ तो अपने-अपने कामों से जुड़ी हैं, उनके लिए तो ये पार्ट टाइम अफेयर है पर रूपल दी? उनके लिए तो जीवन-मरण की बात है। ये ताश का महल एक झटके में ढह जाएगा। सब कुछ बिखर जाएगा। इतने में रूपल दी बोलीं-

"तो आपके दो हज़ार?"

इस सवाल के लिए तैयार होकर आई नीता फिर भी हड़बड़ा गई-"वो दी....... अभी सोचकर।"

"सोचना ज़रूर और जुड़ जाओ न हमसे।" कहकर रूपल ने अच्छे से बाय कहा। घर लौटते समय शालिनी भी साथ हो ली।

"अच्छा किया भाभी जो आपने हामी नहीं भरी। मैं तो आपको इशारा करने ही वाली थी। आंटी के पास बहुत सारे लोगों ने रुपया जमा करा दिया है। वो वाला रजिस्टर नहीं दिखाया आपको। सबका रुपया तो ले लिया, अब उनके काम करने का समय कहाँ है? पता है पार्लर में आने वाली एक आंटी कह रही थीं कि रूपल आंटी कौंसलर का टिकिट चाहती हैं। चुनाव लड़ना चाहती हैं। महिला सीट के लिए ही सारी भाग-दौड़ कर रही है। तभी तो भागी फिरती हैं उस विधायक के पीछे।"

शालिनी के लो इंटलैक्ट को भाँपकर नीता हँस दी-"चल पागल कहीं की।"

"कसम से भाभी देख लेना आप। तभी तो सबको जोड़ रही हैं। औरतों की मीटिंग लेती रहती है। किट्टी वगैरह। इतनी भाग-दौड़ कर रही हैं। अखबार में फोटो निकलवा रही हैं। संस्था में औरतों-लड़कियों को जोड़कर ले जाती नहीं है रैली-वैली

में और रुपया भी तो आ रहा है चंदे के नाम से।''

नीता शालिनी के तर्कों को हवा में उड़ा तो नहीं सकी। अब तक उसे रूपल की हर योजना अनिश्चितता भरे दौर में पार्लर को चमकाने और व्यवसाय बचाने वाली ही लग रही थी पर अगर शालिनी की बात सही है तो फिर ये है वो सिरा जिस तक नीता पहुँच नहीं पा रही थी। और तभी 'शक्ति' का इतना प्रचार होते हुए भी 'शक्ति' क्यों दीन-हीन, उपेक्षित है अब समझ आने लगा। उसे रूपल दी के पुराने काम से ऊब और नई महत्त्वाकांक्षाओं के जन्म का समीकरण भी हल होता दिख रहा था। मन को समझाते हुए और बात बदलते हुए उसने कहा--''तो शालिनी तू कब अपना पार्लर शुरू कर रही है?''

''कहना नहीं भाभी किसी से। सामान तो कब से जोड़ रही हूँ। बस एक फेशियल चेयर या सस्ते दाम में मिल गया तो सेकेंड हैंड फेशियल बैड खरीदना है। सुबह कमरे को पार्लर बना लूँगी और रात को घर।' आपको तो पता ही है एक कमरा सास-ससुर का है और एक मेरा।''

''तो देर किस बात की है शालिनी? तू अभी हिचक रही है न पार्लर से निकलने में? रूपल दी बहुत बिज़ी हैं न और सारा काम तुझ पर है। यही मुश्किल है न तेरी?'' तमाम सच जानने के बावजूद नीता की चिंता अब भी रूपल के काम से जुड़ी थी।

''क्या मुश्किल भाभी। पार्लर तो तब शुरू करूँगी जब कोर्स खत्म करने का सर्टीफिकेट देगी आंटी मुझे। रोज़ कहती हूँ पर टाल देती है। एक मैं ही बची हूँ उसकी भरोसेमंद। वो अपना समय ले रही है और मैं समय काट रही हूँ भाभी यही मुश्किल है। कोई समझदार लड़की अब नहीं आने वाली इनके झाँसे में। और क्या इन नई लड़कियों के भरोसे चला सकती हैं पार्लर? ये करेंगी तीन साल का कोर्स मेरी तरह? वो तो शुरू के साल मैंने कोर्स पर ध्यान नहीं दिया, नहीं तो मैं भी कब की निकल जाती औरों की तरह। अच्छे घरों की लड़कियाँ तो वैसे ही गली-मुहल्ले के पार्लरों में काम सीखती नहीं और ये गरीब लड़कियाँ टिकेंगी इतने साल? ज़्यादातर तो दिल्ली की है ही नहीं। फिर ये स्लम भी तो चुनाव तक यहाँ है फिर उजड़ेगा या रहेगा कौन जानता है? स्लम उजड़ा तो आंटी का नया कुनबा भी उजड़ जाएगा। न रहेगा पार्लर न कोई संस्था-फंस्था। और अब तो अकेले भी नहीं चला पाएँगी आंटी। गुस्सा तो बड़ा आता है भाभी मुझे आंटी पर..... लेकिन क्या करूँ अपने हाथों से काम सिखाया है न आंटी ने बस इसीसे उसके बुरे वक्त में धोखा नहीं देना चाहती।''

एक के बाद एक न जाने कितने रूप बयाँ हो रहे थे रूपल दी के आज। कैसी वितृष्णा-सी हो रही थी नीता को आज उनसे।

चुनाव की सरगर्मियाँ अपना रंग पकड़ रही थीं। उम्मीदवारों के नाम अभी तय नहीं हुए थे पर पोस्टरबाज़ी के लिए मोहल्ले की दीवारें कम पड़ने लगीं थीं। अचानक एक दिन सत्तारूढ़ पार्टी के विरोध में आयोजित धरने-प्रदर्शन के दौरान विधायक की तस्वीर वाले पोस्टर में कोने में रूपल दी हाथ जोड़े खड़ी दिखाई दीं। नीता को शालिनी के शब्द और उसके 'लो इंटलैक्ट' की अपनी बेवकूफ़ाना दलील याद आने लगी। अब तस्वीर एकदम साफ थी। दिन पर दिन रूपल दी पोस्टरों की शोभा बढ़ा रही थीं और पार्लर के कई क्लाइंट छिटककर दूर हो रहे थे। शालिनी किस-किस को सँभालती। मैन पावर कम, बदइंतज़ामी और ऊपर से रूपल दी की पार्लर के प्रति उदासीनता की हद तक घोर उपेक्षा। पार्लर की मनमाफिक सेवाएँ न मिलने से एडवांस मनी देकर 'शक्ति' से जुड़ी महिलाएँ भी रूपल से खासी नाराज़ थीं। पार्लर को लेकर नीता की आशंका सच में बदल गई। गनीमत थी कि अभी ताला नहीं लगा था बस शालिनी उसे घसीट रही थी किसी तरह।

नीता को अब विधायक की पार्टी के उम्मीदवारों की लिस्ट आउट होने का बेसब्री से इंतज़ार था। ऐसे में अनुराग ने एक दिन ऑफिस से आते ही धमाका कर दिया-

''विधायक से बुरी तरह झगड़ी है तुम्हारी रूपल। ''

''क्यों...क्या हुआ?''

''उसका कहना है कि मेरा नाम, काम सब छीन लिया पार्टी ने। अरे बच्ची है क्या? विधायक तो नहीं आया था इसके पास खुद ही गई थी मेल-जोल बढ़ाने। अब राजनीति तो फुल टाइम जॉब है, पार्लर तो ठप्प होना ही था।''

''पर झगड़ा?''

''कौंसलर की सीट पर लड़ना चाहती थी। महिला के लिए आरक्षित हो गई है सीट इसीलिए 'शक्ति' के बहाने से मिलने गई थी विधायक से। अब कहती है कि संस्था का भी मनचाहा इस्तेमाल किया विधायक ने।''

''पर नाम तो अभी अनाउंस हुए ही नहीं?''

''सौ प्रतिशत सच्ची खबर है कि आज की प्रेस कॉन्फ्रेंस में विधायक की पत्नी का नाम आना तय है। 'शक्ति' की इन्फ़्लूऐन्शियल महिलाएँ सब इससे चिढ़ी हुई हैं और विधायक की पत्नी के साथ हैं... रूपल की क्या बिसात उसके आगे।''

''ये तो गलत हुआ, दी तो...''

''रहने दो दी को और टिकिट क्या हलवा है जो हर कोई ऐरा-गैरा निगल जाएगा? फिर जन-सेवा के नाम पर किया क्या है उसने?''

''ऐसे तो विधायक की पत्नी ने भी क्या किया है?'' नीता ने प्रतिवाद का स्वर नहीं छोड़ा।

''किया क्यों नहीं है? बरसों पति के साथ घूम-घूमकर, सभा समिति में बैठकर अपनी दावेदारी ही तो मज़बूत करती रही, फिर ज़ाहिर सी बात है राजनीति में पति की सेवा का मेवा रूपल जैसियों को नहीं, पत्नियों को ही मिलता है।''

औरों के लिए हँसी-मज़ाक में उड़ाने वाली बात हो पर नीता के लिए रूपल की तमाम खामियों, कमियों के बावजूद ये बहुत बड़ा झटका था। उनका सब कुछ खत्म हो चुका था। नाम, काम और सपना।

''अब क्या होगा रूपल दी का?''--ये सवाल नीता को परेशान करता रहा कई दिन। अनुराग की बात सच हुई। टिकिट विधायक की पत्नी को ही मिला। आस-पड़ोस में सब रूपल का मज़ाक उड़ा रहे थे पर नीता ऐसे तड़प रही थी जैसे उसका कुछ छिन गया हो। सोच ही रही थी कि रूपल दी से मिलने का बहाना कैसे ढूँढूँ कि खुद उनका फ़ोन आ गया।

''नीता जी कैसे हो? आपको तो सब पता ही है कैसा धोखा हुआ है मेरे साथ। बुरे वक्त में हेल्प चाहिए बस। सबको फ़ोन कर रही हूँ, मदद करो। आप जैसे पुराने क्लाइंट अगर फिर से पार्लर आने लगें और थोड़े नए क्लाइंट बना दें तो देख लेना एक दिन पार्लर भी चला लूँगी और शक्ति को खड़ा करके अपने बलबूते टिकिट भी निकाल लाऊँगी। सब समझ लिया मैंने ... ऐसे नहीं मिटने दूँगी अपनी इमेज को।

❐

मोहभंग

वंदना देव शुक्ल

'कितना बज गया ?'

मैंने बिस्तर की साइड टेबल पर रखा टेबल लेम्प जलाया ..'दो बजने वाले हैं।'

'अरे? मुझे तो लग रहा था सुबह हो गई होगी ..इन मोटे पर्दों में खिड़कियों में से भी कुछ पता ही नहीं चलता समय का ..' एक खरखराती सी आवाज़ मेरे कानों में पड़ी।

'वैसे अभी अन्धेरा ही है सर्दियों की रातें लम्बी होती हैं न ?' मैंने कहा।

'नहीं नींद तो लगी थी लेकिन कुछ आवाज़ें सी आ रही थीं सो नींद उचट गई। यूँ भी बुढ़ापे की नींद ही है उसे तो उचटने का बहाना चाहिए बस।'

'अरें वो बच्चे कुनमुना रहे होंगे ..रात में बच्चे ज़्यादा तंग करते हैं न माँ को!' मैंने कहा।

'हाँ सो तो है।'

'याद नहीं अपना रोशी कितना रोता था रात में ?हम दोनों उसे गोद में लिये घुमाते रहते थे तो भी चुप नहीं होता था।'

कुछ देर मौन तैरता रहा फिर वो बोले 'दरअसल नींद नहीं आती तो कुछ बैचेनी-सी हो जाती है।'

'रात में बी पी की दवा ले ली थी ?'

'हाँ ...वो नहीं है बस दिमाग का चक्कर है चलता ही रहता है..इतना कि नींद ही भाग जाती है..क्यों चलता है दिमाग इतना ? शरीर की तरह चलते-चलते थकता क्यों नहीं ?'

'कुछ बातें करें? फिर सुबह जब नींद आए सो जाना ..कहीं जाना-आना तो है नहीं ..।' मैं अपना रतजगा छिपाते हुए बोली।

वो कुछ देर चुप रहे फिर उठ गए और बोले...'लेकिन तुम्हें तो नींद आ रही होगी न ?'

'नहीं...मेरी नींद भी ऐसी ही है कच्ची सी...गहरी नींद तो जाने कब से नहीं आई।' अपने कराहते घुटनों को समेटे मैं उठने लगी।

वो भी पलंग से उठ बैठे व टेबल पर रखे जग से पानी गिलास में भरते हुए हँसकर बोले-

'कमाल है,जब नौकरी में थे कभी ऐसा भी हुआ कि काम में इस कदर उलझे रहे कि अपनी प्यास ही भूल गए और अब तो पानी पीना भी एक काम-सा लगता है ...लगता है जैसे चलो जग से ग्लास में पानी भरते हुए इतना टाइम पास और हो गया ज़िंदगी का।'

मैंने अब तक दराज़ में रखा ऊन का गोला और बुनने की सलाइयाँ निकाल ली थीं और स्वेटर बुनने लगी थी...

'देखो फंदे फिर उतर गए पता नहीं ये कैसे उतर जाते हैं सलाइयों से...... मैंने बात फिर पलटी।

वो हँसे...'जैसे उम्मीद के फंदे उतर जाते है ज़िंदगी की सलाइयों से....बोलो.... नहीं क्या?'

उनकी स्मृतियों के अँधेरों को छाँटना अब मेरे वश में नहीं......आखिर कब तक...? अब तो बहलाने

वंदना देव शुक्ल
शिक्षा-बी एस सी, एम ए (हिंदी /संगीत) बी एड, शोध कार्य
लगभग सभी साहित्यिक पत्रिकाओं में कहानियाँ प्रकाशित
सम्प्रति-शिक्षिका
फ़ोन-९९२८८३१५११
ईमेल:
shuklavandana46@gmail.com

से भी ऊब होने लगी है... हर चीज़ की अपनी कोई सीमा होती है...

'डेज़ी को खाना दे दिया था?' उन्होंने पूछा।

'हाँ...

'सुनो सर्दियाँ आ रही हैं, उसके लिए भी कुछ गर्म बना दो न...बेचारी सर्दी खा जाएगी नहीं तो...... और बच्चे भी...

'हाँ संजू का एक पुराना स्वेटर रखा है उसे ठीक कर दूँगी...एक कम्बल-सा बना दूँगी ओढ़ने के लिए। आराम से सो जाएँगे सब .....

अचानक उन का चेहरा और बुझ गया... एक अजीब सी छाया बेटे संजू के नाम से उनके चेहरे पर उतर आती है। मुझे अपनी गलती का अहसास हुआ।

राकेश मेरे पति हैं। हम दोनों के दो बेटे हैं, बड़ा सुशांत यानी रोशी और छोटा सौजन्य यानी संजू। जब भी उनका ज़िक्र किसी पुराने ज़माने की याद की तरह आता है, न जाने क्यों मेरी नज़रें टी वी के पास दीवार पर जड़ी काँच की उस अलमारी की तरफ जाती हैं; जिनमें सबसे ऊपर के खंड में एक सुन्दर से गोल्डन फ्रेम में उन दोनों की बचपन की तस्वीर लगी थी। रोशी लाल कलर की तीन पहिये की साइकिल चलाता हुआ और पीछे की सीट पर बैठा छोटा भोला-भाला संजू ....गुलाबी सफेदी लिए चमकती चिकनी त्वचा, गोल-मटोल हृष्ट-पुष्ट मुस्कुराते हुए चेहरे। किस कदर लापरवाह हो गई हूँ मैं कि अब वो तस्वीर वहाँ नहीं है और मैंने ये जानने की कोशिश भी नहीं की कि वो कहाँ चली गईं वहाँ से ? बस उनकी जगहें खाली हैं अब। उन खाली जगहों में मुझे कभी-कभी उसी साइकिल पर बैठे हुए उनकी पीठें दिखाई देती हैं, ये उन दोनों की उम्र का वो हिस्सा था; जब उन के कपड़े, किताबें, जूते, स्लीपर्स, स्कूल बैग जहाँ-तहाँ बिखरे पड़े रहते थे; जिन्हें मैं पूरे दिन बटोरकर यथा स्थान रखती रहती थी। अब भी कुछ चीज़ें वहीं की वहीं हस्बमामूल रखी हुई हैं न जाने क्यूँ न जाने कब तक। साइकिल, कॉमिक्स, उनके झूले, रिस्ट वॉच जैसी चीज़ें हमने बेच दीं और कुछ लोगों को बाँट दीं। हम उनकी एक एक याद को बाँट देना चाहते हैं, भूल जाने की हद तक। काश ये हमारे वश में होता ...

करीब सत्ताईस बरस पहले..

जब हमारी शादी हुई राकेश दर्शन शास्त्र के

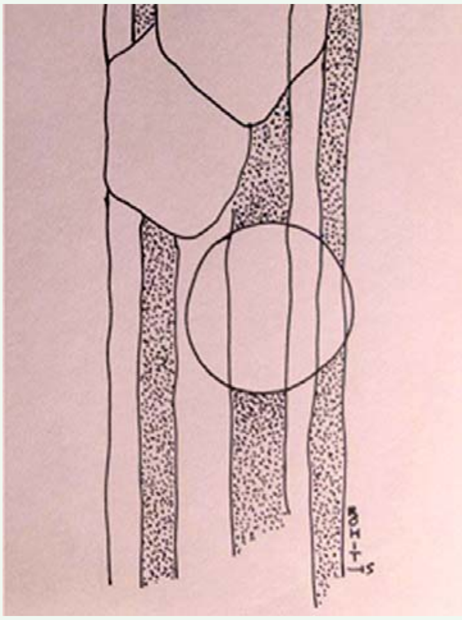

प्रोफ़ेसर थे और एक प्रतिष्ठित लेखक भी और मैं एक बैंक में कार्यरत। सिर्फ लोग ही नहीं कहते थे बल्कि हम खुद को वास्तव में सुखी मानते थे। फिर देवदूत की तरह हमारे घर जन्मे हमारे दो बेटे। सिर्फ दो बरस का अंतर था उनकी उम्र में। सहसा हम दोनों की ज़िंदगी के मकसद बदल गए। हम कतरा-कतरा अपने से निकलकर उनकी ज़िंदगी में शामिल होने लगे। उनकी एक-एक अदा पर हम निसार होते, उनके 'होने' के जादुई जुनून से वशीभूत हो हम अपने आसपास की तमाम दुनिया को जैसे सप्रयास भुलाते गए। इसी परवरिश के चलते मुझे मेरी नौकरी से इस्तीफ़ा देना पड़ा, क्योंकि मेरा ट्रांसफर हो गया था और मैं बच्चों को छोड़कर जाने की कल्पना भी नहीं कर सकती थी। थोड़ा दुःख तो हुआ नौकरी छोड़ने में... इस्तीफ़ा लिखते हुए कुछ हाथ भी काँपे, तब राकेश ने समझाया था कि नौकरी बच्चों से ज़्यादा थोड़े ही होती है फिर मैं तो कर ही रहा हूँ जॉब ..चला लेंगे इतने में। अब हम बच्चों को इतना समर्थ बनाएँगे कि हमें अपने फैसले पर गर्व होगा पछतावा नहीं और उनका कहा बिलकुल सच भी निकला।

नौकरी से इस्तीफ़ा देकर व अपने तमाम शौक व ख्वाहिशें बच्चों के वयस्क हो जाने तक मुल्तवी करके मैं पूरी तरह उनकी परवरिश में जुट गई। उन की तमाम ज़िदें पूरी करने, उन्हें प्ले ग्राउंड ले जाने से लेकर होंम वर्क कराने, स्कूल बस तक छोड़ने, पेरेंटस टीचर मीटिंग्स अटेंड करने व उनका मन बहलाने तक की ज़िम्मेदारी मैंने अपने ऊपर ले ली; जिसे वहन करने में मुझे एक अभूतपूर्व खुशी होती। तब मैंने महसूस किया कि माँ-पिता बन जाने के बाद ज़िंदगी के मकसद किस कदर बदल जाते हैं। जब तक ये पैदा नहीं हुए थे लगता था दुनिया बहुत फ़ैली है, हमारे सपनों के इस घर से पूरी पृथ्वी तक। शादी के बाद के उन दो चार बरसों में हम विदेश यात्रा भी कर आये थे, लेकिन बच्चे होते ही हमारी दुनिया उनकी परवरिश और प्यार तक सिमट आई। हमें दुनिया की तमाम रंगीनियाँ उनकी निर्दोष निश्छल हँसी में दिखने लगीं। हम उनकी तुतलाहट भरी बातों पर निसार होने लगे। अपने बच्चों को बड़ा होते देखना खुद को बड़ा होते देखने से ज़्यादा रोमांचकारी होता है।

अब हमारी मेहनत की फसल तैयार हो रही थी..अब हमारे सपनों के पकने के दिन थे। बड़े बेटे रोशी ने बारहवीं में अपने स्कूल में टॉप किया था और उसे आई आई टी में दाखिला मिल गया था, तब छोटा दसवीं में था; जिस दिन रोशी का आई आई टी का रिजल्ट आया हमारे घर शुभचिंतकों का तांता लग गया। समझ में नहीं आ रहा था कि इतनी सारी खुशियों को कैसे बर्दाश्त कर पाएँगे ? रोशी को रुड़की तक छोड़ने हम सपरिवार गए थे। आँखें भर आई थीं मेरी और राकेश की, पहली बार अपने जिगर के टुकड़े को अपने से अलग कर रहे थे। रोशी भी उदास हो गया था ...

'अच्छे से पढ़ाई करना बेटा ..लेकिन हेल्थ पहले है। उसकी कीमत पर कुछ भी नहीं ..ठीक है न!'

'देखो हमने पता कर लिया है यहाँ मेस में दूध मिल जाएगा तुन्हें .... बोर्नविटा रख ही दिया है तुम्हारे साथ...अरे हाँ बोर्नविटा का डब्बा खुला मत छोड़ देना टाइट बंद करना नहीं तो जम जाएगा..

.और देखो रात-रात भर नहीं पढ़ना, वहाँ घर में तो मम्मी तुन्हें सुला देती थीं, लाइट ऑफ़ कर देतीं थीं, लेकिन यहाँ तुम्हें अपना ख्याल खुद रखना पडेगा।'

'..सुनो वो पापा तुम्हारे लिए टॉर्च लाये थे रख ली थी न बैग में ?'

..हम दोनों ने समझाइश की झड़ी लगा दी थी।

'आप परेशान मत हो... बस अपना ख्याल रखना... पापा वॉक ज़्यादा दूर तक मत करना, नहीं तो फिर बैक पेन हो जाएगा ...मम्मी अपना चश्मा बनवा लेना..' और इस तरह हमारा बड़ा बेटा हमसे

दूर उस कॉलेज चला गया और अब हमने धीरे-धीरे उसके बिना रहने की आदत डाल ली, लेकिन मन वहीं रखा रहता। एक दिन भी उसका फ़ोन नहीं आता तो हम दोनों परेशान हो जाते। वो भी समय निकालकर हमें फ़ोन करता। रोशी को किताबें बेचना नापसंद था। उसकी नर्सरी से लेकर बारहवीं तक की किताबें, कॉमिक्स और मेग्जींस, जो वो पढ़ता था जैसे स्पोर्ट स्टार,इण्डिया टुडे आदि उन्हें उसकी अलमारी में ही एहतियात से रख दिया मैंने। उन किताबों में उसकी छुअन और गंध बसी थी। दो बरस बाद छोटे बेटे संजू का भी मेडिकल में सलेक्शन हो गया, लेकिन अच्छा हुआ कि वो यहीं मेरठ में ही था। पी एम् टी में सलेक्शन होते ही हमने उसके भविष्य का इंतज़ाम करते हुए यहीं एक प्लाट खरीद लिया कि संजू का नर्सिंग होम बनाएँगे। हमने नक्शानवीस से उसका नक्शा भी तैयार करवा लिया, नीचे नर्सिंग होम और ऊपर थ्री बी एच के रिहाइश के लिए। हमारे बाद ये घर रोशी का और वो नर्सिंग होम /घर संजू का। हालाँकि हमारी जमा पूँजी इन इंतज़ामात में लगभग शून्य हो चुकी थी और अब हम पूरी तरह पेंशन पर निर्भर थे लेकिन हम संतुष्ट थे। दोनों बच्चों के भविष्य की व्यवस्था करके। ये जानते हुए भी कि वे दोनों समर्थ और योग्य हैं अपना भविष्य संवारने के लिए।

रोशी अमेरिका से छुट्टियों में जब घर आता तभी हमारा त्योहार हो जाता। उसके लिए पहले से ही मैं उसके पसंद की चीज़ें बनाकर रखती। उसके लिए एक से एक डिज़ायन के स्वेटर बनाती। हम लोग आसपास के किसी दर्शनीय स्थल पर पिकनिक के कार्यक्रम भी बनाते। उसके बाद रोशी की नौकरी यू एस में लग गई. तब संजू का इंटर्नशिप चल रहा था। हमने हर रिश्तेदार को ये खुशखबरी गर्व के साथ बताई। अगला सपना बहुत चमकीला और रंगबिरंगा था। अपने होनहार बेटों के लिए एक सुयोग्य लड़की देखकर उनका घर बसाना। कोई अच्छी लड़की दिखती, हम उसे गौर से देखते। बेटों का मेल मिलाते। कोई दुधमुँहा गोलमटोल बच्चा दिखता हमारी आँखें सपनों से झिलमिलाने लगतीं, लेकिन हमें जब पता पड़ा कि रोशी ने अमरीका में ही अपने लिए एक लड़की देख ली है; जो उसी के साथ जॉब करती है और अमेरिकन ही है तो समझ में नहीं आ रहा था कि खुश हों या दु:खी। खैर बच्चों की खुशी हमेशा सर माथे। सो वहाँ उन्होंने शादी कर ली चर्च में, लेकिन जब यहाँ आए तो हमने बाकायदा आयोजन रखा। हालाँकि अपने देश की बहू की कमी हमें खलती रही, लेकिन तब भी पुत्र की खुशी हमारी लिए सर्वोपरि थी। रोशी होली दीवाली इंडिया आता, कभी-कभी बहू भी साथ आ जाती, लेकिन फिर उसका आना बंद हो गया पता चला कि वो गर्भवती थी। हमने हनुमान जी के मंदिर में उसके सकुशल माँ बनने का प्रसाद बोला और हमारी मन्नत क़ुबूल हुई एलिना ने अमरीका में एक स्वस्थ्य और सुन्दर बेटे को जन्म दिया।

हमारा बड़ा बेटा रोशी अपनी सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ते हुए हमसे बहुत दूर चला गया। उसकी खुशियाँ इतनी ऊँची और हमसे दूर होती गईं कि हमारे बुढ़ापे की गर्दनें उन्हें देखने में अकड़ जातीं। हम दोनों उनके फ़ोन द्वारा प्राप्त छितरी हुई सी ख़बरों में से उनके जीवन में झाँकने की कोशिश करते। उनके मौजूदा जीवन में उनकी खुशियाँ टटोलने का जतन करते। कभी-कभी वो वीकेंड पर बच्चे के साथ स्काईप पर आते ...गोल-मटोल खिलखिलाते पोते को देखकर हमारी आँखें खुशी से भर आतीं। आँसुओं के साथ आशीर्वाद झरते।

कोई बात नहीं ..नौकरी में ये त्याग करना ही पड़ता है। संजू तो हमारे पास ही है इसकी शादी खूब धूम-धाम से करेंगे ....। मैं सपने देखती। दोनों अपने नर्सिंग होम जाएँगे, तब मैं उन्हें समय पर नाश्ता खाना सब बनाकर दूँगी। अब फ्री ही तो हूँ। आजकल की सासें पहले की तरह अकड़,रोबदार तो हैं नहीं; होना भी नहीं चाहिए। समय के साथ सब बदलता ही है। मैं तो बिलकुल मॉडर्न सास बनकर रहूँगी। बहू जो चाहे पहने, जब चाहे सोकर उठे। आखिर बहू किसी की बेटी भी तो होती है ? मैं अपने बूढ़े भविष्य के ऐसे तमाम सपने देखती प्लान बनाती और मन ही मन खुश होती।

हमें खुशी थी कि छोटे बेटे संजू के लिए हमने अपनी पसंद की लड़की देखी है। खूब धूम-धाम से शादी की उसकी। रोशी भी एलिना यानी अपनी पत्नी के साथ आया। उसका बेटा रोमिल बिलकुल अपनी माँ पर गया था। खूब गोटा-चिट्टा, हँसता तो गाल टमाटर जैसे लाल हो जाते। उस बच्चे की देखभाल के लिए अमेरिका से ही उसकी मेड आई थी, जो साये की तरह उसके साथ रहती। हम चाहते पोते को सीने से चिपका लें खूब चूमें, प्यार करें लेकिन मेड लेने ही नहीं देती थी। कहती 'Sorry he gets infected easily', सो हम बच्चे को दूर से देखते रहते। हँसते-खिलखिलाते,रोते, ठुमक-ठुमक कर चलते। मेड को वो अपनी माँ समझता और उसी के पास जाता। वो नहीं दिखती तो रोने लगता, उसे खोजता। हम घर आए रिश्तेदारों से अपना प्रायश्चित बेवजह की हँसी ओढ़कर छिपाते रहते। बल्कि हम पति-पत्नी भी अपनी पीड़ा एक दूसरे से छिपाते। शायद अब हम आपस में और ज़्यादा प्रेम करने लगे थे या अब और ज़्यादा निकट आने लगे थे। अब हमारा अपना भविष्य हमारी प्राथमिकता होने लगा था।

संजू की शादी के बाद उनका शहर में ही नर्सिंग होम खोलने का प्लान बदल गया और उनके प्लान के साथ ही हमारी भविष्यगत योजनाएँ और सपने भी चौपट हो गए। वो भी यू एस चला गया अपनी डॉक्टर पत्नी के साथ। वहाँ से उसके फ़ोन आते, उसमें रोशी और उसके बेटे की ख़बरें भी मिलती रहतीं। वो लोग वीकेंड पर मिलते थे। थोड़े दिन बाद संजू के फ़ोन आने भी बहुत कम हो गए। जब कभी दोनों बेटों के फ़ोन आते तो उनके गिने-चुने विषय होते,' आप लोग कैसे हैं? आपको मनी की ज़रूरत हो तो बताना या आपको कुछ पैसे भेजे हैं और चाहिए तो कह दीजिएगा। हम लोग ठीक हैं आप लोग अपना ख़याल रखना।' हम सोचते क्या आजकल के बच्चे 'ख़याल'का मतलब जानते भी हैं?

हमें इन दिनों कई नए अनुभव हो रहे थे जैसे हमें लगता था कि हमारे पास बात करने के विषय ख़त्म हो चुके हैं ..जैसे हमें लगता था कि हम शुरू से बस दो ही प्राणी थे जैसे अब दो हैं ..बीच का वो समय कोई लंबा सपना था जो बीत चुका है ..। घर में इस कदर सन्नाटा हो गया था कि कभी-कभी दहशत सी होती थी।

'सोच रहा हूँ कुछ दिन बच्चों के पास रह आएँ। रिटायर हो ही गए हैं, सो आने की भी कोई ज़ल्दी नहीं है, एक दिन राकेश ने मुझसे कहा।'

'अच्छा आइडिया है फ़ोन से बात कर लो।'

'बेटा हमारा मन यहाँ नहीं लगता तुम दोनों चले जो गए हो ..सोच रहे हैं कि कुछ दिनों के लिए तुम्हारे पास अमरीका आ जाएँ, कुछ महीने तुम्हारे घर रहेंगे कुछ दिन संजू के पास....बहुत बोर होते हैं यहाँ।'

'प्लान अच्छा है पापा टिकिट की चिंता मत करना, मैं आप दोनों का टिकिट करा दूँगा। वीज़ा भी जल्दी मिल जाएगा, लेकिन यहाँ की लाइफ बहुत बिज़ी है। यहाँ इंडिया जैसा तो है नहीं कि जब चाहा घूमने निकल गए, कुछ खरीदारी कर ली क्योंकि यहाँ हम सिक्सटीन फ्लोर पर रहते हैं। आप लोग ऊपर लटक कर रह जाओगे। फिर यहाँ के ट्रेफिक रूल्स वगैरह भी वहाँ से बहुत अलग हैं। मेड यहाँ बहुत महँगी है, सो काम भी अपने हाथ से ही करना पड़ता है। संजू भी अभी स्ट्रगल कर रहा है, उसकी नई जॉब है अभी।'

'ठीक है देखते हैं फिर कहकर राकेश ने फोन रख दिया।'

उस दिन हम लोग इवनिंग वाक के लिए निकट के पार्क में गए, लौटते वक़्त एक कुतिया पीछे लग गई। मैं उसे भगाने लगी तो राकेश ने कहा, 'भगाओ मत काटेगी नहीं।' फिर उन्होंने खुलासा किया। असल में सुबह की सैर के वक़्त जब कभी थककर वो पार्क में बेंच पर बैठते हैं, तो यह उनके पास आ जाती है। कभी-कभी वहाँ ठेले वाले से वो इसे ब्रेड वगैहरा दिलवा देते हैं, तो थोड़ा हिल गई है।'' अब वो अक्सर हमारे पीछे-पीछे चली आती। मैं उसे कुछ खाने वगैरह को दे देती और वो घर के सामने ही बैठी रहती और अनजान लोगों पर भोंकती भी। वो समझदार थी। कुछ दिनों में उसकी आवाजाही घर में बढ़ने लगी और वो एक घर के सदस्य की तरह हो गई। खाना रहना सब वहीं। मुझे आश्चर्य हुआ क्योंकि राकेश जानवरों को पालने के पक्ष में कभी नहीं रहे, वे बहुत सफाई पसंद हैं और ये तो सड़क की कुतिया थी, लेकिन उन्होंने खुद ही गार्डन के एक कोने में उसके रहने का इंतज़ाम भी अपने हाथों से कर दिया। नाम भी रख लिया 'डेज़ी'। इस नाम के पीछे उन्होंने वजह बताई कि उनके बचपन में घर में एक कुतिया पली हुई थी। उसका नाम भी डेज़ी था। हालाँकि वो पामेरियन थी, लेकिन इसकी समझदारी देखकर उन्हें उसकी याद आती है। अब वो ज़्यादातर समय डेज़ी के साथ बिताने लगे। सुबह-शाम उसको साथ लेकर घूमने जाते। मटीले रंग की वो दुबली-पतली मगर फुर्तीली डेज़ी हमारे मन में बसने लगी। हम दोनों उसका खूब ख़्याल रखते। राकेश तो जानवरों के अस्पताल में जाकर उसको सुई भी लगवा लाये। उसे नहलाते धुलाते, खाना अपने हाथ से देते। वो

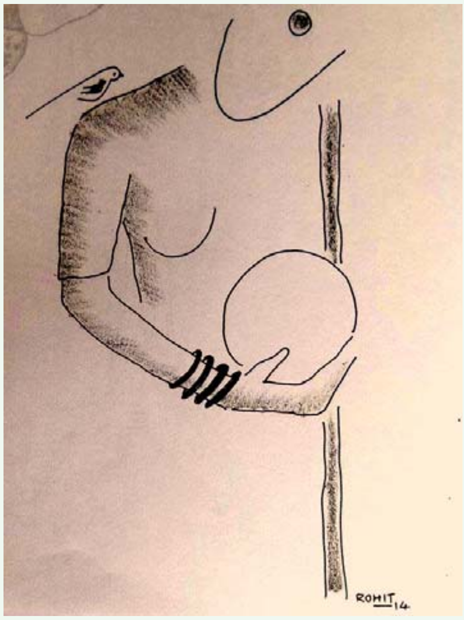

हमारा प्रेम और गुस्सा समझती थी। मैं उसे गलती करने पर डाँटती तो वो उदास हो सर नीचे किये सुनती रहती और जब हम उसे प्यार करते तो वो हमारे पैरों में लोटती। राकेश जब धूप में गार्डन में बैठ पेपर या कोई किताब पढ़ते, डेज़ी वहीं उनके आसपास डोलती रहती। राकेश का काफी समय अब उसके साथ बीतने लगा। डेज़ी ने घर की कुछ जिम्मेदारियाँ अपने ऊपर ले ली थीं, जैसे सुबह गार्डन से अखबार वो लेकर आती, किसी अपरिचित की मजाल नहीं थी कि गेट की तरफ देख भी लेता। हम उसके गले में एक कपड़े का झोला टाँग देते जिसमें सामान की लिस्ट होती, वो बगल की दूकान से सामान ले आती बाद में आते-जाते हुए हम उसका पेमेंट कर देते।

उस दिन रोशी का फ़ोन आया..'पापा आजकल आप फ़ोन नहीं करते?'

'हाँ थोड़ा बिज़ी हो गए हैं।'

'बिज़ी ? किस चीज़ में ?'

राकेश ने फिर उसे डेज़ी के बारे में बताया, बहुत समझदार और क्यूट है, बस उसी में लगे रहते हैं मैं और तुम्हारी मम्मी।

रोशी खुश हो गया, ये तो बहुत अच्छा किया पापा आपने, अब मन भी लग जाएगा आपका और घर में सेफ्टी भी रहेगी; जैसे वो हमारी तरफ से बिलकुल निश्चिन्त हो गया हो।'अपनी तबियत का ख़्याल रखियेगा, आपको पैसे भेज रहा हूँ जल्दी ही, अभी सौ डॉलर भेज रहा हूँ और ज़रूरत हो तो बता देना।'

'नहीं बेटा ..अभी पैसे की ज़रूरत नहीं हमें। ज़्यादा खर्चा ही नहीं है ..फिर पेंशन तो मिलती ही है आराम से चल जाता है।' राकेश ने कहा

कुछ दिनों से डेज़ी उदास थी। खाना भी ठीक से नहीं खा रही थी। सुबह की सैर के लिए जब राकेश उसे ले जाते, तो वो अनमनी-सी जाती और वापस आकर उछल कूद न करके बस अपने घर में पंजों में मुँह दिए उदास सी बैठी रहती। हमें उसकी फ़िक्र थी। राकेश और मैं उसे गाड़ी में बिठाकर जानवरों के डॉक्टर के यहाँ ले गए तो उसने डेज़ी के गर्भवती होने की संभावना जताई। हमारी खुशी का ठिकाना नहीं था। राकेश तो ऐसे खुश थे जैसे घर में ही किसी की डिलेवरी होने वाली हो। खूब देखभाल की हमने उसकी। जो कुछ अच्छा लगता डेज़ी को हम उसके लिए लाते। उस दिन जब सुबह होने को थी, हल्का-हल्का अँधेरा अभी बाहर फैला ही था कि कुछ अजीब सी दबी हुई-सी आवाज़ें आने लगीं। हम दोनों दरवाज़ा खोलकर देखने बाहर आए। आवाज़ें डेज़ी के घर से आ रही थीं। हम घबरा गए कि डेज़ी बीमार तो नहीं है। उसके घर में झाँककर देखा, तीन बहुत प्यारे छोटे-छोटे शिशु शावक डेज़ी से चिपके हुए दूध पी रहे थे। पहले डेज़ी गुर्राई लेकिन जब उसने हमें देखा तो चुप हो गई। हम दोनों की खुशी का ठिकाना नहीं था। मैंने जल्दी से उसके लिए गरमागरम हलवा बनाया, राकेश अंदर से एक पुराने कम्बल का टुकड़ा ले आए और उनके ऊपर ओढ़ा दिया। पूरा दिन हमारा कैसे निकला पता ही नहीं चला। शाम को संजू का फ़ोन आया 'मम्मी पापा आप लोग आ जाइए सुजाता (पत्नी) प्रेग्नेंट है उसे डॉक्टर ने अगले माह की डेट दी है।'

'किसका फ़ोन है?'राकेश ने पूछा।

मैंने मोबाइल उन्हें पकड़ा दिया।

'पापा मैं आप और मम्मा का टिकिट बुक कर रहा हूँ, आप लोग अमेरिका आ जाइए। यहाँ सुजाता को डॉक्टर ने कम्प्लीट रेस्ट बताया है......यहाँ परदेश में कोई अपना नहीं है। ...मुझे थोड़ी फ़िक्र हो रही है सुजाता की।'

'संजू.....कोई दूसरा इंतज़ाम कर लो बेटा ....हम नहीं आ पाएँगे।' कहकर राकेश नव प्रसूता डेज़ी और उसके नवजात बच्चों के इंतज़ामात में व्यस्त हो गए।

❐

शारदा

महेन्द्र दवेसर दीपक

वह लक्ष्मण-रेखा लाँघ आई है और छोड़ आई है, वे कन्धे जिन पर उसकी अर्थी निकलनी थी। साथ में छोड़ आई है कॉफ़ी टेबल पर खुला पत्र और घर की चाबियाँ। लैच लॉक वाला दरवाज़ा अब बंद हो चुका है। अब पीछे मुड़कर देखना नहीं हो सकेगा।

अपने पत्र में उसने लिखा-

'प्रिय रजत, प्रभा, मैंने पाप सोचा। तुमने उसे पूरा किया। मेरी सोच दंडनीय हो गई। तुम्हारा पाप हो गया पुण्य-स्वरूप! यदि यही विधाता का न्याय है तो मुझे स्वीकार है; क्योंकि मैं स्वयं अपनी मौत के षड्यंत्र की भागीदार हूँ। तुम मुझे पूरी तरह भूल सको इसलिए मैं अपनी हर निशानी-शादी का एल्बम, विडियो रिकॉर्डिंग और दूसरे फ़ोटोग्राफ़ साथ लिए जा रही हूँ। तुम लोग सुख वैभव में जिओ, मेरे सच्चे मन से यही प्रार्थना है। छोटे रिंकु को मौसी का प्यार देना।

सस्नेह,

तुम्हारी,

शारदा।'

घर के बाहर टैक्सी खड़ी थी। उसने पिछली सीट पर अपने को फेंका और ड्राइवर से कहा, 'हीथरो एयरपोर्ट'।

सिनेमा शो के बाद रजत, प्रभा और रिंकु जब घर लौटे तो अँधेरा हो चुका था। कार ड्राइव में रुकी तो घर के अंदर की सभी बत्तियाँ गुल थीं। कॉल-बेल बजाने पर भी जब दरवाज़ा नहीं खुला तो रजत ने अपनी चाबी से उसे खोला।

शारदा घर से ग़ायब थी। कॉफ़ी टेबल पर उसका पत्र पढ़कर दोनों सकते में आ गए।

कहाँ गई होगी शारदा? पड़ोसी तो केवल इतना कह सके कि वह टैक्सी में बैठकर गई है। एक सूटकेस भी था साथ में। जान-पहचान के लोगों से पूछा गया। कोई सुराग़ नहीं मिला। पुलिस को रिपोर्ट करने से वे डरते थे। प्रश्नों में से प्रश्न निकलेंगे और उनके बेतुके उत्तरों से जो फंदा बनेगा, वह रजत को जेल पहुँचा देगा और प्रभा और रिंकु को भारत लौटना पड़ेगा। वहाँ वह छः महीने के बच्चे को लेकर किसके सहारे जिएगी?

रजत और प्रभा ने कलेजे पर पत्थर रख लिया। शारदा के घर से भाग जाने की बात अतीत के ग़ुबार में कुछ ऐसी गुम हुई कि स्वयं रजत और प्रभा भी भूल गए कि उसी छत के नीचे कोई शारदा भी रहती थी-रजत की पत्नी और प्रभा की बड़ी बहन!

चार साल पहले रजत और शारदा का विवाह हुआ था-प्रेम विवाह! वह छह सप्ताह की छुट्टियों पर

यू के के महेन्द्र दवेसर दीपक जकार्ता इंडोनेशिया में भारतीय दूतावास में नियुक्त थे। विदेश सेवा अवधि में इंडोनिशिया सरकार के अनुरोध पर भारत सरकार की विशेष आज्ञा पर वायस आप इंडोनेशिया के हिंदी यूनिट के संचालन तथा प्रसारण का अतिरिक्त भार सँभाला। रेडियो जकार्ता से दैनिक समाचारों, चर्चाओं, वार्ताओं और इंडोनेशिया के जीवन से संबंधित महेन्द्र जी की कहानियों ने अच्छी लोकप्रियता प्राप्त की। पहले कहा होता, बुझे दिये की आरती और अपनी-अपनी आग, पुष्पदहन महेन्द्र जी के कहानी संग्रह हैं।
संपर्क-70,Purley Downs Road,
South Croydon. Surrey,
UK, CR2 ORB;
mpdwesar@yahoo.co.uk

भारत आया था। एक पार्टी में शारदा को देखा और लॉटरी निकल गई। अकेला आया था और अतीव सुन्दरी एम ए पास वधू को साथ लेकर लंदन लौटा। विदा के समय विधवा माँ ने वही घिसा-पिटा उपदेश बेटी के कानों में उँडेल दिया, 'बेटी मेरे दूध की लाज रखना। भले घरों की लड़कियाँ डोली में बैठकर ससुराल जाती हैं और कंधों पर सवार अर्थी पर निकलती हैं।'

वह तो अर्थी की सवारी को तैयार थी पर कोई कंधा ही खिसका दे तो कोई क्या करे?

लंदन में रजत का अच्छा जमा हुआ बिज़नेस था। पैसे की कोई कमी न थी। मज़े में दोनों की ज़िंदगी कट रही थी। फिर अचानक बुलबुला फूट गया।

डॉक्टरों ने साफ़ कह दिया कि अविकसित गर्भाशय के कारण शारदा कभी माँ न बन सकेगी। लॉटरी लगने पर रक़म न मिलने पर जो अन्याय होता है, कुछ वैसा ही लगा! कभी सोचा न था कि जिस औरत का बाह्य स्वरूप ऐसी भरपूर बहार है, वह अंदर से रेगिस्तान निकलेगी।

दिन भर रजत काम पर होता। दिन भर शारदा दीवारें ताकती। शाम को भोजन के बाद टी. वी. देखते। या फिर कोई फ़िल्म देखने के लिए निकल जाते। पार्टियों में हो आते या फिर घर में पार्टी कर लेते। दिल के बहकाने के कई ढंग थे... बहलाने का कोई नहीं!

एक दिन झिझकते-झिझकते-शारदा ने कह डाला, 'कोई बच्चा गोद ले लेते हैं।'

'किसका बच्चा?'

'किसी का भी।'

'किसी अंजान हरामी का बाप नहीं बनूँगा मैं,' रजत ने डाँट लगाई। उस दिन के बाद शारदा ने मुँह नहीं खोला।

माँ तो रही न थीं। प्रभा उन दिनों बी.ए. फ़ाइनल में थी और कॉलेज हॉस्टल में रहा करती थी। वह जब फ़ोन पर बहन से बात करती तो बड़ी संतुष्ट और ख़ुश लगती। पर गर्मी की छुट्टियों के दिनों में जब उसका पत्र शारदा को मिला तो सही तस्वीर सामने आई।

'प्रिय दीदी, एक वीराने में पड़ी हूँ। पिछली गर्मियों में तो नेपाल से सुंदर तस्वीरें भेजी थीं। उस नेपाली सहेली का तो विवाह हो गया है। अब कहो तो सुनसान हॉस्टल के कुछ फ़ोटोग्राफ़ भेज दूँ।

छुट्टियों में लगभग सभी लड़कियाँ अपने-अपने घरों को लौट गई हैं। हम चार छह लड़कियाँ रह गई हैं। वे तो सब विदेशी हैं। दिल तो अपनों के बीच ही लगता है न? अकेली बोर हो रही हूँ। यह छुट्टियाँ तो जैसे-तैसे काट लूँगी पर फ़ाइनल परीक्षा के बाद कहा जाऊँगी?

तुम बड़ी लकी हो दीदी! एम.ए. के झट बाद जीजा जी को फाँस लिया। हमसे तो यह एम.ए. वैम.ए. होगा नहीं। हम भी क़िस्मत आज़माएँ... जल्दी बतलाओ कि ये दूल्हे किस मंडी में मिलते हैं?

जीजा जी को मेरी नमस्ते कहना।

तुम्हारी,

प्रभा'

रजत ने भी पत्र पढ़ा। हँसकर बोला, 'ठीक है... भारत में या फिर इंग्लैंड में दूल्हों की मंडी में जाल फेंकते हैं।' जाल फेंका गया पर सब व्यर्थ! दूल्हा कोई फँसा नहीं और प्रभा की परीक्षा भी हो चुकी। तब शारदा ने एक तरकीब सुझाई। ब्रिटेन के क़ानून अनुसार यहाँ कोई भी अविवाहित स्थायी नागरिक--वह पुरुष हो या स्त्री-विदेश में विवाह करके अपने जीवन-साथी को यहाँ लाकर घर बसा सकता है।

शारदा बोली, 'प्रभा के लिए लड़का मिल गया।'

'कौन?'

'तुम!'

'पागल हो गई हो क्या?'

'झूठ मूठ का विवाह कर लो प्रभा के साथ।'

'यह जुर्म है। तुम मुझे जेल भिजवाओगी।'

'जेल जाएँ तुम्हारे दुश्मन! तुम्हारे पासपोर्ट पर तो लिखा नहीं कि तुम विवाहित हो। गुपचुप विवाह कर लो। प्रभा को यहाँ ले आओ। फिर गुपचुप तलाक़ दे दो। बाद में उसका सही ढंग से विवाह कर देंगे। यह तो आम हो रहा है। पड़ोसन लता की बहन रमा और अनूप कौर की बहन भी तो इसी चलाकी से आई हैं--ईज़ी, सिंपल', शारदा ने चुटकी बजाई।

रजत नहीं माना। लेकिन जब भरी-भरी आँखों से शारदा ने कहा, 'अकेली लड़की भारत में कहाँ रहेगी? क्या करेगी?' आख़िर वह यह ख़तरनाक खेल खेलने को तैयार हो गया। प्रभा को मनाना भी कोई आसान नहीं था। फ़ोन पर ऐसी बातें हो नहीं सकतीं। स्वयं रजत शारदा का एक लम्बा-चौड़ा पत्र लेकर देहली पहुँचा। उसने प्रभा को समझाया, 'तुम्हारी शादी तुम्हारे मन पसंद लड़के से ही की जाएगी। तुम्हें तो बस मेरी पत्नी होने की 'एक्टिंग' करनी होगी। कुछ नहीं... बिल्कुल कुछ भी नहीं बदलने वाला।'

...और प्रभा भी मान गई। निश्चित योजनानुसार एक रविवार को एक साप्ताहिक हवन यज्ञ के एक आर्य समाज में दोनों का 'विवाह' संपन्न हुआ। एक अज्ञात वृद्ध महाशय ने कन्यादान किया और दो उपस्थित सज्जनों ने बतौर गवाह रजिस्टर पर दस्तख़त कर दिए। शादी के कुछ फ़ोटोग्राफ़ भी लिए गए। विवाह का प्रमाण-पत्र भी हाथ लग गया।

प्रभा की वीज़ा याचिका मिलने पर ब्रिटिश हाइ कमीशन ने इंटरव्यू के लिये तीन महीने बाद बुलाया। इसी सिलसिले में रजत भी देहली पहुँच गया। विवाह तो बस दिखावे भर का था। पर दिखावे के काग़ज़... प्रमाण-पत्र, फ़ोटोग्राफ़ आदि तो सब सही थे। शारदा का जादू चल गया। प्रभा को वीज़ा मिल गया।

रजत और प्रभा का हवाई सफ़र ठीक ही चल रहा था। फिर छा गया श्वेत अँधेरा! यात्रियों को सूचना मिली कि उत्तर और पश्चिमी यूरोप में गहन कोहरे के कारण हवाई जहाज़ को दक्षिण यूरोप की ओर लौटना पड़ रहा है। अन्ततः वे रोम के हवाई अड्डे पर उतरे। सभी यात्रियों को एक होटल में ठहरा दिया गया। दो रातें रोम में काटने के बाद तीसरे दिन जाकर मौसम साफ़ हुआ और वे लंदन पहुँच सके।

लंदन के हीथरो एयरपोर्ट पर यात्रियों के स्वागत-स्थल पर खड़ी थी शारदा! रजत और प्रभा को एक साथ देखकर एक परम विजय की चमक आ गई उसकी आँखों में! दोनों के 'तलाक़' के बाद प्रभा के विवाह के उज्ज्वल सपने वह अभी से देखने लगी। वह नहीं जानती थी कि उसकी यह विजय बस चार दिन की चाँदनी है।

एक सुबह जब शारदा टॉयलेट जाने को हुई तो अंदर से प्रभा के क़ै करने की आवाज़ आई।

वह बाहर निकली तो उसने बहन से पूछा, 'कुछ उलट सुलट खा लिया क्या?' प्रभा बिना उत्तर दिए अपने कमरे में भाग गई। जब दो-तीन दिन तक यही लक्षण रहे तो उसने स्वीकार किया कि वह गर्भ से है।

'यह सब कैसे हुआ?'

'रोम के होटल में हर दंपती को अलग कमरा मिला था। वही हुआ जो होता है। आग भड़क उठी, मोम पिघल गया,' प्रभा रो पड़ी।

शारदा ने दिल को तसल्ली दी कि अब भी कुछ नहीं बिगड़ा। वह और रजत बच्चे को गोद ले लेंगे और प्रभा का विवाह कर देंगे। यही बात जब उसने पति से कही तो उसने 'देखेंगे' कहकर टाल दिया।

दूसरी बार जब शारदा ने अपनी बात दोहराई तो रजत का दो टूक जवाब था, 'चार वर्षों में जो तुम न कर सकी, वह प्रभा ने दो रातों में कर दिखाया।

मुझे बच्चे चाहिए, जो मुझे उसी से मिलेंगे।'

'यह क़ानूनन जुर्म है।'

'याद है शारदा, यही मैंने कहा था, जब तुमने पहली बार प्रभा से शादी की बात कही थी।'

'एक म्यान में दो तलवारें, यह नहीं हो सकेगा।'

अब प्रभा भी कमरे में आ चुकी थी। वह बोली, 'क्यों नहीं हो सकेगा। यह हो गया है। दीदी, म्यान तो तुमने उसी दिन उधेड़ दी थी, जब तुमने स्वयं अपने पति को विवाह के लिए सौंपा था। रजत अब हम दोनों के पति हैं, यही हक़ीक़त है।' रजत ने विवाद को निपटाया, 'सुनो शारदा! हम तीनों अगर प्यार से एक साथ रहना चाहें तो रह सकते हैं। हाँ, यदि तुम अपने और अपनी बहन के पति को भेजना चाहो, तो बना लो क़ानून को मध्यस्थ!'

प्रभा ने एक बेटे को जन्म दिया। नाम रखा गया रंजन। सभी उसे प्यार से रिंकु बुलाते थे। शारदा तो उसे बेहद प्यार करती थी। वह उसे अपनी बहन का नहीं, अपना ही बेटा समझती थी। पर बदले में उसे क्या मिला?

रजत का आश्वासन कि वे तीनों प्यार के साथ एक साथ रह लेंगे एक ढकोसला था। प्रभा अब रजत के बेडरूम तक पहुँच गई थी। शारदा को एक दूसरा कमरा मिल गया था। दोनों का अपने अपने स्थान से हटना असंभव था। शारदा तो परिवार के हाशिये पर एक अस्तित्व भर थी... एक प्रश्न चिह्न!

दोनों बहनें अब बहनें न रहकर सौतनें बन गई थीं और सौतनों जैसे ही थे उनके झगड़े। एक प्रिय पत्नी थी, माँ थी। दूसरी थी एक आया, एक गवर्नेस... और कभी-कभी एक दूसरी औरत!

शारदा अपना अपमान, तिरस्कार सहती रही... और सहती भी रहती, पर उस दिन उसकी सगी बहन ने उसके बाँझपन को गाली दे डाली। दोनों के बीच किसी बात पर झगड़ा हुआ था। शारदा ने झुँझला कर कहा, 'आग लेने आई और...'

प्रभा ने बात काटी, 'हाँ, हूँ मैं घर वाली। दीदी, आग तो तुम लेती आई हो। इस जगह को घर तो मैं ने बनाया है, परिवार दिया है और परिवार बढ़ाऊँगी भी। तुम कर सकती हो यह सब?'

शारदा रात भर तकिया भिगोती रही। अगले दिन उसने घर छोड़ दिया।

शारदा के कॉलेज के दिनों की सहेली थी, शैलजा। देहली एयरपोर्ट से टैक्सी लेकर वह सीधी उसके घर पहुँची।

'तुम अचानक यहाँ?'

'विपदा बनकर आ खड़ी हुई हूँ।'

'क्यों, क्या हुआ।'

'पति, घर सब छोड़ आई हूँ। लम्बी कहानी है। बाद में बताऊँगी।'

शारदा की लम्बी कहानी में एक ही तो शब्द था-बाँझपन! उसने यह कहानी शैलजा को सुनाई और शैलजा ने अपने पति नरेश को।

नरेश ने शारदा की हर तरह से सहायता की। उसने उसके लिए एक कमरे का प्रबंध करवाया और फिर अपनी सिफ़ारिश से एक कंपनी में अच्छी नौकरी भी दिलवा दी। उसके कमरे में टेलिफ़ोन भी लगवा दिया। आसान किश्तों पर टी.वी. लगवा दिया और कई छोटे-मोटे काम कर दिए। नरेश की सहायता से वह एक बार फिर स्थापित हो सकी।

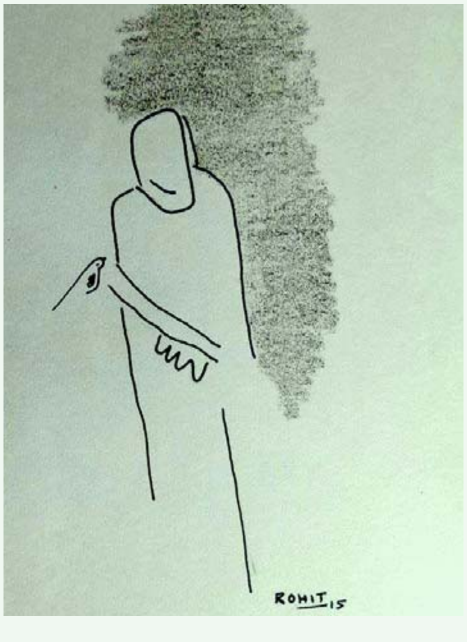

अब तीनों में घनिष्टता काफ़ी बढ़ चुकी थी और फ़ालतू समय में वे तीनों एक साथ होते-कभी शैलजा के यहाँ तो कभी शारदा के कमरे में। आज तीनों को एक साथ फ़िल्म देखने जाना था। एडवांस बुकिंग हो चुकी थी। रात नौ बजे का शो था, पर नरेश तो छह बजे ही पहुँच गया था--अकेला और नशे में! उसने तय कर लिया था कि आज शारदा से वसूली का दिन है।

गर्मियों के दिन थे। शारदा अभी नहाकर निकली थी। उसने केश संवारे। कपड़े बदले। अभी मेकअप कर रही थी, जब नरेश ने द्वार खटखटाया।

'जीजाजी, अभी तो छह ही बजे हैं। बस पाँच मिनट और लूँगी।' वह फिर से दर्पण की ओर बढ़ी मगर पहुँच नहीं पाई। नरेश ने उसे अपने बाहु-पाश में जकड़ लिया।

'तुम्हारे हज़ार काम किए हैं मैंने। एक ज़रा सा मेरा काम भी कर दो।' उसने शारदा के होंठों पर होंठ रख दिए। बड़ी मुश्किल से वह अपने को छुड़ा सकी। उसके नाख़ून काम आए। नरेश के चेहरे पर खरोंचें डालकर उसने हज़ार शिकायतें लिख दीं। वह फिर भी उसकी ओर बढ़ा।

'तुम सुंदर... जवान... अकेली... और मज़े की बात, बाँझ भी! ज़िन्दगी भर ऐश कर सकते हैं।' नरेश आगे बढ़ता रहा। वह पीछे हटती रही... पीछे और पीछे।

फिर वह चिल्लाई, 'बाँझपन मेरी मजबूरी है, जुर्म नहीं। तुम मर्द लोग बार-बार इसे 'जुर्म' बना सज़ा देते हो... अपने-अपने अंदाज़ में! एक ने सुहाग सेज से दुत्कार फेंका। दूसरा कहता है बाँझ हो, रखैल बन जाओ।'

'हाँ, मैं सुंदर हूँ... जवान हूँ... अकेली हूँ... और बाँझ भी। पर गली की नुक्कड़ में जलाई गई जाड़े की आग नहीं हूँ मैं... कोई भी आकर ताप ले।'

अब वह दरवाज़े की ओर उसे धकेलती हुई चिल्लाई, 'यू गेट आउट। दफ़ा हो जाओ। अभी, इसी वक़्त।'

वह जाने को हुआ।

'रुको,' वह चिल्लाई, 'अपने मुँह से लिपस्टिक पोंछो।' नरेश ने होंठ पोंछ लिए। पर चपत लगे गाल की लाली वह न पोंछ सका... और निकल गया।

❐

गॉड ब्लैस यू ...

डॉ. वंदना मुकेश

यू के की डॉ. वंदना मुकेश हिन्दी में पी.एँचडी हैं। 'नौंवे दशक का हिंदी निबंध साहित्य एक विवेचन'-प्रकाशित शोध प्रबंध है। विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं और साहित्यिक पुस्तकों, वेब पत्र-पत्रिकाओं में विविध विषयों पर कविताएँ, संस्मरण, समीक्षाएँ, लेख, एवं शोध-पत्र प्रकाशित। भारत एवं ब्रिटेन में विभिन्न साहित्यिक-सांस्कृतिक कार्यक्रमों और कवि-सम्मेलनों का संयोजन-संचालन करती हैं। भारत एवं इंग्लैंड में अनेक राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय शोध संगोष्ठियों में प्रपत्र वाचन, सहभाग और कई सम्मानों से सम्मानित वंदना जी केम्ब्रिज विश्वविद्यालय से जुड़ी हैं और इंग्लैंड में अध्यापन के साथ-साथ स्वतंत्र लेखक हैं। बी.बी.सी. वैस्ट मिडलैंड, आकाशवाणी पुणे से काव्य-पाठ एवं वार्ताएँ प्रसारित।

संपर्क-68 Meadow Brook Road, Northfield,Birmingham B31 1ND

फ़ोन-0044-121-4757565

vandanamsharma@hotmail.co.uk

क्या वह बीमार था? कैसे हुई होगी उसकी मौत? क्या वह उस समय अकेला होगा? क्या उसने मुझे भी याद किया होगा? ऐरन, उसके कुत्ते का क्या हुआ होगा!

उससे मेरी मुलाकात, सेंट्रल लायब्रेरी में अचानक ही हो गई। मैं इंग्लैंड में तब नई-नई आई थी। बच्चों के स्कूल, और पति के नौकरी पर जाने के बाद मेरे पास समय ही समय था। सो, मैं बरमिंघम शहर से पहचान करने के ख़्याल से अकसर निकल पड़ती थी। यहाँ आने पर यह भी पता चला कि जैसे भारत में आम आदमी, सूर, तुलसी, निराला, दिनकर को नहीं जानता, वैसे ही यहाँ भी आम आदमी शेक्सपियर, वर्डवर्थ, टी. एस इलियट, जी.बी. शॉ को नहीं जानता। वैसे मैं तो चाहती थी कि किसी से पढ़ी-लिखी अँग्रेज़ महिला से दोस्ती हो जाए तो कम से कम यहाँ की भाषा को बेहतर समझने के साथ-साथ यहाँ की संस्कृति की प्रामाणिक जानकारी जुटा सकती हूँ, लेकिन अचानक तो दोस्ती नहीं होती। वैसे, अंग्रेज़ी बिना बोले भी, अकसर मुस्कराकर काम चल जाता था। बड़े-बड़े सुपर-स्टोरों में बिना बोले ही लाखों की खरीदी की जा सकती थी। पैसे देते वक्त भी एक मुसकराहट और कार्ड का पिन नंबर याद रखने भर से काम चल जाता था। सुधीर ने तो मेरे साथ अंग्रेज़ी न बोलने की कसम खा रखी थी। बच्चे दोनों भाषाओं का प्रयोग कर रहे थे। मुझे लगा, मेरी भाषा खत्म, हिंदी भी और अंग्रेज़ी भी।

हाँ, तो उस दिन मैं लायब्रेरी में बड़े ध्यान से अंग्रेज़ी के प्रसिद्ध कवि पी.बी, शैली की पुस्तक ढूँढ़ रही थी। पुस्तक नहीं मिली तो वहीं बैठकर कुछ और पढ़ने बैठ गई। देखा, सामने टेबल पर 'पोएम्स बाय पी.बी. शैली' उलटी रखी थी। शायद कोई पढ़ रहा था, लेकिन आस-पास कोई दिखा नहीं। मैं अभी सोच ही रही थी कि सिगरेट का एक तेज़ भभका नाक में ऐसा घुसा कि आँखों से पानी आ गया। फौरन रूमाल से आँखे पोंछी, खोलीं तो देखा, एक दरम्याने क़द का मोटा-सा अंग्रेज़ एक हाथ में कॉफ़ी का

बड़ा-सा गिलास लिए आया, उसने कॉफ़ी टेबल पर रख दी और किताब खोल ली। अब मैंने उसे और ध्यान से देखा। वह गंजा था लेकिन कानों के ऊपर घुँघराले, गहरे भूरे बाल कंधों तक लंबे लटक रहे थे। आँखों पर सुनहरे रंग का, मोटा-सा, चौकोर फ्रेम का चश्मा चढ़ा था। एक हाथ में सोने का, एक मोटी जंजीर जैसा ब्रेसलेट और दूसरे हाथ में राडो की काले रंग की घड़ी। उसने झकझकी सफ़ेद कमीज़ पहन रखी थी, लाल-सफ़ेद धारियोंवाली नीले रंग की चौड़ी-सी टाई। काले-नीले रंग का चौखाने की डिज़ाइन का ब्लेज़र। निश्चित ही किसी संभ्रांत परिवार का होगा। न जाने क्यों, उसे देखकर मुझे लगा कि महाकवि वर्डवर्थ ऐसे ही दिखते होंगे। वह बड़ी गंभीरता से कुछ पढ़ता और साथ में कुछ लिखता भी जाता। मुझे लगा, ज़रूर यह कोई अंग्रेज़ी का प्राध्यापक है। उससे बात करने का मन तो हुआ, लेकिन वह इस कदर गंभीरता से पढ़ रहा था कि व्यवधान डालना उचित न लगा। मैंने सोचा, शैली की कविताएँ फिर कभी ले जाऊँगी। लायब्रेरी तो अकसर आना-जाना लगा रहता है।

****

एक दिन सुधीर के एक दोस्त आनंद ने साहित्य में मेरी रुचि जानकर मुझसे पूछा,'सुमि, मैं और शोभना एक काव्य-गोष्ठी में जा रहे हैं। चलोगी?'

मैंने पूछा,' अंग्रेज़ी में।'

वह बोला, 'नहीं संस्कृत में। हम हँस पड़े।'

'कहाँ?'

'यहाँ फाइव वेज़ के पास ही एक चर्च में।'

'हाँ, जरूर, कब है ?'

'शनिवार, दोपहर तीन बजे।'

'बच गए, यार हम तो, हमारा तो मैच है।', सुधीर मुझे चिढ़ाने के लिए एकदम उछलते हुए बोले।

शनिवार-शाम को किसी के घर पर निमंत्रण था। सो, यह तय हुआ कि सुधीर और बच्चे गोष्ठी खत्म होने पर मुझे लेने चर्च आ जाएँगे। उस दिन मौसम बहुत ही खूबसूरत था। धूप खिली थी। ठंड का नाम नहीं। सोचा, साड़ी पहनी जाए। एक पल भी सोचा नहीं, साड़ियों का सूटकेस खोला, तो सबसे ऊपर ही गुलाबी रंग की, चिकन की कुढ़ाईवाली, लखनवी साड़ी रखी थी। वही निकाली, पहनने सँभालने में भी सरल। साड़ी पहनकर मन को भी बड़ा अच्छा लगा।

फाइव-वे के पास टैस्को के पीछे यूनीटैरियन चर्च के एक हाल में जाते हुए मुझे बड़ा अटपटा-सा लग रहा था। हाल के बाहर काव्य-गोष्ठी का सूचना पट्ट रखा था। भवन में घुसते ही एक पल के लिए मैं बौखला गई। वहाँ करीब बीस-पच्चीस गोलाकर सजी कुर्सियों पर बैठे थे, मैं किसी को भी नहीं जानती थी। मैं भी चुपचाप जाकर एक खाली कुर्सी पर बैठ गई। दोबारा एक नज़र दौड़ाने पर एक चेहरे पर मेरी नज़र टिक गई। दिमाग पर ज़ोर डाला, अरे यह तो वही था जो पिछले महीने सेंट्रल लायब्रेरी में मिला था। तभी उस आदमी ने बिल्ली पर एक रचना पढ़ी, उसे मैंने अतिरिक्त ध्यान से सुना। लेकिन कुछ विशेष समझ में नहीं आया। आनंद, जिसने मुझे बुलाया था, वह नहीं दिखा, मुझे गुस्सा आया। थोड़ी देर में आनंद और शोभना आते दिखाई दिये। वे मुझसे काफ़ी दूर, सामने की तरफ़ बैठ गए। अन्य सभी लोगों ने भी अपनी-अपनी कविताएँ पढ़ीं कुछ समझ में आईं, कुछ नहीं। गोष्ठी की समाप्ति पर अगली गोष्ठी की सूचना देते हुए उस आदमी ने परचे बाँटे। उसका नाम शायद हंफ्री था। परचे पर छपा था-एपल एंड मिरर पोइट्री ग्रुप, नीचे अन्य जानकारी के साथ पता भी था। उसे बिना पढ़े ही मैंने अपने बैग में रख लिया। गोष्ठी खत्म होने पर आनंद और शोभना सहित बाकी लोग भी सबसे हैलो-हाय करते हुए गले मिले। चाय के दौरान, हंफ्री खुद मेरे पास आया और बोला-'हैलो, मेरा नाम हंफ्री डिक्सन है।'

'मैं सुमि, सुमि मेहरा।'

'क्या गुलाबी तुम्हारा पसंदीदा रंग है।' उसने मेरी साड़ी को देखते हुए पूछा।

'हाँ, लेकिन............तुम्हें कैसे.......

मेरी बात को लगभग बीच में ही काटते हुआ हंफ्री बोला, 'तुम लायब्रेरी में भी गुलाबी कमीज़ पहने थीं।'

मैं एकदम अचकचा गई। मुझे आश्चर्य हुआ कि उसे भी न सिर्फ़ यह याद था कि उसने मुझे लायब्रेरी में देखा था, बल्कि यह भी कि मैंने किस रंग के कपड़े पहने थे। इसका मतलब यह पढ़ने का बहाना कर रहा था।

मैंने तुरंत विषय बदलते हुए उसे काव्य-पाठ करने के लिए बधाई दी। उसने फटाक से मुझे फ़ोटोकॉपी पकड़ा दी। मैंने एक नज़र डालकर, रचना में आए बिंबों के प्रयोग और अन्य विशेषताओं की ओर इंगित किया। उसे अच्छा लगा मेरा विश्लेषण सुनकर। एक-दो अँग्रेज़ महिलाएँ और पुरुष, जो निकट ही खड़े थे, आश्चर्य और प्रसन्नता मिश्रित भाव लिए मेरे निकट आकर मुझसे बातें करने लगे। कोई अंग्रेज़ी का शिक्षक था, कोई कवि। मुझे वहाँ अच्छा लगा। मैंने मन में सोचा कि इन लोगों से मिलते-जुलते रहने से मेरी बौद्धिक आवश्यकता की पूर्ति हो सकती है। इनसे दोस्ती करना मेरे लिए बहुत अच्छा रहेगा, मैं इन लोगों से मिलती रहूँगी।

आनंद, हंफ्री को जानता था हंफ्री ने मुझे, आनंद और शोभना को अगली काव्य-गोष्ठी में आने के लिए निमंत्रण दिया। अगली गोष्ठी उसके घर पर थी। मैंने उसे कहा, 'आनंद और शोभना ले आएँगे तो आऊँगी।'

हम तीनों साथ-साथ बाहर निकले। हंफ्री हाथ मिलाते हुए बोला, 'मुझे भी निकलना होगा। ऐरन को अकेले तीन घंटे से ज़्यादा हो गए हैं।' वह अपनी छतरी हिलाता हुआ तेज़ कदमों से निकल गया।

उसके जाते ही आनंद बोला, 'बड़ा पैसेवाला है। इसने ज़िंदगी में कभी काम नहीं किया। कवि है। बड़ा चेंटू है। जब-तब फ़ोन करता है। मैं तो इसका फ़ोन ही नहीं उठाता अब! तुम भी बचकर रहना। यह तो अकेला है यार, अपन तो बाल-बच्चेदार हैं। .....और हाँ पता है, ऐरन कौन है? मेरे बगैर पूछे ही वह बोलता रहा, इसका कुत्ता! कम से कम साढ़े तीन फुट ऊँचाई है। वह भी बड़ी किस्मतवाला है।...'

'तुम लोग जाओगे इसके यहाँ ?' मैंने आनंद और शोभना से पूछा।

आनंद अपने मस्तमौला अंदाज़ में हँसते हुए बोला, 'एक दर्जन कविताओं का डोज़ सात-आठ महीने के लिए काफ़ी है। मैं तो उसके घर हो आया अब तुम भी तो जाओ।'

सुधीर की गाड़ी आती दिखी, मैं भी बाय कर के निकल ली।

****

लगभग एक माह बाद हंफ्री का फ़ोन काव्य-गोष्ठी में बुलाने के लिए आया।

'तुम बहुत खूबसूरत हो।'

एकबारगी समझ में नहीं आया कि क्या जवाब दूँ, लेकिन फिर अपने परिचितों से सुना था कि

अँग्रेज़ लोग अकसर बातचीत का सिलसिला इसी तरह शुरु करते है तो मैंने सकुचाते हुए कहा,' धन्यवाद' कहकर बात खत्म करना चाही।

'उस दिन तुम गुलाबी साड़ी में परी की तरह लग रहीं थी।'

मैं कुछ असहज हो गई लेकिन शिष्टतावश कह दिया, 'सुंदरता देखनेवाले की आँखों में होती है।'

'तुम आओगी न?'

कुछ सोच पाती उसके पहले ही मुँह से 'हाँ' निकल चुका था।

मैं गोष्ठी में जाना चाहती थी, लेकिन अकेले नहीं। सो मान-मनौवल कर सुधीर को तैयार किया। न जाने क्या सोचकर मैंने शिफ़ॉन की सुनहरी ज़रीवाली गुलाबी साड़ी पहनी। नियत समय पर हम उसके घर पँहुचे। उसने दरवाज़ा खोला तो सिगरेट का एक तेज़ भभका हमारी नाकों में घुसा। ऐसा लगा कि यहीं से वापस हो जाएँ। लेकिन शिष्टाचार कुछ और कहता है, सो हम भीतर घुस गए। ऐसा लगा मानो, विक्टोरियन युग में पँहुच गए। बत्ती जलने के बाद भी अंधकार-सा था। अँधेरा ही अँधेरा। आँखें अभ्यस्त होते ही मैंने नारी स्वभाव के अनुरूप एक जायज़ा लिया। कमरे के बीचों-बीच छत से लटके एक गंदे भूरे रंग के लैंपशेड में एक बल्ब टिमटिमा रहा था और उस पर रोशनी से स्पष्ट दिखता, मकड़ी का एक जाला। छोटा-सा,चौरस कमरा। सामने की ओर कमरे के अनुपात में कुछ बड़े, दो बेडौल, बदरंगे सोफे आमने-सामने पड़े थे। जिनसे कमरा लगभग तीन-चौथाई घिरा हुआ था। उन सोफ़ों पर चढ़ा कपड़ा अँधेरे में भी एकदम गंदा दिख रहा था। हमारी तरफ़ पीठवाला सोफ़ा खाली था, जिसमें एक तरफ़ बैठने के कारण गड्ढा पड़ गया था। सामनेवाले सोफ़े पर दो आदमी पैर सिकोड़े बैठे थे, उन्हें मैंने पिछली गोष्ठी में देखा था। बीच में एक बड़ी-सी पुरानी टेबल थी। जिसपर ढेरों, जिल्द चढ़ीं किताबें बेतरतीब पड़ी हुई थी। ज़मीन पर एक निहायत ही भद्दे से रंग का कारपेट बिछा था। एक कोने में किताबों का एक और ढेर पड़ा था। दीवारें सिगरेट के धुएँ के कारण मटमैली हो चुकीं थीं। बदरंग दीवारें बड़ी मनहूस लग रही थीं। बाँयी तरफ की दीवार पर मोने की कोई पुरानी पेंटिंग थी, जिसके रंग और फ्रेम भी दीवारों की तरह बदरंग हो चुके थे। दाँयी

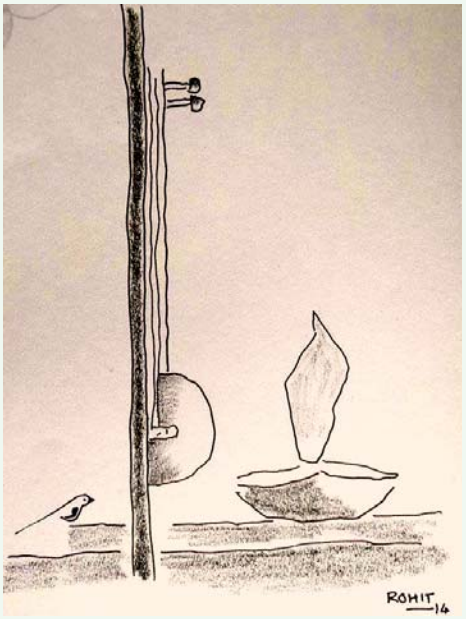

तरफ पूरी दीवार पर खिड़की थी। उस खिड़की पर हंफ्री और उसके कुत्ते ऐरन का एक पुराना सा फोटो रखा था। खिड़की के परदे भी अन्य चीज़ों की भाँति बदरंग और भद्दे थे। कमरे में मुश्किल से चलने भर की जगह थी। हमारी दायीं तरफ़ खिड़की के पास एक गंदा-सा स्टूल और एक छोटी टेबल पर एक बाबा आदम के ज़माने का टाइपरायटर रखा था।

अब हंफ्री को देखा, उसने एक पुराना, गंदा-सा ढीला-ढाला जीन्स और मटमैली सफेद कमीज़ पहन रखी थी। उसके ज़ेवर, यानी चश्मा घड़ी, ब्रेसलेट आदि यथास्थान नाक और कलाइयों पर थे। उसने हम सबका आपस में परिचय करवाया और सोफ़े की तरफ इशारा करते हुए हमें बैठने को कहा। सुधीर झट से छोटी टेबल के साथ रखे स्टूल पर बैठ गए और मुझे मजबूरन सोफ़े पर बैठना पड़ा। सोफ़ा एकदम चिक्कट, मैला। उफ़! मेरी धुली इस्त्री की हुई साड़ी..। उसने मुझे ड्रिंक के लिए पूछा। हर तरफ़ गंदगी का साम्राज्य देखकर, मैंने तो मना कर दिया। लेकिन सुधीर ने ऑरेंज जूस ले लिया। हे भगवान! मैं यहाँ क्यों आई, अब यह प्रश्न बेमानी था। सुधीर मेरे मनोभावों को पढ़ चुके थे। सो कविताएँ सुनी और जल्दी ही बच्चों का वास्ता देकर निकल लिए। 'कॉन्सन्ट्रेशन कैंप' की भयावहता अब जाकर समझ में आई। बाहर आकर हम दोनों ने ही खूब गहरी-गहरी साँसे लीं, स्वच्छ हवा के मिलते ही जी में जी आया। वरना थोड़ी देर भी और अंदर बैठते तो कम से कम मैं तो घुटन से मर ही जाती।

मुझे एकदम से आनंद पर गुस्सा आने लगा और मैं बोल पड़ी, 'ये आनंद भी न, जब इसे पता था तो बता नहीं सकता था। अभी जाकर फ़ोन करती हूँ, बदमाश!'

सुधीर शुद्ध हवा को फेफड़ों में भरपूर भरते हुए बोले, 'तुम जानती तो हो उसे...।'

****

फिर एक दिन हंफ्री ने धन्यवाद देने के लिए फ़ोन किया।

'तुम्हारे ऊपर गुलाबी रंग बहुत खिलता है। तुम उस दिन बहुत सुंदर लग रही थी।'

उसका यों खुलकर मेरी प्रशंसा करना मुझे अच्छा नहीं लगा। अगर मैं उसे कह देती तो शायद वह कभी मेरे रूप की इस कदर प्रशंसा नहीं करता। लेकिन हमारी दोस्ती पर प्रभाव पड़ता। मैं थोड़ा सावधान हो गई। खासतौर से, जब से आनंद और सुधीर मज़ाक में बोले, कि 'तुमने उसका विकेट गिरा दिया सुमि, वह तुम्हें चाहने लगा है!'

आनंद और शोभना के जाने के बाद मैंने इस बात पर सुधीर से काफ़ी लड़ाई की। सुधीर मेरी नाराज़गी को समझकर मनाते हुए बोले, 'अरे हम तो मज़ाक कर रहे थे।'

मैं और भी भड़क गई कि,'मुझसे इतना भद्दा मज़ाक करने की तुमने सोची भी कैसे?'

'वह मुझसे ऐसे कैसे प्यार कर सकता है। उसकी उमर तो देखो! मैं शादीशुदा दो बच्चों की माँ हूँ।'

'यार तुम इतनी सीरियस क्यों रही हो, छोड़ दो न, सुमि! इसके बारे में आनंद ने बताया है मुझे, हंफ्री बुरा आदमी नहीं है।' फिर एक गहरी साँस छोड़ते हुए बोले, 'बस अकेला है, बेचारा।' इनकी सोच, इनका समाज हमसे अलग है। पता है तुम्हें, आनंद कह रहा था कि उसके पास कोई आता-जाता तक नहीं। एक बहन है वह बहुत समृद्ध है। वह कोई रिश्ता नहीं रखना चाहती। इसने शादी नहीं की। जब पैसा था, तो लड़कियाँ भी मिल जाती थीं दोस्ती के लिए। लेकिन पैसा नहीं है, तो सब दूर भागते हैं। उसके घर का हाल देखा! बाप का पैसा कब तक चलता? मुझे नहीं लगता कि अब उसके पास कुछ भी बचा है। 'बेचारा.................' सुधीर उसके बारे में काफ़ी कुछ जानते थे।

अब पुन: उसके लिए मेरी दया का झरना झर-झर बहने लगा।

फिर उसने मुझे कई बार गोष्ठियों में अपने घर पर बुलाया लेकिन मैंने हर बार बच्चों का या सुधीर का कोई न कोई बहाना बना दिया। वह यह अच्छी तरह समझ गया कि मेरी ज़िन्दगी में मेरा परिवार ही मेरे लिए सबसे महत्त्वपूर्ण है। उसने मुझसे कभी-कभी फ़ोन पर बात करने की इजाज़त ली। वह बड़ी शिष्टता के साथ बात करता और हर बार परिवार के सब सदस्यों के विषय में पूछता और अंत में 'गॉड ब्लेस योर फैमिली' कहना न भूलता।

वह अकसर फ़ोन करने लगा। फ़ोन पर असंख्य विषयों पर बातें होतीं, जिसमें अकसर हिंदू धर्म, ईसाई धर्म, देश, परिवार अंग्रेज़ी साहित्य, राजनीति, संस्कृति ...आदि अनेक विषयों पर चर्चा होती थी।

फिर बहुत दिनों बाद एक बार उसने मुझसे पूछा 'तुम मेरे साथ बाहर खाना खाने चलोगी।'

'..............................' मैंने उसे टाल दिया। मैं दकियानूस तो नहीं थी। लेकिन मैं ऐसा कुछ नहीं करना चाहती थी कि जिससे उस की ग़लतफ़हमी और पुष्ट हो।

'ओह, क्षमा करना, हमारी संस्कृति भिन्न है लेकिन मैं तुम्हें पीड़ा नहीं पँहुचाना चाहता।' वह एकदम नरमी से बोला।

'तुम मुझसे नाराज़ तो नहीं हो न?'

'नहीं।'

बस ऐसे ही न जाने कितने फ़ोन। जब वह कोई नई कविता लिखता तो फ़ोन करके सुनाता। मैं भी ध्यान से सुनती, फिर उस पर चर्चा होती। यदि मैंने कुछ लिखा होता तो मैं भी उसे अपनी रचना का सार समझा देती। वह कभी-कभी कहता कि अकेलापन शाप है। मुझे तो सिर्फ़ इस बात से सुख मिलता था, मैं कभी-कभार उसका अकेलापन बाँट लेती हूँ। हमारी बात अकसर घर के टेलीफ़ोन पर ही होती थी। कभी मेरे बच्चे फ़ोन उठा लेते और शालीनतापूर्वक उसे रुकने के लिए कहकर जब मुझे बुलाते तो वह बच्चों की बहुत प्रशंसा करता, कहता कि तुम्हारे बच्चे बड़े शिष्टतापूर्वक बात करते हैं, आजकल ऐसे बच्चे दिखाई नहीं देते। कभी-कभी सुधीर भी उससे हाल-चाल पूछ लेते थे। उसे अच्छा लगता था। उसकी बातों से पता चलता था कि उसकी ज़िन्दगी डॉक्टर, ऐरन, चर्च और फ़ोन तक ही सीमित रह गई थी।

'सुमि, तुम्हें हंफ्री का मतलब पता है?'

'नहीं, क्या है?'

'शांतिप्रिय योद्धा'

'और ऐरन का अर्थ जानती हो?'

'नहीं।'

'जिसको ज्ञान प्राप्त हो गया हो, एनलाइटन्ड।'

'सुमि, उसका नाम मैंने रखा है।... पता नहीं, लेकिन मुझे ऐरन शांतिप्रिय योद्धा भी लगता है और एनलाईटेन्ड भी।' मैं तो बहुत बैचैन रहता हूँ। उसकी आवाज़ एकाएक गहरी बेबस उदासी से भर गई।

एक दिन फ़ोन पर उदास-सी आवाज़ आई, 'सुमि, तुम्हें पता है ऐरन को कैंसर है। अगर मुझे कुछ हो गया तो इसे कौन देखेगा?'

****

'सुनो सुमि, मुझे तेज़ फ्लू हो रहा है घर में कुछ खाने को नहीं है, क्या तुम बाज़ार से मेरे लिए कुछ सामान ला दोगी? मैंने खरीदनेवाले सामान की सूची तैयार रखी है, लेकिन मुझे बुखार है, जा नहीं सकता।'

मैंने कहा, 'ज़रूर।'

'मैं अपना जन्मदिन नहीं मनाता अब।'

सो मैं उसके जन्मदिन पर एक केक, बिस्किट के डिब्बे और सेव-संतरे लेकर उसके घर चली गई। घंटी बजाने पर उसने खिड़की में से झाँका। वह, मेरे अचानक पँहुचने से बहुत गद्गद् हो गया था। उसने दरवाज़ा खोला। सिगरेट के अपेक्षित भभके को नज़रअंदाज़ करते हुए मैंने उसे हाथ मिलाकर जन्मदिन की बधाई दी तो उसने अंग्रेज़ी

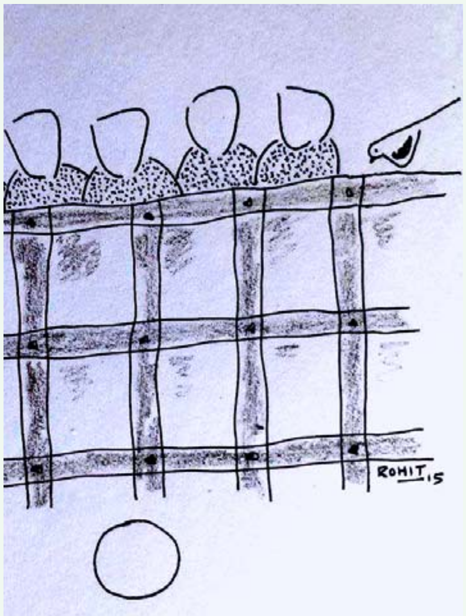

तहज़ीब के अनुरूप सहज कृतज्ञता के भाव से मेरे गाल पर एक हल्का-सा चुंबन देते हुए धन्यवाद कहा। उसका मुँह इतना करीब होने के कारण सिगरेट का धुआँ मेरी आँखों में भर गया और गंध दिमाग में। एक तो अप्रत्याशित, दूसरे दुर्गंध! न चाहते हुए भी चेहरे पर शिकन आ ही गई। जब उसने मेरा चेहरा देखा तो उसे समझने में देर न लगी कि मुझे उसका यों मुझे चुंबन लेना अच्छा नहीं लगा। जिस तेज़ी से उसने मेरे चेहरे के भाव पढ़े उसी तेज़ी से मैंने उसके ग्लानि-भरे भावों का अनुभव किया। जिसके कारण मैं स्वयं भी अपराध-बोध से भर गई। उसने तो वही किया था जो अंग्रेज़ों में एक सामान्य शिष्टाचार था। उसके बाद मैं दस मिनट बैठी तो सही, लेकिन बातचीत में सहजता का अभाव और अनजाना-सा तनाव व्याप गया। मैं जानती थी, वह हमारी मित्रता का सम्मान करता था। उस अकस्मात्, अनपेक्षित चुंबन और सिगरेट की दुर्गंध के कारण मेरे चेहरे पर उभर आए घबराहट और घृणा के मिले-जुले भावों को देखकर वह भी बुरी तरह घबरा गया था। मैं फौरन ही यह बहाना बनाकर निकल पड़ी, कि बच्चों के स्कूल जाना है। मेरा यह झूठ भी उसकी अनुभवी नज़रों से छिपा नहीं रहा। उसने मुझे रोका नहीं।

सुधीर को बताया तो उनके प्रतिक्रियाहीन व्यवहार से ऐसा नहीं लगा कि वे मेरी मानसिक स्थिति को समझ पाए। मैंने सोचा यदि ज़्यादा चर्चा करूँगी, तो मुझे ही दोषी ठहरा दिया जाएगा कि तुम्हीं दया की देवी बनती हो...। लेकिन मेरा मस्तिष्क उस घटना से उबर नहीं पाया था। निरंतर विचार चल रहे थे कि क्या कभी पुरुष नारी को समझ सकता है, पुरुष छोड़ो! पति, जिसके साथ बारह साल से रह रही हूँ वह भी ...? कैसी अजीब बात है साथ-साथ रहते हुए भी हम एक दूसरे को नहीं जानते। पति-पत्नी, माँ-बाप, भाई-बहन कोई भी किसी को नहीं जानता। सब अजनबी हैं एक दूसरे के लिए। फिर खुद ही समाधान हो गया कि वह तो वास्तव में अजनबी है। उससे अपेक्षा क्यों? न हमारी भाषा एक, न परिवेश। मैं फिर हंफ्री के प्रति नरम पड़ गई।

****

तीन-चार दिन कोई फ़ोन नहीं आया। फिर एक शाम फ़ोन बजने पर फ़ोन सुधीर ने उठाया और हंफ्री का फ़ोन था। हैलो के आदान-प्रदान के

बाद फ़ोन सीधा मुझे पकड़ा दिया।

'क्या तुम अब भी मुझसे नाराज़ हो?'

'क्या तुम मुझे माफ़ नहीं करोगी?'

'नहीं............. माफ़ी जैसी कोई बात नहीं है।' मैंने सहज भाव से कहा।

'क्या हम दोस्त बने रह सकते हैं?'

'ज़रूर...'

'धन्यवाद, गॉड ब्लेस योर फ़ैमिली।'

स्पष्ट रूप से वह मुझे खोना नहीं चाहता था। उसका अकेलापन... उसकी सरलता, उसके प्रति मुझे सहानुभूति, दया का भाव उमड़ने लगा। मैं जानती थी कि वह निरापद है। सिर्फ़ अपने अकेलेपन से लड़ने के लिए वह मुझे फ़ोन करता था। मैं यह भी जानती थी कि मन के किसी कोने में वह मुझसे प्यार करता है। लेकिन इस बात का पूरा प्रयास करता था कि मैं उसकी किसी बात से आहत न हो जाऊँ। पहले हुए वाकये से वह अतिरिक्त सजग रहता था। बात-चीत के दौरान वह बार-बार मुझसे पूछता था कि क्या यह बात तुम्हारे यहाँ शिष्ट मानी जाती है। इसका अर्थ क्या होता है... इत्यादि। मैं उसका दिल नहीं तोड़ सकती थी। हमारी मित्रता फ़ोन-मित्रता ही अधिक थी। लेकिन मैं उसके स्वर से उसके मूड का अंदाज़ लगा लेती थी और उन विषयों पर बात करती थी जिससे उसे अच्छा लगे। अकसर ईसाई धर्म पर ढेर बातें होती थी। दरअसल वह बोलता और मैं बीच-बीच में उसकी बात पर सहमति-असहमति जताती चलती थी। एक अच्छे श्रोता की तरह।

****

गर्मियों के दिन थे। एक दिन फ़ोन पर कुछ खोई-खोई सी आवाज़ में वह मुझसे आग्रहपूर्वक बोला, 'सुमि, मैं तुम्हारे साथ एक बार हारबोर्न के सेंट पीटर्स चर्च में चलना चाहता हूँ। मैं कुछ बोल पाती उसके पहले फिर अपने वाक्य को सुधारते हुए बोला, 'तुम अपने पति और बच्चों को भी साथ ला सकती हो, इन दिनों वह चर्च बड़ा खूबसूरत लगता है। वहाँ हर समय एक अद्भुत शांति रहती है, मन को एक अनोखा सुकून मिलाता है। तुम मेरे साथ जरूर चलना एक बार।'

मैंने उसे विश्वास दिलाते हुए कहा, 'ज़रूर हंफ्री, मैं ज़रूर आऊँगी तुम्हारे साथ।'

****

'सुमि, आज मैं बहुत खुश हूँ। मैं डेट पर जा रहा हूँ इस शनिवार, आने पर बताऊँगा।' फ़ोन पर उसकी चहकती हुई आवाज़ आई।

'नहीं सुमि,...... वह मेरी तरह की नहीं थी। मुझे..... कोई.... तुम्हारी तरह की लड़की चाहिए, उसे साहित्य में कोई रुचि नहीं थी। वह तो बस मेरा पैसा और घर चाहती थी।...........'

****

उस साल छुट्टियों में हम लोग भारत चले गए। आते ही बच्चों का स्कूल। मैं भी एक नर्सिंग होम में स्वयंसेवी की तरह शाम को एक घंटे के लिए वहाँ रहनेवाले बुज़ुर्गों से मिलने जाने लगी। वहाँ काम करते हुए बड़ी शिद्दत से यह महसूस हुआ कि वास्तव में ही अकेलापन शाप है और अकेलेपन से भरा बुढ़ापा उससे भी बड़ा। यहाँ मैंने बहुत कुछ सीखा। मैंने अनुभव किया कि मेरे मन में एक कोना हंफ्री के लिए भी था।

दो-तीन बार हंफ्री को फ़ोन किया। वह नहीं था सो आन्सरिंग मशीन पर संदेश छोड़ दिया। जब-जब उसने फ़ोन किया तो हम नहीं थे, उसने भी मैसेज छोड़ा। मैं बच्चों से पूछ रही थी कि कोई संदेश तो नहीं है फ़ोन पर और वे एक-दूसरे को 'गॉड ब्लेस' कहते हुए हँस रहे थे। मैंने डाँटा, तो बोले, 'मम्मा मिस्टर डिक्सन को फोन कर लेना।' फिर मैंने फ़ोन किया लेकिन हमारी बातचीत का योग नहीं बना। हम एक-दूसरे के लिए संदेश छोड़कर ही समाचार लेते रहे। वह हर संदेश में कहता था कि उसके लिए हमारी यह मित्रता बहुत ही कीमती है। उसके हर संदेश का अंत 'गॉड ब्लेस यू एंड योर फैमिली' की दुआ से होता था।

मैं काफ़ी व्यस्त हो गई। इधर काफ़ी दिनों से हंफ्री का फ़ोन भी नहीं आया था। फरवरी का महीना था, उसका साठवाँ जन्मदिन आ रहा था। हमारी मित्रता को भी पाँच साल हो रहे थे।नर्सिंग होम के काम ने मेरी संवेदना को झकझोर के रख दिया था। मैं अकसर हंफ्री के बारे में सोचा करती कि कैसे अकेलापन उसकी मजबूरी बन गया है। वह और भी ज़्यादा अंतर्मुखी हो गया था। उसके फ़ोन-संदेशों का यही सार था।

इस बार मैंने फिर उसे सरप्राइज़ देने की सोची, सोचा कि उसके जन्मदिन पर उसके लिए छोले-पूड़ी ले जाऊँगी। मैंने कार्ड खरीदा। उसे खुश देखने का ख्याल लुभावना था। उस दिन उसका जन्मदिन था। मैंने कार्ड पर लिखा, 'मेरे सबसे अच्छे दोस्त के लिए' बच्चों और सुधीर से भी सुबह ही लिखवा लिया था। एक गिफ्ट बैग में अच्छी तरह रैप कर के एक बुकमार्क और बिस्किट रखे। फिर बस का डे-टिकिट लिया और बस में बैठ गई। वहाँ समाचार पत्र पड़ा था सो पढ़ने के लिए उठा लिया। ऑबिच्युरी का पन्ना खुला था। उस पन्ने पर पहली सूचना हंफ्री डिक्सन के देहांत की थी। उसका स्वर्गवास तीन सप्ताह पूर्व हो चुका था। मुझे यकीन नहीं हुआ। मुझे एक गहरा धक्का लगा। मैं बार बार-खबर पढ़ती, पता देखती कि कोई और होगा, लेकिन सारे अक्षर गड्ड-मड्ड हो गये। जब यकीन हो गया कि खबर मेरे कवि मित्र हंफ्री की ही थी तो मुझे समझ ही नहीं आया कि मैं क्या करूँ। फ्यूनरल सर्विस हारबोर्न के उसी चर्च में थी जहाँ वह अक्सर मुझे ले जाने की बात करता था। उसे वह चर्च बहुत अच्छा और शांतिदायक लगता था। उसका अंतिम संस्कार अगले दिन सॉमरसेट में था, केवल करीबी रिश्तेदारों के लिए। क्या उसकी वह नकचढ़ी बहन आएगी उसके अंतिम संस्कार में ? ऐरन का क्या हुआ होगा? क्या वह जीवित था या उसे डॉक्टर ने पहले ही उसे मौत की नींद का इंजेक्शन दे दिया होगा? क्या उसने मुझे याद किया होगा? मेरा बस-स्टॉप निकल चुका था। मैं बहुत भारी मन से घर लौटनेवाली बस में बैठ गई।

****

मैंने कभी सोचा नहीं था कि मेरे कान उसके फ़ोन के लिए, उसकी 'गॉड ब्लेस यू एंड योर फैमिली' की दुआ सुनने के लिए तरस जाएँगे। मैंने सोचा न था कि हंफ्री के जाने के बाद में हारबोर्न के उस चर्च में अपने परिवार के साथ जाकर उसके लिए मोमबत्ती जलाऊँगी। मैंने यह भी नहीं सोचा था कि मैं हारबोर्न के उस चर्च में, बिना कारण, आते-जाते रुक जाया करूँगी। मैंने यह भी नहीं सोचा था कि उसके लिए मोमबत्ती लगाते हुए दो आँसू मेरी आँखों की कोर से चुपचाप टपक जाएँगे। लेकिन मुझे खुशी है कि मैंने अपनी दोस्ती पूरी ईमानदारी से निभाई। मैं जब भी चर्च जाती हूँ तो मन के किसी कोने में उसे याद करते हुए यह ज़रूर कहती हूँ कि हंफ्री मैंने अपना वादा निभाया और मुझे कानों में कहीं से उसकी मुस्कराती हुई आवाज़ आती है 'गॉड ब्लेस यू एंड योर फैमिली' और मेरे चेहरे पर मुस्कान फैल जाती है। ❐

रस्म-ए-इजरा

भूमिका द्विवेदी अश्क

भूमिका द्विवेदी अश्क,
एम.ए.(अंग्रेज़ीसाहित्य), इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
एम.ए.(तुलनात्मक साहित्य), इलाहाबाद विश्वविद्यालय और दिल्ली विश्वविद्यालय से एम.फ़िल.हैं। भूमिका जी की कहानियाँ, रचनाएँ, साक्षात्कार, लेखादि कई पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं। 'The Last Truth' अंग्रेजी भाषा में अनूदित पुस्तक है। उपन्यास 'आसमानी चादर', और कविता संग्रह 'अपराधबोध' प्रकाशनाधीन है।
bhumika.jnu@gmail.com

फ्रांसिसी दूतावास के एक सरकारी सुइट-हॉल में दोनों जमे हुए हैं। लोगों का आना ढंग से शुरू भी नहीं हुआ है, लेकिन ड्रामेबाजी का आगाज़ अभी से हो चुका है। अंग्रेज़ियत से बुरी तरह से लिपे-पुते दो-तीन चेहरे दुनिया भर की अंग्रेज़ी को एक दूसरे पर उड़ेले पड़े हैं, जैसे वे ये जानते ही ना हो कि हिन्दी किस चिड़िया का नाम है। सबसे मज़ेदार बात तो ये थी, कि थे वो असल में सारे हिन्दोस्तानी ही।

'कैसी अजीब सी वीरानी टाइप पसरी है, जैसे किसी की मय्यत में आए हों। आर यू श्योर, यहाँ किताब का ही लोकार्पण है आज?' सुरूर का सबसे बड़ा दोष उसकी अधीरता ही तो है। ठीक उसी तरह नवाब का सबसे बड़ा गुण उसका धैर्य है, 'हाँ, मेरी दुलारी सुरूर, किताब का ही लोकार्पण है आज.. देख लो, मैं गलत क्यों कहूँगा तुमसे, लो कार्ड में ही देख लो।'

'चलो मान लेते हैं कि ये किताब का विमोचन ही है, लेकिन ये जो मुर्गे आपस में चोंच लड़ा रहे हैं, क्या इसी में कोई बिज्जू है?' उन्हीं तीनों को देखते हुए सुरूर ने नवाब से कहा।

'अब क्या पता कौन है, बिज्जू ? शर्मा जी (संपादक) तो कह रहे थे, कई बार फ़ोन आया है, आज चले ज़रूर जाना.. पता नहीं किसलिए इतना फ़ोन आया था।'

'क्या तुम्हें ये भी नहीं पता कि बिज्जू नर या मादा?' इतना कहते-कहते सुरूर खिलखिलाकर हँस पड़ी। उसकी हँसी की तेज़ आवाज़ सुनकर वे तीन आपस में लिप्त हुए बन्दे भी सुरूर को तिरछी निगाह से देखने लगे।

नवाब और भी संजीदा हो गया, 'नहीं। नाम से तो पता ही नहीं चल रहा है। बिज्जू महाजन। मराठी है कोई। सरनेम से इतना ही मालूम चलता है, बस।'

अब इतनी देर में ही, जो संख्या में तीन थे, वो पाँच में तब्दील हो चुके थे। दो नए आगन्तुक एक महिला और एक पुरुष थे। लेकिन 'बिज्जू' नाम की गुत्थी अब तक सुलझी नहीं थी।

इस अजायबघर जैसे फ़ंक्शन-हॉल में ये विचरने वाले विचित्र जीव चाहे मन में जितनी भी गालियाँ और बददुआयें एक दूसरे को देते फ़िर रहे हों, लेकिन फ़िर भी सभी एक दूसरे की तरफ़ देखकर बड़ी लगावट से मुस्कुराते ज़रूर थे। अब तक कुल मिलाकर करीब सत्ताईस एकदम ही बनावटी स्माइल सुरूर और नवाब के लिये भी फ़ेंकी जा चुकी थी। नवाब तो इन स्माइलों का कुछ भी जवाब नहीं देता था, लेकिन सुरूर ज़रूर दुगुनी बनावटी मुस्कान के रूप में उत्तर तत्काल गति से देने में तनिक नहीं चूक रही थी, बल्कि ज़्यादा चहक कर दाँत निपोर रही थी।

वे दोनों पूरे हॉल में अलग से नज़र आ रहे थे, क्योंकि एक तो खाली पड़े सोफ़ों में वे बैठे अकेले ही थे, दूसरे वे सबसे आगे बैठे थे, और तीसरे कि उनका किसी से भी बड़ा लाग-लपेट वाला संवाद नहीं था। वे दोनों आपस में ही सबकी बारीक़ आलोचना में आकंठ मशगूल थे।

अब एक खूब लकदक गहनों से लैस बुढ़िया उन दोनों के ठीक पीछे आकर बैठ गई, जिसका चित्र यदि खींचा जाए तो निस्सन्देह किसी सम्पन्न लेकिन भूखी लोमड़ी जैसा बनेगा। जो समय-समय पर हर आनेवाले को भरपूर पैनी निगाह से देखती थी, कि उस आगन्तुक से ये बुढ़िया क्या लाभ ले सकती है। वो बात-व्यवहार में बुरी तरह से चौकन्ना थी, और चाँव-चाँव, चपड़-चपड़ करने में खूब उस्तादिन थी। उसके अभिवादन का तरीका भी निहायत ही विलायती था, सबसे गाल चिपका-चिपका कर 'हैलो-हैलो' कर रही थी। उसके साथ उसकी एक अनुचरी भी थी, जो लोमड़ी के बचे हुए शिकार पर हाथ साफ़ करती-सी आभासित हो रही थी। दोनों ने मोटी-मोटी सच्चे मोती की दमदार कीमती मालाएँ भी धारण कर रखी थीं। वैसे तो ये लोमड़ी मतलब की बूढ़ी महिला सत्तर-पछत्तर से अधिक की नहीं दिखती थी, लेकिन कार्यक्रम के दौरान स्टेज से बताया गया कि वो नब्बे साल की है। जिसे उसकी इसी पली हुई अनुचरी ने 'नो.... नाइन्टी वन्न..' की ज़ोरदार आवाज़ से सुधारा भी था।

एक मसाला-महिला भी नवाब की बगल में आकर बैठी। जिसकी नोकदार नाक और मन-भर काजल से एकाकार की गई उसकी आँखें उसे हूबहू एक मादा-कौए जैसी छवि प्रदान कर रहे थे.. उसे भी वहाँ शायद जानने वाले कुछेक ही थे, इसलिए वो मादा-कौआ लगी नवाब से चिपकने, 'यू आर फ्रौम विच पेपर?'

'आइ एम अ फ्रीलांसर', नवाब ने उसे बेहद कम शब्दों में निपटा दिया।

चतुर मादा-कौआ बेहद होशियार थी, फ़ौरन समझ गई यहाँ दाल नहीं गलेगी, वो चिढ़ गई, और उठकर नए नीड़ की तलाश में अगली कतार की एक सीट पर जा बैठी।

अब दो नए गिद्ध-दंपती ने सभा-मंडल में प्रवेश किया। दोनों ने बूढ़ी-महिला की प्रेम से चुम्मा ले-देकर अभिवादन की औपचारिकता पूरी

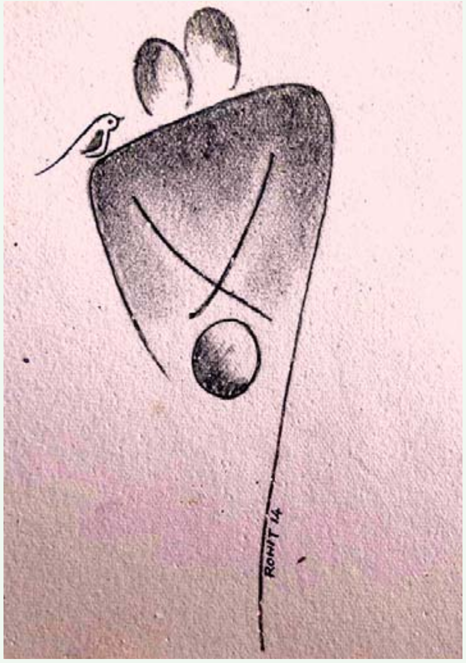

की फ़िर अपने नए हमजोली किरदारों की ओर रुख किया। अभी ये कुनबा एक दूसरे की जड़ें खोदना शुरु भी न कर सका था, कि एक फ्रेन्च-फ़ेलो स्टेज पर आ धमका.. लेकिन वो मौजूदा सत्र का आगाज़ करने नहीं वो तो सिर्फ़ माइक और साउन्ड चेक करने ही आया था और वो चेक करके चला भी गया। सभी प्राणियों की निगाह जो उस पर तैनात हुई थी वापस अपने अपनों के गिरेबानों पर लौट आई। इनमें से ही किसी का बच्चा भी साथ था, जिसे ये बोझिल माहौल चुभ रहा था। यहाँ उसका कोई संगी-साथी भी नहीं था, और वो जी-भर के शैतानी भी नहीं कर पा रहा था। उसकी आया उसे हर वक़्त सहेज रही थी, जैसे रईस घर के कुत्ते पलते हों, ठीक उसी तरह। लेकिन वो बच्चा बहुत नटखट था। जब उसका जी ज़्यादा अकुलाया तो वो कुर्सियों पर चढ़-चढ़ कर कूदने लगा। और इस कुर्सी-तोड़ मिशन में कई कुर्सियाँ गिर पड़ीं, जिसे एम्बेसी के कर्मचारियों ने फ़िर से सजाया।

'ये औलाद है कि फ़ौलाद...' सुरूर ने नवाब से बुदबुदाया।

नवाब ने चुप रहने का इशारा किया।

फ़िर एक के बाद एक कोई बहेलिये टाइप के, तो कोई बहेलिये के ताज़ा शिकार के माफ़िक, कोई ऊदबिलाव तो कोई घाघ परिवार का-सा, कोई मगरमच्छ और घड़ियाल बिरादरी का-सा, तो कोई कबूतर जैसे उड़ते-उड़ते दल से जैसे ताल्लुक़ रखने वाले भिन्न-भिन्न प्रजाति के प्राणी जैसे लोगों से वो पूरा का पूरा सभा-मण्डल जगमगाने लगा। और इस सम्पूर्ण अजायबघर की बेहद बनावट आभा वाली जगमगाहट में दोनों नवाब और सुरूर का जी घबराने लगा। दोनों स्वच्छंद परिंदे थे। दिल्ली शहर की चौड़ी सड़कों पर इधर-उधर ख़बरें बटोरते घूमते फ़िरते थे। अल्लाह का करम था, कि दोनों दो रोटी और उस पर मक्खन भर का कमा ही लेते थे।

दोनों बड़े बाप की औलादें थीं.. जोर-बाग में अपना मकान था। दोनों एक ही प्रेस में रोज़गारयाफ़्ता थे। माँ-बाप ने दोनों का निकाह तय कर दिया था, और उन दोनों फ़ौलादी औलादों ने निकाह से पहले ही साथ रहना शुरु भी कर दिया था। भई दिल्ली और दिल्ली-वालों के क्या कहने.. उनकी तो हर बात निराली..

किसी छोटे शहर में तो ऐसा सोचना और वो भी मुस्लिम बिरादरी में.. ना भई ना.. वहाँ तो इसकी कल्पना करना भी गुनाह था, वे दोनों, अपने मकान के चारों तरफ़ के मोहल्लों में दिन-भर घूमते और ख़बरें जुगाड़ कर प्रेस में दे देते थे। आज भी एक किताब के विमोचन की ख़बर को कवर करने आए थे, और दोनों आकर फ्रेंच-एम्बेसी में बैठे थे, और दोनों ही उबिया रहे थे।

औपचारिक रूप से प्रोग्राम शुरू हो गया जिसे करीब एक घण्टा तक तो सुरूर सुनती रही, लेकिन भाषण जब लम्बा खिंचने लगा तब, सुरूर ने नवाब से कहा, 'क्या हम लोग ऐसे ही इन विचित्र प्राणियों से लैस इस जगमग-जगमग हॉल में अपना दम घुटाते रहेंगे। और इस खड़ूस को सुनते रहेंगे, कितना ऊँघ-ऊँघ कर बोल रहा है...... जाओ, ज़रा खाने का इंतज़ाम देखो, ठीक-ठाक हो तो रुकें, वरना तो भाई वक़्त रहते ही यहाँ से फूट लें.. नहीं खानेवाली भी चली जाएगी..।'

'हाँ, कह तो ठीक ही रही हो, लेकिन कैसे उठ के जाऊँ बीच में...।'

'ऐसा करो, वॉशरूम के बहाने हॉल से बाहर निकलो, और पूरे में एक फ़ेरा लगा के आओ.. तभी देख लेना क्या पोज़ीशन है खाने-पीने की... ओके।'

'हम्म,' नवाब चुपचाप उठ कर हॉल से बाहर खिसका।

करीब पाँच-सात मिनट में लौट आया।

अति जिज्ञासु बैठी सुरूर के कान में फुसफुसाया, 'वेटर टहलते तो दिख रहे हैं, शायद खाना ठीक

ठाक होगा।'

'किधर है इन्तज़ामात। क्या पहले चल सकते हैं.. भूख लगी है मुझे..।' सुरूर ने भी बहुत धीरे से नवाब के कान में कहा।

'मुझे मालूम नहीं कि व्यवस्था किस तरफ़ की गई है। थोड़ा देखना पड़ेगा। मेरी समझ से, अभी मत चलो। रुको थोड़ा..।'

'ओके।'

भाषण-बाजी अपने शबाब पर थी। अब तक सुरूर और नवाब जान चुके थे, कि किताब को लिखने वाली शक्स, यानी बिज्जू एक महिला ही है और साड़ी पहने सामने ही मंच पर जमी हुई है। उसका उस फ्रांसिसी राजदूत से 'पुराना याराना' लगता था। दोनों ने खूब-खूब सार्वजनिक-प्रेम भी जताया था। वास्तविक और व्यक्तिगत प्रेम का तो भगवान ही जाने। उस महिला ने बिना बाँह की ब्लाउज़ के साथ एक रेशमी साड़ी पहन रखी थी, जिसके आँचल को वो बार-बार हवा में जानबूझ कर, लेकिन अन्जान बनकर लहरा रही थी। वो अपने सुडौल कन्धों का प्रदर्शन भी बड़ी ही तबीयत से कर रही थी। उसका दिया, हर एक जवाब बड़ा लम्बा और खीज पैदा करने वाला था। क्योंकि वो किताब खोलकर उसके अंशों को पूरा-पूरा पढ़ रही थी। और वहाँ बैठे हरेक शक़्स का वक़्त बड़े इत्मीनान से ज़ाया कर रही थी।

बोझिल स्त्री जिसकी प्रेमिका होती है, उसी को सुहाती है, बाक़ी तो उससे कटने का हरसम्भव प्रयास करते हैं, कि कहीं वो रोककर काट ना खाए या कि पूरा भेजा चाट ही ना ले.. अब जैसे इन बिज्जू महाजन को ही ले लिया जाए, इनका आँचल हो सकता है, उस फ्रांसिसी दूत को प्रेम के सुनहरे-सजीले पयाम दे रहा हो, लेकिन भूखी बैठी सुरूर को भला उसके रेशमी आँचल या गोरे कन्धों से क्या वास्ता। अगर बिज्जू सही तरीके से पत्रकारों के सवालों के जवाब देती तो भी सुरूर का भूखा पेट उसे माफ़ कर जाता लेकिन यहाँ तो हद ही हो गई थी। सुरूर ने ये भी देखा कि सबसे पीछे कतार में बैठे लोग, एक-एक कर धीरे-धीरे बाहर खिसक रहे हैं। सुरूर को अब ये आगे की सीट मानो काट खाये जा रही हो। वो कई-कई कोण के मुँह बनाकर नवाब को देख रही थी, जिसका एकमात्र सन्देश यही निकल रहा था, कि 'अब बहुत हुआ, चलो बाहर चलें.. कुछ खायें.. कुछ पियें..।'

नवाब तमीज़ों और औपचारिकताओं के मद्देनज़र, खामोश बैठा बकझक सुने जा रहा था। उसके पास तो जैसे कोई और चारा ही ना था। आख़िरकार वो ठहरा संजीदा पत्रकार।

लेकिन जब वार्तालाप में कोई सार्थकता ना हो, सिर्फ़ अहम-तुष्टि के लिए मंच से क़सीदे पढ़े और पढ़वाये जाएँ, तो कोई गंभीर श्रोता भी अन्ततः चट ही जाएगा और मन-मस्तिष्क को बेवजह तकलीफ़ नहीं देना चाहेगा।

आखिरकार नवाब के धीरज ने भी जवाब दे डाला, और वो भी सुरूर का साथ पकड़े, बाहर गार्डेन में आ गया, जहाँ खाने-पीने की व्यवस्था की गई थी। कार्यक्रम भी अब समापन पर था। सुरूर शैतानी से बाज नहीं आई, उसने अपनी सीट छोड़ते-छोड़ते बगल की कुर्सी पर रखी एक किताब उठा ली। किताब की तमाम प्रतियाँ यूँ तो कई ख़ास मेहमानों को बतौर तोहफ़ा दी गई थी, लेकिन पत्रकारों के लिए ऐसी कोई व्यवस्था नहीं थी।

पत्रकार एक ऐसा ओहदा है, जो चाहे समाज में, राजनीति में, बल्कि पूरी दुनिया में ही कितनी ही बड़ी भूमिका अदा करने के लिए क्यूँ ना रचा गया हो, और भले ही कितना भी ज़िम्मेदार क्यों ना हो, लेकिन बना दरअस्ल सिर्फ़ ठोकर खाने के लिए ही है। इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता कि, मजीठिया आयोग का गठन कर दिया जाए, चाहे सुप्रीम कोर्ट कोई भी आदेश पारित कर दे, लेकिन जज़्बे वाला, मेहनती और ईमानदार पत्रकार हमेशा धूल ही फ़ाँकता है। ये बात अलग है, कि जागरूक-

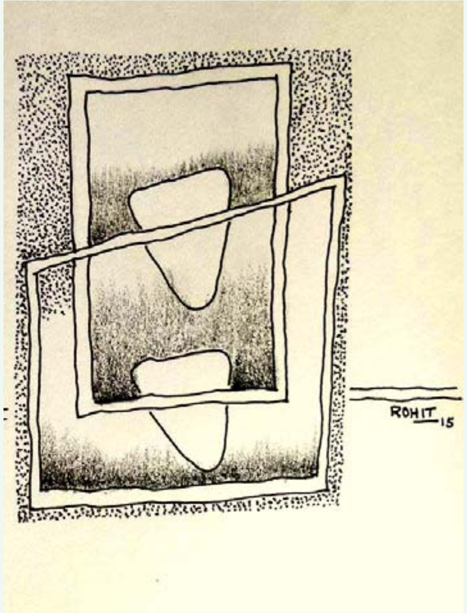

समाज और सार्थक-पाठक ऐसे पत्रकारों की दिल से क़द्र करता है। इसे नियति या विधि का विधान चाहे जो भी नाम दे दें, लेकिन ये बात है सौ फ़ीसदी सच। हाँ, यहाँ हरामी-टाइप के अय्याश और बॉस या किसी टुच्चे नेता की मक्खन-पॉलिश करके बारम्बार प्रोमोशन लेने वालों या फ़ॉरेन-स्टोरी ही कवर करने वाले तथाकथित समाचार-विशेषज्ञ-एंकरों की चर्चा नहीं हो रही है।

ख़ैर, सुरूर ने अपने हिस्से की किताब की प्रति मार ली थी, और खाने के लिये दोनों ही गार्डेन पहुँच चुके थे। नवाब और नवाबिन यानी कि सुरूर दोनों ही भूखे थे, और दोनों ही खाने की दशा देखकर बेहद हताश-निराश और दुःखी हुए। एक तरह से तो दोनों झुँझला ही गए थे। क्योंकि पीने का इन्तज़ाम तो वहाँ चौचक था, लेकिन खाने में महज 'चखने' और 'नमकीन' के कुछ था नहीं।

जिसमें दुनिया भर के बिस्किट, सूखे तले मेवे और मूँगफलियाँ, पनीर, मशरूम और मछलिओं के तले हुए बहुत छोटे-छोटे टुकड़े और इन सबके साथ हर तरह की विलायती चटनियों के सिवा कुछ ना था। ये तो ढंग का 'स्नैक्स' भी नहीं था; जिसे पर्याप्त मात्रा में पेट में डाल देने से डकार की उम्मीद की जा सके। इन सारे नामुराद व्यंजनों को देख-देख कर दोनों का जी जल गया।

वहाँ माहौल के अनुसार ही ढले, वेटर भी और ज़्यादा कुढ़ाने के लिए कुछ ज़्यादा ही तीमारदार बने हुए थे। इन सेवा-भाव से ओत-प्रोत वेटर की फ़ौज, हाथ में ट्रे लिए बार-बार पूरे गार्डन के चक्कर लगा रही थी। उनके इन फेरों, में कई परिक्रमाएँ सुरूर और नवाब की भी हो गई थीं। दोनों ने कुढ़ते हुए लेमन-जूस के ग्लास हाथ में ले लिये। खाने की जो दुर्गति थी, सो तो थी.. लेकिन पीने की व्यवस्था और पीने वाले दोनों ही शानदार और जानदार दिखाई दे रहे थे। औरत मर्द जम के पी रहे थे, गोया कोई प्रतियोगिता चल रही हो पीने-पिलाने की। कुछ पीकर बहक गए, तो कुछ बेमतलब ही चहक रहे थे। अल्लाह का शुक्र था कि कोई गिरा-पड़ा नहीं, उन नकली इन्सानों में। दरअस्ल वो ज़िन्दगी में ही पर्याप्त गिरे हुए थे। तो भला अब यहाँ क्या गिरते.. उन रंगे हुए सियारों में, जिनका कला-साहित्य की समझ से दूर-दूर तक कोई वास्तविक-राबता नहीं था। हो सकता है, उनमें कुछ अपवाद हों, लेकिन ज़्यादातर एक ही थाली

के चट्टे-बट्टे दिख रहे थे।

नवाब और सुरूर, दोनों आपस में ही भुनभुनाने लगे..

'बेकार ही चले आए यहाँ, इन नासपीटों के बीच...

अब तो बिट्टी भी चली गई होगी घर पे लटका ताला देखकर.. इतना पेट्रोल फूँका सो अलग.. कितना बज गया है देखो तो ज़रा, चलो किसी ढाबे की ओर ही चलें, भूखे सोने से तो वही बेहतर है।'

फिर रज़ामन्दी से दोनों बाहर जाने के लिए तत्पर हुए। जाने से पहले नवाब दोनों ग्लास रखने जिस मेज़ तक पहुँचा, वहाँ उस किताब, जिसका नाम 'ओवरफ़्लो' था, जिसका कि आज विमोचन हुआ था, उसी की दो प्रतियाँ लावारिस-अवस्था में लापरवाही से पड़ी हुई थीं। जिन्हें नवाब ने बड़ी ज़िम्मेदारी से पूरी शालीनता का परिचय देते हुये समेट लीं।

अपने मेज़बानों से त्वरित-औपचारिक विदा लेकर, दोनों बाहर चाणक्यपुरी की खुली शानदार सड़कों पर निकल आए। गाड़ी में, जब सुरूर ने अपनी वाली को मिलाकर, तीन-तीन किताबों की प्रति देखा तो उचक कर कहा, 'अरे गुरु जी कहाँ से.......?'

'बस वहीं से, जहाँ से तुमने उड़ाईं...।'

'चलो, ख़ैर उस मनहूस जगह को याद रखने का एक बहाना रहेगा। पढूँगी तो क्या ख़ाक मैं इसे..।'

'तो अब तुम नाराज़ तो नहीं.. कि मैं इस बेकार जगह तुम्हें ले आया था....।'

'नहीं जी.. रात गई, बात गई। मनहूसों की ये सौगात मिली...।'और सुरूर खिलखिला कर हँसने लगी।

सुरूर की बुलन्द हँसी देखकर नवाब भी खिल गया, उसकी उदासी जाती रही। उसने पूछा, 'खाने का क्या सोचा है मोहतरमा?'

'चलो किसी अच्छी जगह चलते हैं।'

'अशोका चलें?'

'श्योर...'

'एम्बेसी का मातम फ़ाइव-स्टार में ही मनाना चाहिए..।'

नवाब पंचशील-मार्ग से आगे बढ़ गया, न्याय-मार्ग से घुमाकर यशवंत-प्लेस पर गाड़ी रोकी। एक बार सुरूर से पूछा, 'डिनर-टाइम खत्म ना हो गया हो अशोका का? देखो तो काफ़ी देर हो गई है.. चाइनीज़ का कोई विचार तो नहीं?'

'नहीं... चाइनीज़-वाइनीज़ चीनियों को ही खाने दो..।'

दोनों गोल-चक्कर लाँघकर, अशोका होटेल की पार्किंग से सीधा, डाइनिंग-हॉल पहुँचे। नवाब का अन्देशा सही साबित हुआ, डिनर वास्तव में खत्म हो चुका था।

अब दोनों जल्दी-जल्दी अशोका होटल के सबसे नीचे फ़्लोर पर बने सागर-रत्न रेस्तराँ में पहुँचे, वहाँ भी समेटा-समेटी चल ही रही थी, कि नवाब ने जल्दी से, लपककर काउन्टर तक जाकर ऑर्डर दे आया।

दोनों ने दक्षिण-भारतीय भोजन से पेट और दिल खूब भर लिया। और 'बिज्जू' को जी भर के कोसा भी। इसके बाद दोनों थके हुए जीव अपने घर को लौट गए।

और इस तरह इन दो स्वतंत्र पत्रकारों के माध्यम से फ्रांसिसी दूतावास के अजायबघर से निकलकर 'सागर-रत्न' में रस्म-ए-इजरा यानी की पुस्तक के विमोचन की सारी रस्में, सारी प्रक्रियाएँ पूरी की गईं

❐

SAI SEWA CANADA

(A Registered Canadian Charity)

Address: 2750,14th Avenue,Suite 201,Markham,ON ,LEROB6
Phone : (905)944-0370 Fax : (905) 944-0372
Charity Number : 81980 4857 RR0001

Helping To Uplift Economically and Socially Deprived Illiterate Masses Of India

Thank You For You Kind Donation to Sai Sewa Canada.Your Generous Contribution Will Help The Needy and the Oppressed to win The Battle Against. Lack of Education And Shelter, Disease Ignorance And Despair.

Your Official Receipt for Income Tax Purposes Is Enclosed
Thank You , Once Again, For Supporting This Noble Cause And For Your Anticipated Continuous Support.

Sincerely Yours,
Narinder Lal
416-391-4545

Service To Humanity

लघुकथा

आख़िरी पड़ाव का सफर

सुकेश साहनी

'चल जीणें जोगिए!' ताँगे वाले ने घोड़ी को सम्बोधित कर कहा और घोड़ी धीमी रफ़्तार से सड़क पर दौड़ने लगी। सड़क पर बिल्कुल सन्नाटा था। बाज़ार पूरी तरह बंद हो चुका था। आज चौंतीस साल की नौकरी के बाद वह सेवामुक्त हो गया था। विदाई समारोह से वह अपने कुछ खास साथियों के साथ 'बार' में चला गया था और करीब चार-पाँच घण्टों की 'सिटिंग' के बाद अब तांगे पर बैठा घर लौट रहा था। 'लेकिन आज हर तरफ इतना अँधेरा क्यों है?' उसने सोचा। पहले भी कई बार वह इतनी देर करके लौटा है पर... इतना...अँधेरा! अभी वह इस विषय में सोच ही रहा था कि उसे लगा, वह अकेला नहीं है। उसने गौर से देखा। चेहरा बिल्कुल पहचाना हुआ था। कौन है... नाम क्या है? वह सोच में पड़ गया। अबकी उसने आँखें फाड़कर काफी नज़दीक से देखा। वो अजनबी मुस्करा रहा था-

'पहचाना?' एकाएक अजनबी ने उससे पूछ लिया।

'अ...ह... हाँ, क्यों नहीं!... क्यों नहीं!' वह हड़बड़ा गया। आवाज़ भी तो बिल्कुल पहचानी हुई थी।

'शुक्र है!' वह व्यंग्य से मुस्कराया।

'क्या मतलब?' वह हैरानी में पड़ गया।

'शुक्र है कि तुमने मुझे आज पहचान तो लिया। इससे पहले मैंने कई बार तुम्हें पीछे से आवाज़ दी, तुम अनसुनी कर निकल गए। मैं कई बार जान-बूझकर तुम्हारे सामने पड़ा, तुम कन्नी काटकर निकल गए। दरअसल तब तुम्हारे पास मुझसे मिलने का वक्त ही नहीं था, पर अब मेरे सिवा...'

'ऐसा कैसे हो सकता है?' वह असमंजस में पड़कर बुदबुदाया।

'खैर... छोड़ो, आज बहुत उदास क्यों हो?'

'नहीं तो... आज तो मैं बहुत खुश हूँ। मैंने अपनी ज़िन्दगी के चौंतीस साल जनता की सेवा में सफलतापूर्वक बिताए हैं। मैं बहुत संतुष्ट हूँ।'

'जनता की सेवा!' वह हँसने लगा-'कितना खूबसूरत झूठ बोल लेते हो!'

'क्या बकते हो?'गुस्से से उसका दिमाग भन्नाने लगा था।

'मैं सच कह रहा हूँ... याद करो... चौंतीस साल तक अपना मेज़ के नीचे फैला हुआ हाथ!... इतने ही बरसों तक पल-पल अपनी कुर्सी पर उठक-बैठक लगाते तुम!... जी साब... हाँ साहब...ही...ही...ही... पहुँचा दूँगा साहब... चिन्ता न करें साहब... मैं 'वो' कर लूँगा हुज़ूर!... एडजस्ट हो जाएगा साहब... जी हुज़ूर! जी! जी हाँ...जी हाँ..जी...जी... इन्हीं बातों का घमण्ड था तुम्हें!'

'यह मेरा अपमान है !' उसने गुस्से से चिल्लाकर कहना चाहा, पर आवाज़ गले से बाहर नहीं निकली। कपड़ों के भीतर वह ठण्डे पसीने से नहा गया था।

एकाएक ताँगे वाला चुटकी बजाते हुए ऊँची आवाज़ में गाने लगा था, 'ओ बल्ले-बल्ले नी हौले-हौले जांण वालिए... ओ..' वह बुरी तरह चौंक पड़ा। वह तांगे पर बिल्कुल अकेला था और बेहद डरा हुआ भी। उसे अपनी कमज़ोरी पर बेहद हैरानी हुई। उसने काँपते हाथों से सिगरेट सुलगाई और सोचने लगा 'आज हर तरफ़ इतना अँधेरा क्यों है, यह ताँगे वाला इतना उदासी भरा गीत क्यों गा रहा है...'

❐

भीतर की आग

डॉ. सतीशराज पुष्करणा

पत्रकारिता में डिप्लोमा प्राप्त करने के बाद सुदीप 'दैनिक सुमार्ग' में नौकरी मिलने पर बड़ा उत्साहित था। वह सोचने लगा कि जान लगाकर पत्रकार होने का दायित्व निभाऊँगा।

उसे एक मर्डर केस की रिपोर्टिंग का कार्य सौंपा गया और वह जुट गया केस की गहराई तक पहुँचने में। आशातीत सफलता मिलने पर वह मन-ही-मन बहुत खुश था कि यह रिपोर्ट छपते ही वह पत्रकारिता जगत् में छा जाएगा।

बड़ी लगन से उसने फोटुओं सहित रिपोर्ट तैयार की और पहुँच गया सम्पादक के कक्ष में-'सर ! ये उस मर्डर केस की फाइनल रिपोर्ट !'

'वाह ! बड़े स्मार्ट हो, बहुत तेज़ी से सौंपा गया काम पूरा कर दिखाया तुमने।' यह सुन वह फूला नहीं समाया।

'ठीक है सुदीप ! तुम समाचार-संपादक से अगला काम पूछ लो।'

सम्पादक ने जिज्ञासा-भाव लिये फोटो देखे। रिपोर्ट पढ़ने लगा। वह जैसे-जैसे रिपोर्ट पढ़ता जा रहा था भीतर-ही-भीतर परेशान-सा होता जा रहा था। ...... यह लड़का खुद भी मरेगा और हमें भी मरवायेगा। अखबार को तो साला ले ही डूबेगा। ये सब सोचते हुए उसका हाथ घंटी के बटन पर चला गया।

चपरासी के घुसते ही, 'अरे! वो जो नया लड़का सुदीप आया है न, उसे बुला लाओ।'

चपरासी से संपादक का आदेश सुनते ही सुदीप एक बार पुनः उत्साह से भर उठा .... सर ! पीठ तो जरूर थपथपाएँगे। यह सोचते-सोचते संपादक के कक्ष में प्रवेश किया। इससे पूर्व कि सुदीप कुछ कहता सम्पादक ने कहना शुरू किया, 'अरे! ऐसी रिपोर्ट छपने का परिणाम जानते हो? तुम्हारा, हमारा और इस पूरे अखबार का अंत। जिन लोगों की तुमने पोल खोली है, जानते हो ये लोग कौन हैं, अरे ये राज्य के बड़े माफ़िया राधे सिंह के आदमी हैं। इनकी पैठ राज्य से केन्द्रीय नेताओं तक हैं।'

'तो इससे क्या ? हमने वही लिखा जो सच था, प्रमाण आप देख ही रहे हैं।'

'पर क्या ?'

'तुम्हें इतना कष्ट करने की ज़रूरत नहीं थी। पुलिस से मिलकर उससे रिपोर्ट ले लेते ...।'

'सर ! पत्रकारिता तो पुलिस के समानांतर खोज करके सच को लाना है, मैंने वही किया है।'सुदीप थोड़ा उत्तेजित-सा हो उठा।

'देखो ! जो तुमने पढ़ा था, वह आदर्श था, अब जो तुम्हें करना उसमें व्यावहारिक होना है।'

वह क्रोध का भाव लिये बिना कुछ कहे संपादक के सामने से रिपोर्ट एवं फोटो उठाकर कार्यालय से बाहर निकल आया। इस वक़्त वह स्वयं अपने भीतर की आग से जल रहा था।

उसने निर्णय लिया कि वह पत्रकारिता में उसी राह पर चलेगा जो उसने पढ़ा है..... यह अखबार नहीं तो कोई दूसरा या फिर तीसरा सही.........।

❐

एक थी माया

गरिमा श्रीवास्तव

सन् 2014 के मई महीने का अंत होने में तीन दिन शेष हैं और वेक फ़ारेस्ट विश्वविद्यालय, विंस्टन-सेलम, नॉर्थ कैरोलाइना के फैकल्टी क्वार्टर की पीली दीवारों पर सुबह के सूरज की किरणें चमकने लगी हैं। घने पेड़ों के झुरमुट को बेंधकर किरणें मई के महीने में जल्दी ही धरती पर आ जाती हैं-पेड़ों की हरियाली पत्तियाँ सूरज की धूप से पीली-सुनहली दिखने लगी हैं। पीले घर के भीतर थोड़ी हलचल है, यह माया एंजेलो की काया-संघर्ष, मेहनत, दु:ख, रोग-शोक, मान-अपमान, उपेक्षा, थकान को छियासी बरस से सहती चली आई काया की विदा का क्षण है। माया एंजेलो जो बचपन में थी मार्गरीटा जॉनसन, प्यारे भाई बेली ने जिसे नाम दिया माया- कमरा पचास से अधिक मानद उपाधियों, ढेरों राष्ट्रीय -अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कारों से सजा हुआ है, जीवन के उत्तरार्ध में अत्यंत लोकप्रिय अध्यापिका के रूप में विख्यात होकर भी अपनी 'निजता' में बिल्कुल अकेली ही हमेशा के लिए मौन हो गई थी। ऊपर से सबसे हँसने-बोलने, बतियाने वाली माया कब अकेली और भीतर से चुप नहीं थी। तब भी तो चुप्पी ही उसका आवरण बनी थी जब सौतेले पिता फ्रीमैन ने उसका यौन शोषण किया था। सन् 1928 में चार अप्रैल को जन्मी मार्गरीटा ने तीन वर्ष की उम्र में माता-पिता का सम्बन्ध-विच्छेद देखा फ्रीमैन के दुर्व्यवहार के बारे में मामाओं को बताने का नतीजा निकला-माँ के प्रेमी की हत्या, जिसके लिए वह स्वयं को ही दोषी मानती रही, बड़ी होने पर भी हमेशा सोचती -न वह मुँह खोलती, न फ्रीमैन मरता। बेली और मार्गरिटा के पालन-पोषण की ज़िम्मेदारी आन पड़ी दादी श्रीमती हेंडरसन पर, जो पेट पालने के लिए परचून की दुकान चलाती और श्वेत प्रभुओं के घर इन मासूम बच्चों से सामान भिजवाया करती। काली, दुबली, कमज़ोर मार्गरीटा ने यहीं पर 'ओ छोकरी, 'काली लड़की' के उपेक्षापूर्ण सम्बोधन सुने। सात वर्ष की भोली मासूस लड़की जानने लगी कि अश्वेत और काली लड़की होने के अर्थ क्या हैं और इससे भी ज़्यादा कि निर्धन होना कितना दुर्भाग्यपूर्ण होता है ? इन अपमानजनक संबोधनों पर प्रतिक्रिया देने का अर्थ था-दादी से मार खाना। दरअसल से ये सम्बोधन उसके 'ब्लैक' होने की नियति से जुड़े थे,जिसे स्वीकार करना विवशता थी -

जब मैं अपने बारे में सोचती हूँ / तो अपने आप पर हँसते-हँसते लगभग मर ही जाती हूँ / एक बड़ा मज़ाक है मेरी ज़िन्दगी / नृत्य की तरह जिसमें सिर्फ कदमताल ही की गई / या कोई गीत जिसे सपाटता से बोला गया हो / मैं खुद को लेकर, इतना अधिक हँसती हूँ / कि साँसें रुकने लगती हैं मेरी / जब सोचती हूँ अपने बारे में / लोगों के इस संसार में साठ साल/ जिसके लिए मैं काम करती हूँ / वे मुझे

के. वि. वि. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, हैदराबाद
केन्द्रीय विश्विद्यालय
हैदराबाद- 500046
drsgarima@gmail.com
फ़ोन 8985708041

बच्ची कहकर पुकारती हैं / और मैं अपनी नौकरी के लिए उसे 'जी मैम– 'जी मैम कहती हूँ / इतनी स्वाभिमानी हूँ कि झुकना मुश्किल / इतनी गरीब हूँ कि टूटना मुश्किल / हँसते–हँसते पेट में बल पड़ जाते हैं मेरे / जब सोचती हूँ अपने बारे में।

अपने ऊपर हँस सकने की क्षमता हासिल करने का साहस माया को बचपन में ही जुटाना पड़ा। बच्ची माया की शिकायत की सुनवाई के लिए कोई न्यायालय था, न कोई वकील, बस में यात्रा करती माया को दूसरे अश्वेतों की तरह हमेशा पिछली सीट मिलती, जहाँ कंडक्टर पास आ सट कर खड़ा होता ताकि अपने कड़े अंग से माया को छू सके, कसमसाती माया अपने आप में सिमट जाया करती, सुनेगा कौन काली लड़की की कभी ख़त्म न होने वाली पीड़ाएँ। उधर अपमान और उपेक्षा सहकर भी दादी का श्वेत ख़रीदारों के प्रति विनम्रता प्रदर्शन और सबसे बढ़कर बूढ़ी दादी की अनथक मेहनत करने की प्रवृत्ति ने माया को आने वाले समय और कठिन भविष्य के लिए पहले से ही समझा–बुझाकर ज्यों तैयार कर दिया। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद की आर्थिक तंगी के हालात ने उसे न सिर्फ व्यावहारिक बनाया बल्कि सिखाया कि कोई भी व्यक्ति अपनी नियति को अपने नियंत्रण में कैसे ले सकता है और यह भी कि तमाम दबावों और विपरीत परिस्थितियों में भी आत्मसम्मान कैसे बनाए रखा जा सकता है।'स्टिलआई राइज़' शीर्षक कविता में उसने कहा–––

तुम मुझे अपने तीखे और विकृत झूठों के साथ/ इतिहास में शामिल कर सकते हो/ अपनी चाल से मुझे गंदगी में धकेल सकते हो/ लेकिन फिर भी मैं धूल की तरह उड़ती आऊँगी।

माया ने जीवन में ढेरों भूमिकाएँ निभाई। कभी ये भूमिका ऐच्छिक थी तो कभी अनैच्छिक, लेकिन हँसी का कवच ऐसा था–जिसे बेधकर भीतर का सच पहचान पाना कठिन था। किशोरी माया को काले श्रमिक विद्यार्थियों की छात्रवृत्ति मिली, सपना था कि नृत्य–संगीत की रुचि को कैरियर बनाएगी, लेकिन प्रेम और अविवाहित मातृत्व ने उसे आर्थिक बोझ तले दबा दिया। किशोर प्रेम के आवेग की जगह दुनिया –धंधे ने ले ली। गोद में नवजात शिशु और खाली जेब लिये माया ने एक दूसरी दुनिया में कदम रखा, जहाँ नैतिकता –अनैतिकता के सवाल बेमानी थे। जीना महत्त्वपूर्ण था, और

इसके लिए किसी काम को उच्छिष्ट समझने का अर्थ था भूख और लाचारी। बेटे को पालने, अपना खर्च चलाने के लिए पढ़ाई अधूरी छोड़ दी, करने लगी काम कभी वेट्रेस का, तो कभी नर्तकी का। पेट का सवाल था, बड़े सपनों की कोई अहमियत ही नहीं थी। अलस्सुबह थकी हुई घर लौटती, दूध दवाएँ,घर का किराया, बसों के धक्के– सबने उसे और कठोर बनाया। दोस्तों ने विवाह, जन्मदिन, नएवर्ष की पार्टियों में बुलाना, पूछना छोड़ दिया, माया के पास उन्हें उपहार देने को था ही क्या? क्रिसमस की पार्टी में एक ही बार इतना खा लेने को मन करता कि फिर कभी ज़रूरत ही न पड़े, साटन की फ्राक में पैबंद लगने लगे, टूटे जूते मरम्मत में आनाकानी करने लगे। शोषण के बगैर तो नौकरी भी कहीं नहीं, अधूरी संगीत शिक्षा और रंगभेद का दर्द सीने में लिए माया के लिए एक वक्त वह भी आया जब आजीविका के लिए देह–व्यापार किया। दुकान, रेस्टोरेंट में काम के अनियमित घंटों और देह –शोषण से बेहतर समझा चकला चलाना,जो काम उसने दो औरतों के साथ मिलकर किया। पुलिस प्रताड़ना, अबोध बच्चियों का व्यापार, रोग –अशिक्षा और बेबसी की दुनिया, माया के सामने नग्न रूप में थी और वह उससे खेलना सीख रही थी–

अपने यौवन में मैं / देखा करती थी ओट से/ सड़क पर आते–जाते बूढ़े पियक्कड़ों/ जवान, सरसों की तरह तेज पुरुषों को / मैं उन्हें हमेशा कहीं न कहीं जाते हुए ही देखती/ वे जानते थे कि मैं वहाँ हूँ/ पंद्रह साल की आयु में उनके लिए बेताब/ वे मेरी खिड़की के पास आकर रुकते/ युवा लड़कियों के वक्ष की तरह उन्नत उनके कंधे/ पीछे आने वालों को लपेटती उन पुरुषों की जाकेट। किसी दिन वे तुम्हें अपनी हथेलियों में/ आहिस्ता से दबा लेते हैं, जैसे तुम/ इस संसार का अंतिम कच्चा अंडा हो/ फिर वे अपनी जकड़ को मजबूत करने लगते हैं/ थोड़ी सी मजबूत....बस थोड़ी सी....।

माया अपनी सही भूमिका खोज रही है–जीवन के व्यापक परिदृश्य पर वह अपनी उपस्थिति आजमाने की प्रक्रिया में है–अब उसे अपने देखने को और अधिक व्यापक और गहरा बनाना है–समझना है शोषक और शोषित का संबंध, स्त्री–पुरुष सम्बन्धों की रणनीति, काले–गोरे का बहु आयामी समीकरण। समझ चुकी है, वह है कि रात्रि क्लबों में नाच–गा कर, ग्राहकों को अपनी लंबी, सुडौल काया से रिझाकर आजीविका तो कमाई जा सकती है, 'खुद' को साबित नहीं किया जा सकता। वह निरंतर खेलती है–ज़िदगी से, संघर्ष करती है, थकती है, गिरती है, फिर धूल झाड़कर उठ खड़ी होती है। चोटें और ख़राशे अनगिनत हैं–कहे किससे– इसलिए उन्हें भुला देना ही बेहतर है–हँसी का आवरण अब ओढ़ा नहीं लगता। वह आत्मा तक पैबस्त होता चला जा रहा है–यह स्वयं को ढूँढ़ने और पाने की प्रक्रिया है। सांसारिक बुद्धि कहती है विवाह कर घर बसाओ, मन डाँवाडोल है। 1951 में ग्रीक इलेक्ट्रीशियन और उभरते हुए संगीतकार तोष एंजेलो से विवाह कर डालती है, अब मार्गरीटा जॉन्सन माया एंजेलो है, जो एल्विन एली और रूथ बैकफोर्ड जैसे नृत्य निर्देशकों के साथ मिलकर 'अल एंड रीटा' मंडली बनाती है। कई अश्वेत संस्थाएँ इस मंडली को बुलाती हैं, पर प्रदर्शन कुछ खास प्रभावित नहीं कर पाते, मंडली का खर्च चलना दूभर है और निजी जीवन में विवाह की नौका डाँवाडोल है–तोष एंजेलो का स्वभाव और बर्ताव माया को 'सूट' नहीं करता। नई–नकोर गृहस्थी टूट बिखर जाती है। रोज़ी–रोटी के लिए माया फिर से रात्रि क्लबों के भरोसे है।

तीन वर्ष बाद उसे 'पोर्जी एंड बेस' ओपेरा के निर्माण और प्रदर्शन के सिलसिले में यूरोप के अनेक देशों की यात्रा का अवसर मिला है। माया देश–देश घूमती है–उसे अब से पहले यह पता ही नहीं था कि भाषा सीखने की प्रतिभा उसमें अद्भुत

है। माया गीत गाती है–अफ्रीकी लोक धुनों और जैज़ का मिश्रण उसके गीतों को सीधे दिल की राह देता है–गीत संकलन 'मिस कैलिप्सो' लोकप्रिय होता है।जिसका प्रकाशन सन् 1996 में काम्पेक्ट डिस्क में भी हुआ। 'कैलिप्सो हीट वेव' नामक फिल्म में माया संगीत देती है और अश्वेतों के संघर्ष का इतिहास, जीवन की आशा से भरपूर गीत, ज़िंदादिल आवाज़ उसे धन और यश देते हैं। माया जाने क्यों संतुष्ट नहीं है–विभिन्न भाषाएँ सीखकर वह अपना पुस्तकालय समृद्ध करने की प्रक्रिया में है। बचपन में श्वेत प्रभुओं के घरों से दानस्वरूप मिली फटी–चिथड़ीपुरानी किताबों की स्मृति अब तक ताज़ा है–उसकी जगह ताज़ी गोंद और बांस की लुगदी की गंध से भरी जिल्द चढ़ी लाल–नीली किताबों से उसका कमरा नित समृद्ध हो रहा है। उसने कुछ मित्रों के सुझाव पर 'हार्लेम लेखक संघ' की सदस्यता ले ली है। संघ के कई महत्त्वपूर्ण लेखकों से सन् 1959 में उसकी मुलाक़ात होती है जिनमें जान हेनरिक क्लार्क,रोसा गॉय,पाल मार्शल, जूलियन मेफील्ड हैं। ये सब प्रबुद्ध लेखक हैं। माया इनसे प्रभावित है सन् 1960 में अश्वेत आंदोलन को नेतृत्व देनेवाले मार्टिन लूथर किंग से उसका मिलना जीवन को एक नई दिशा दे देता है, अब वह 'सदर्न क्रिश्चियन लीडरशिप कांफ्रेंस की उत्तरी संयोजक बन गई है। रात्रिक्लबों में गीत–प्रस्तुति के लिए जागने वाली माया अब रात–भर जगकर पढ़ती है–लिखती है। कभी 'द अरबआब्जर्वर' का सम्पादन, कभी'द अफ्रीकन रिव्यू में फीचर लिखने का काम तो कभी–कभी घाना विश्वविद्यालय के 'स्कूल आफ म्यूजिक एंड ड्रामा' में पढ़ाने का काम उसे अकादमिक गतिविधियों की ओर ले जा रहा है। सन् 1964 में वह मेलकॉम एक्स से मिली और अफ्रो–अमेरिकन संगठन के लिए अमेरिका लौट आई। मेलकॉम एक्स के लिए मन में गहरा सम्मान है और मेलकॉम की अचानक हुई हत्या से माया को सदमा लगता है। सदमे से उबरने में उसे मार्टिन लूथर किंग जूनियर मदद करते हैं। वह अश्वेत अधिकार आंदोलन से भीतर तक जुड़ जाती है, लेकिन नियति उसे मित्रहीन करने के लिए कटिबद्ध है, कभी की अकेली माया फिर अकेली है।

1968 में मार्टिन लूथर किंग की हत्या माया के जन्मदिन पर ही होती है। वह वर्षों तक अपना जन्मदिन मनाती ही नहीं और उस दिन से सन् 2006 तक किंग की विधवा कोरेटा स्कॉटकिंग को स्मृति–गुच्छ भेजती रही। ऐसे समय में उपन्यासकार जेम्स बाल्डविन मित्र और भाई की भूमिका में माया के निकट हैं –माया के हृदय में बरसों से संचित अनुभव बाल्डविन के सामने निर्द्वंद्व भाव से बह निकलते हैं – शोक, हर्ष, आँसू, दु:ख–सबकुछ। बचपन तो कब का बीत चुका है पर स्मृतियों के दंश अब तक ताज़ा हैं। बाल्डविन समझाते हैं–लेखन उदात्त बनाता है–लिखो माया, लिख डालो अपना बचपन, लहुलूहान कैशोर्य, अभाव, तनाव, द्वंद्व, संघर्ष सबकुछ –जानने दो दुनिया को कि काले लोगों का जीना कैसा होता है–नस्ल और रंगभेद की कैद में जकड़ा समाज आनंदित हो ही नहीं सकता। और माया उसे.....तो जैसे राह मिल जाती है।आत्मकथ्य लिख डालती है। 'आय नो व्हाय द केज्ड बर्ड सिंग्स' जो 1970 में प्रकाशित होते ही किसी भी अफ्रो–अमेरिकी द्वारा लिखा पहला 'बेस्ट सेलर' बन जाता है। यह माया की बदली हुई भूमिका है–वह यथास्थिति को कभी स्वीकार नहीं करती। यातना को कभी अंतिम नहीं मानती, हर परिस्थिति में अपनी भूमिका ढूँढ़ निकालती है–जीवन से भी बड़ा है विश्वास–ऐसी दुनिया की खोज में निरंतर लगी रहती है जो अश्वेतों को, स्त्रियों को, असहाय और बेबस बच्चों को उनका सही 'स्पेस',उचित हक दे सके। तृषा नालाए को दिये साक्षात्कार में वह कहती है– 'जितने भी मूल्य हैं, साहस उनमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है, साहस के बिना किसी और मूल्य की रक्षा आप नहीं कर सकते। आप सच्चे दयालु, आत्मविश्वासी, आत्मीय कुछ भी हो सकते हैं.....लेकिन ऐसा बनने के लिए आपको हर समय साहस की आवश्यकता होती है, और इसका मतलब युद्धभूमि में खड़े होना नहीं है, साहस से मेरा तात्पर्य आपके भीतर का साहस, जो आपके आत्म को दूसरे मनुष्यों को दिखाने में मदद करता है।'

यह साहस ही था जिसके बल पर सन् 1963 में मार्टिन लूथर किंग के नेतृत्व में राजधानी वाशिंगटन में दो लाख अश्वेतों के जुलूस में माया शामिल हुई। यह जुलूस अश्वेत मानस की इच्छाओं और समानता के अधिकार की आकांक्षा से प्रेरित था, जिसने आगे के बीस वर्षों में इतिहास बदल डाला। समूचे विश्व में अश्वेत संस्कृति अपने संगीत, कला, साहित्य से अपनी विशिष्ट पहचान बनाने लगी, उसमें माया अपने संगीत और साहित्य के साथ शिरकत कर रही थी। 1960 से 1975 के दौरान बड़े पैमाने पर अश्वेत आत्मकथ्य लिखे गए, जिनमें सामाजिक–अधिकार आंदोलन के विविध पक्षों की अभिव्यक्ति हो रही थी। इरीना रातूशिन्स्क्या का 'ग्रे इज द कलर आफ होप', रिजोर्बेता मेंच्यू का 'आई' और 'एन इंडियन वूमन इन गुवाटेमाला, मेरी किंग का ' फ्रीडम सांग' एंजेलो डेविस का 'एन ऑटोबायोग्राफी' इलेन ब्राडन का 'ए टेस्ट आफ़ पावर': ए ब्लैकवूमन स्टोरी', ग्वेंडीलाइन ब्रुक्स की 'रिपोर्ट फ्राम पार्ट वन' हैरिसन जैक्सन की 'देयर इज नथिंग आई ओन दैट आई वांट' आसी गफ़ी की 'द ऑटोबायोग्राफी आफ़ ए वूमन' मेरी ब्रूक्टर की 'हेयर आय एम:टेक माइ हैण्ड'; महालिया जैक्सन की 'मूविंग ऑन अप', पर्ल बेली की 'द रॅा पर्ल', रोज बटलर ब्राउन की 'आय लव माइ चिल्ड्रेन', अन्ना हेजमैन की 'द ट्रम्पेट साउंड्स', असाता शकूर की 'असाता' के साथ–साथ माया एंजेलो 'आई नो व्हाई द केज्ड बर्ड सिंग्स' और आगे चलकर आत्मकथ्य के अन्य छह खंडों के साथ उपस्थित हुई, जिनमें अश्वेत स्त्रियों द्वारा नस्लभेद, रंगभेद, एवं यौनिकता के मुद्दे उठाए गए। क्रांतिधर्मी दौर के ये आत्मकथ्य स्वतंत्रता और शिक्षा का अनन्य संबंध दिखाते हैं। शिक्षा ने ही अश्वेत रचनाकारों को सामुदायिक चेतना, राजनीतिक, सामाजिक, साहित्यिक विमर्शों में प्रखर भागीदारी के रास्ते दिखाए। माया एंजेलो जैसी अश्वेत रचनाकारों की एक नई पीढ़ी अपनी कविताओं और आत्मकथ्यों द्वारा ऐसे टेक्स्ट सामने लाने लगी जो अपने 'टेक्स्ट' और बहुआयामिता के साथ ही बहुरंगभेदी बहुनस्लवादी पाठकों की चेतना का हिस्सा बनने लगी। अब रंगभेद का मुद्दा बहुआयामी हो गया कभी पूरी तरह राजनीतिक, कभी सामाजिक, तो कभी निजी। माया एंजेलो ने आत्मख्यान लिखकर दोहरा जोखिम उठाया जिसे ब्लैकबर्न के शब्दों में कहा जाये तो– ''अश्वेत स्त्रियाँ आत्मकथ्य लिखकर अपने जीवन को दोहरे जोखिम में डालती हैं, वे एक ओर अमेरिकी समाज में व्याप्त रंगभेद की राजनीति का पर्दाफाश करती हैं, तो दूसरी ओर अपने समुदाय के पुरुषों के यौन अत्याचारों को भी खुलकर अभिव्यक्त करती हैं।''(रेजीना ब्लैकबर्न– इनसर्चआफ़दब्लैक फीमेल

सेल्फ:अफ्रीकन-अमेरिकनवूमंस ऑटोबायोग्राफी एंड एथनिसिटी' ब्लूमिंगटन; इंडियाना यूपी' 1980: पृ. 134)

माया एंजेलो ने आत्मख्यान के तौर पर काव्य विधा को भी अपनाया। ब्रिटानिका ऑनलाइन (9/17/1998)में माया की कविताओं को उसके 'निजी इतिहास की अभिव्यक्ति' कहा गया है, क्योंकि उसकी कविताओं का कथ्य कई अश्वेत अमेरिकी जीवनानुभवों से मिलकर बुना गया है। लायन ब्लूम ने इन कविताओं पर टिप्पणी करते हुए कहा कि - इनमें नस्लभेद, भेदभाव, शोषण की पीड़ा और अपने वर्ग के लिए शुभेच्छा है।

माया एंजेलो ने कई अन्य कविताएँ भी सामाजिक मुद्दों और अश्वेत विशेषकर स्त्रियों के मुद्दों को केंद्र बनाकर लिखी; जिनमें 'बॉर्न दैटवे' यौन शोषण और वेश्यावृत्ति पर और 'फेनोमेनल वूमन; 'वूमन वर्क' और 'सेवेन वूमन्स ब्लेस्डएस्योरेंस' जैसी कविताएँ स्त्री विषयक हैं। घरेलू हिंसा पर 'ए काइंड आफ़ लव सम से' बाल श्रम और शोषण पर 'टू बीट द चाइल्ड वाज़ बैड एनफ़' इसके अतिरिक्त दास-प्रथा पर 'द मेमोरी; 'मिस स्कारलेट,' 'मी. रेट' 'एंड अदर लैटर सेंट्स' ' वी सा बीआंड आवर सीमिंग 'शीर्षक कविताएँ हैं। नशाखोरी, अश्वेत अस्मिता पर भी एंजेलो की अनेक कविताएँ हैं। अधिकतर कविताएँ लंबी नहीं हैं, बल्कि तीन-चार बंद में ही समाप्त हो जाती हैं। लयात्मकता उनका अपूर्व वैशिष्ट्य है। किंग जेम्स बाइबल, अमेरिकी रचनाकारों, एडगर एलेन पो, शेक्सपियर,अश्वेत रचनाकारों जैसे लैंगस्टन ह्यूज्स चर्चों की प्रार्थनाएँ, बाल्यगीत और लोक संगीत के प्रभाव को इन कविताओं में देखा जा सकता है। 'माडर्न अमेरिकन वूमन राइटर्स' में जान ब्रैक्सटन ने माया की कविताओं पर टिप्पणी करते हुए लिखा है कि - उनके पाठक काव्यलय, गीतात्मकता, कल्पना और यथार्थवाद के कायल हैं। ये कविताएँ जैज की धुनों पर आधारित हैं जो सीधे पाठक के हृदय में उतर जाती हैं।

माया एंजेलो की कविता सिर्फ यथार्थ और कल्पना तक ही सीमित नहीं है वह स्त्री यौनिकता का उत्सव मनाने वाली कविता है। माया का निजी जीवन बहुत से घात-प्रतिघातों की कहानी है। रात्रि क्लबों में नाच, वेश्यावृत्ति को पेशे के रूप में अपनाना किसी स्वाभिमानी स्त्री के लिए सरल-सहज नहीं हो सकता, न होता है। वह स्वयं लिखती है कि जीवन के बहुत कम ही ऐसे वर्ष रहे, जब उसे अपने खर्चे निकालने, बिजली के बिल भरने की चिंता नहीं रही। जैज़ की धुनों पर नाचती माया को देखकर यह अंदाज़ा लगाना कठिन है कि यह वही माया है जो बचपन में यौन शोषण, कई पुरुषों के दुर्व्यवहार-अपमान, कुछ असफल प्रेम-प्रसंगों से गुज़रने के बावजूद स्वयं को विशिष्ट और असाधारण कहती है।

अश्वेत होने के साथ-साथ स्त्री होना माया एंजेलो के लिए चुनौतीपूर्ण रहा होगा, क्योंकि अश्वेत रचनाकार दोहरे दबाव से जूझता है - रंगभेद और निरंतर मशीनी होते चले जा रहे भौतिकतावादी समाज का दबाव दोनों उसे खुलकर बोलने और लिखने से रोकते हैं। लेकिन माया एंजेलो इन सीमाओं को अपने लेखन की संभावनाओं में तब्दील करती दीखती है। मसलन अश्वेत वेश्या जीवन वृत्ति उसे देह व्यापार के अपराधीकरण, नशाखोरी, विपन्नता, स्त्री अशिक्षा के मुद्दों पर सोचने और लिखने का रास्ता देती है। 'गेदर टुगेदर इन माई नेम' में वह अपने वेश्या जीवन पर कतई शर्मिंदा नहीं दीखती, न ही वह इसे ग्लैमराइज करती है बल्कि वह पाठक को अपने अनुभवों के माध्यम से सभ्य समाज की उच्छिष्ट तंग गलियों; जहाँ कम उम्र की लड़कियों के अपहरण, बलात्कार, बाल श्रम,स्त्रियों के सांस्थानिक शोषण के वाकये जो हवा में तिरते हैं, उनसे रू-ब रू करवाती है। यही वजह है कि वह हेलेन सिक्सू उस की तरह स्त्रियों के बोलने पर बल देती है - "मैं स्त्रियों से कहूँगी कि वे पढ़े और ज़ोर -ज़ोर से पढ़े। तुम्हें इतने ज़ोर से पढ़ना होगा कि तुम भाषा की ध्वनियाँ सुन सको। अपने कानों से सुनो अपनी भाषा की लय, माधुर्य और उसका संगीत। मैं स्त्रियों से कहूँगी कि वे उन्नीसवीं शताब्दी की स्त्री कविता पढ़े जो अफ्रीकी, अमेरिकी, श्वेत, अश्वेत, स्पेनी, एशियाई स्त्रियों द्वारा रची गई है। वे कविता पढ़े अपनी पुत्रियों को सुनाएँ, अपनी भतीजियों को सुनाएँ तभी देख पाएँगी कि कोई मुझसे पहले भी यहाँ थी, किसी ने मुझ-सा ही अनुभव पहले भी किया था द्य कोई मुझ सी अकेली यहाँ पहले भी थी।"

माया एंजेलो स्वानुभूति को सबसे महत्त्वपूर्ण मानती है, इसी के बल पर वह निरंतर रचनारत रही है और आत्मनिर्भर भी। तृषा नालाए के साथ बातचीत में वह कहती है - "मैंने अपने जीवन से यह सीखा है कि लोग तुम्हारा कहा हुआ विस्मृत कर देंगे, तुमने किसी के लिए क्या किया, लोग इसे भी भूल जाएँगे पर तुमने किसी को क्या अनुभव कराया, इसे वे कभी नहीं भूलेंगे। साथ ही मेरा दृढ़ विश्वास है कि स्वयं के किए बिना कोई कार्य पूरा नहीं होता।"

जीवन हमेशा माया को चुनौती देता रहा, वह उन चुनौतियों को स्वीकारती रही। जीवन के अंतिम दिनों में घातक हृदय रोग से शरीर लड़ता रहा, माया पुस्तक लिखती रही। चिकित्सक काया की देख-देख करते और माया 2014 के अप्रैल सेमेस्टर में पढ़ाने के लिए 'रेस कल्चर एंड जेंडर इन द साऊथएंड बिआंड' जैसे पाठ्यक्रम की योजना बनाती रहती। इस दौर के बौद्धिकों कार्यकर्ताओं, विचारकों मसलन इकबाल अहमद एडवर्ड सईद, जॉक देरिदा के साथ माया एंजेलो का नाम भी जुड़ गया है। जिसके देहावसान की खबर फैलते ही लाखों की संख्या में स्त्रियाँ छात्र, कार्यकर्त्ता द्रवित और विचलित हो उठे हैं। घाना में रहने वाले अश्वेत अमरीकी जिनकी घर वापसी की कथा माया ने अभी तो कहनी शुरू की थी - वे निष्प्रभ हैं। आनंद जिसे वह 'जॉय' कहा करती - वही उसकी मुक्ति बना है। उसने कहा था - 'जो व्यक्ति आनंदित है वही अपने कृत्यों का उत्तरदायित्व ले सकता है। दरअसल आनन्द बाँटने की चीज है, इसे जितना बाँटोगे यह तुम्हारे पास उतना ही बढ़ता जाएगा।'

माया एंजेलो की विदाई का क्षण आ गया है। पीले मकान की दीवारें सूर्य के आलोक से जगमगा रही हैं - सुनहरी किरणें खिड़की के रास्ते उस सर्वदा हँसते रहने वाले काले चेहरे पर पड़ रही हैं - तांबई रंगत वाली आँखें गिरजे की प्रार्थना में अधमुँदी सी दीख रही हैं। मोटे होंठ हँसते-हँसते ज्यों बीच में स्तब्ध हो गए हैं कभी की छह फुटी सुगठित काया ढल-सिकुड़कर नन्हीं सी हो गई है। वार्ड रोब की पुरानी ड्रेसेज अब ढीली और लम्बी मालूम देती हैं,विश्वास नहीं होता कि ये कभी माया पर सजती होंगी। फैली हुई नाक किसी नए अनुभव की गंध की तलाश में थोड़ी सिकुड़ी सी दीख रही है, जंगली पत्तियों की हरी गंध उनके भीतर ठहर-सी गई है। घुँघराले सफेद बाल जिनका तंज अब खत्म हो गया, उनके बीच से एकाध काला बाल दीख रहा है। यौवन में पहने डैंगल्स का वजन अब

कान की लवें उठा पाने में असमर्थ हो गई हैं – टॉप्स और बालियों से सजी रहने वाली लवों के छेद इतने बड़े होकर झूल गए हैं, जिनमें एक उँगली आसानी से घुस सकती है। ठोड़ी के नीचे गर्दन के पास झुर्रियों का गुंजलक है और सीना सिकुड़नों – सलवटों से भरा हुआ। ये वक्त से संघर्ष की सलवटें हैं। कभी के उन्नत और पुष्ट स्तन अश्वेतों की करुणा और वंचितों की आर्द्रता के बोझ से ढल गए हैं – अब उनमें कोई कटाव, उठान नहीं उनके भीतर रहे दिल की धुकपुकी थम चुकी है। बाँहों की मांसपेशियाँ हड्डियों का साथ लगभग छोड़ चली हैं और गहरी सांवली रंगत की त्वचा कोहनियों के पास ढलक गई है दोनों हाथ सीने पर रखवा दिए गए हैं – हाथों के पंजे स्कूली किताब के पन्नों के भीतर सँभाल छोड़े पीपल के किसी पुराने पत्ते– से अपनी सारी मज्जाओं, नसों, रक्त वाहिकाओं के साथ बिल्कुल पारदर्शी हो चुके हैं। दाहिनी तर्जनी थोड़ी टेढ़ी–सी अँगूठे के पास झुकी है, लगता है अभी कलम पकड़ लेगी और लिखने लगेगी मनुष्य से मनुष्य के भेदभाव का इतिहास, लैंगिक विभेद की प्रताड़ना और भी बहुत कुछ जो लिखना अधूरा रह गया होगा। छात्रों के लिए नोट्स बनाने का काम भी तो छूट गया होगा 'जो काम पसंद हो उसे कर लेना चाहिए' लेकिन अब काया साथ नहीं दे रही। दस नंबर की बैलेरीना पहनने वाले पाँवों की हड्डियाँ घिसकर आठ नंबर माप के जूतों में आ गई हैं – कभी जैज और कैलिप्सो की धुनों पर थिरकती, नृत्य से सैकड़ों दिलों को मोहती एड़ियों की हड्डियों ने जवाब दे दिया है। ताबूत में लिटाने के लिए अब बहुत से मज़बूत हाथों की ज़रूरत नहीं अब ये जर्जर, वृद्धा काया मात्र है। माया की जिसे भौतिक रूप में अंतिम बार देखने आए छात्र मित्र, प्रशंसक, पाठक सब वेक फारेस्ट में चारों ओर बिखरी, उड़ती सूखी पत्तियों पर हौले–हौले पाँव रख रहे हैं, पीले घर की खिड़कियों से उझक कर हौले से उस आनंदमय चेहरे की झलक ले लेते हैं।

आए हुए लोग धीमे–धीमे फुसफुसा कर बातें कर रहें हैं – कहीं माया एंजेलो नींद से जग न जाए और... और –और कहीं ऐसा न हो कि नई पुस्तक लिखती हुए माया की तन्द्रा भंग हो जाए द्य लेट्स नॉट डिस्टर्ब हर ! धीरे बोलो यहाँ माया एंजेलो सोती है। अपनी कविताओं और अपने गीतों के साथ–

जब मैं एक बड़ी यहूदी बस्ती में मर जाऊँ तो / मुझे आकाश में न भेजें / तेंदुए जैसे चूहे, बिल्ली को खा रहे हैं / और जहाँ रविवार को ब्रंच में / जई के आटे का बकवास भोजन मिलता है / उपदेश देने वालों / कृपया मुझसे/ सोने की सड़कों / मुफ्त के दूध का वादा मत करो/ मैंने चार साल की उम्र से दूध नहीं पिया है/ और एक बार मर जाने के बाद मुझे स्वर्ण की ज़रूरत नहीं पड़ेगी।

मैं उस जगह का आह्वान करती हूँ जहाँ / शुद्ध स्वर्ग है/ जहाँ वफ़ादार परिवार हैं / जहाँ अच्छे अजनबी हैं/ जहाँ जैज संगीत है/ और जहाँ मौसम नम है/ मुझे ऐसा वचन दो/ या कुछ भी न दो।

('धर्माधिकारी')

*माया एंजेलो की कविताओं का अनुवाद विपिन चौधरी से साभार

❐

प्रवासी साहित्य की अवधारणा और स्त्री कथाकार

निर्मल रानी

शोधार्थी, स्कूल ऑफ लिबरल स्टडीज़
अम्बेडकर विश्वविद्यालय कश्मीरी गेट, दिल्ली,६
विभिन्न समसामयिक मुददों, स्त्री, दलित, प्रवासी आदि पर स्तरीय पत्रिकाओं में अनेक लेख प्रकाशित। अम्बेडकर विश्वविद्यालय, दिल्ली में प्रवासी साहित्य पर शोधकार्य। अनेक राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठियों में भागीदारी।
nirmalrani16@gmail.com

प्रवासी साहित्य का सम्बन्ध प्रवासी लोगों द्वारा लिखे साहित्य से है। प्रश्न यह उठता है कि ये प्रवासी लोग कौन हैं और इनके साहित्य की विशेषता अथवा सुन्दरता क्या है इसी जुड़ा है इस साहित्य का स्वरूप और सौन्दर्यशास्त्र।

आजकल साहित्य में कई विमर्श प्रचलित हैं। स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, की भांति, इधर प्रवासी विमर्श ने भी जगह बनाई है। प्रवासी विमर्श की विशेषता यह है कि इस के अन्तर्गत रचनात्मक साहित्य अधिक लिखा गया है। इसके आलोचनात्मक पक्ष पर उतना बल नहीं दिया गया।

कमलेश्वर ने प्रवासी साहित्य पर टिप्पणी करते हुए कहा था कि 'रचना अपने मानदंड खुद तय करती है। इसलिए उस के मानदंड बनाएँ नहीं जाएँगे। उन रचनाओं से मानदंड तय होंगे।'

प्रवासी लोगों की तीन श्रेणियाँ बनाई जा सकती हैं। एक श्रेणी में, वे लोग हैं जो गिरमिटिया मज़दूरों के रूप में, फीजी, मॉरीशस, त्रिनिडाड, गुआना, दक्षिण अफ्रीका आदि देशों में भेजे गए थे। दूसरी श्रेणी में, अस्सी के दशक में खाड़ी देशों में गए अशिक्षित-अर्द्धशिक्षित, कुशल अथवा अर्द्ध कुशल मज़दूर आते हैं। तीसरी श्रेणी में, अस्सी-नब्बे के दशक में गए सुशिक्षित मध्यवर्गीय लोग हैं; जिन्होंने बेहतर भौतिक जीवन के लिए प्रवास किया।

इन तीन तरह की श्रेणियों में से, साहित्य के वर्तमान समय में, अंतिम श्रेणी का ही प्रभुत्व जैसा दिखाई देता है। गिरमिटिया मज़दूरों की बाद की पीढ़ियों में से अधिकांश ने रोज़गार तथा अन्य कारणों से, हिन्दी या भोजपुरी के अलावा दूसरी अंतर्राष्ट्रीय भाषाओं को अपना लिया। मॉरीशस के अभिमन्यु अनत ही एक ऐसे लेखक हैं, जिनको उल्लेखनीय माना जाता है। उन के उपन्यास 'लाल पसीना' ने काफी प्रशंसा पाई। फीजी, त्रिनिदाद, दक्षिण अफ्रीका अथवा गुआना से कोई ऐसा लेखक चर्चित नहीं हुआ, जिसको प्रवासी लेखन में ख्याति प्राप्त हुई हो।

इन दो वर्गों के लेखन को ही प्रवासी साहित्य की संज्ञा दी गई है। वस्तुत:, पराये देशों में पराये होने

की अनुभूति और उस अपरिचित परिवेश में समायोजन के प्रयास, नॉस्टेल्जिया, सफलताएँ और असफलताओं को ही प्रवासी साहित्य का आधार माना जा सकता है। राजेन्द्र यादव जी ने प्रवासी साहित्य को इसीलिए 'संस्कृतियों के संगम की खूबसूरत कथाएँ' कहा है। हालाँकि यह केवल संगम नहीं है बल्किल कई अर्थो में तो मुठभेड़ है।

साथ ही यह भी कहा जा सकता है कि प्रवासी साहित्य, नॉस्टेल्जिया के रचनात्मक रूपों का समुच्चय है। नॉस्टेल्जिया को प्रथम दृष्टया नकारात्मक मूल्य माना जाता है परन्तु यह उचित नहीं होगा। नॉस्टेल्जिया का अर्थ है-घर की याद या फिर अतीत के परिवेश में विचरना।

प्रवासी साहित्य में नॉस्टेल्जिया या परायेपन की अनुभूति, रचनात्मक यात्रा का केवल पहला चरण है। दूसरे चरण में, इस मन:स्थिति से संघर्ष शुरू होता है और तीसरे चरण में अपनी नई पहचान को स्थापित करने की जद्दोजहद दिखाई पड़ती है।

इन तीनों ही चरणों मे, सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक परिस्थितियों का चित्रण होता है। खान-पान, पहनावा, बोली-भाषा, पर्व-त्यौहार का भी उल्लेख आता है। प्रवासी साहित्य में कविता, कहानी, उपन्यास, ग़ज़ल आदि विधाओं में मुख्यत: लिखा गया है। परन्तु कहानी इस विमर्श की प्रधान विधा बन गई है।

सुषम बेदी, सुधा ओम ढींगरा, ज़क़िया ज़ुबैरी, नीना पॉल, दिव्या माथुर, उषा वर्मा, जय वर्मा और उषा राजे सक्सेना ने प्रवासी लेखिकाओं के रूप में अपनी महत्त्वपूर्ण जगह बनाई है।

सुषम बेदी का हवन और मैंने नाता तोड़ा उपन्यास काफी चर्चा में रहा। इस में अमरीका के परिवेश में एक विधवा स्त्री के जीवन को दिखाया गया है। इस के अलावा उन के कहानी संग्रह चिड़िया और चील ने भी पर्याप्त ख्याति पाई है।

ज़किया ज़ुबैरी के कहानी संग्रह साँकल में स्त्री मन की कशमकश को चित्रित किया गया है। ज़किया जी की कहानियों में नॉस्टेल्जिया और वहाँ परिवार के बीच की स्थितियों का मार्मिक चित्रण मिलता है। माँ और बेटी के अलावा, माँ और पुत्र के बीच स्वाभिमान को बहुत ही संवेदनशील ढंग से उकेरा गया है। साँकल के अलावा मारिया और लौट आओ तुम ऐसी ही कहानियाँ हैं।

नीना पॉल ने दो उपन्यास तलाश और कुछ गाँव-गाँव कुछ शहर-शहर लिखे हैं। इस के अलावा उनके दो कहानी संग्रह भी हैं। कुछ गाँव-गाँव कुछ शहर-शहर उपन्यास में इंग्लैंड के लेस्टर शहर के बनने की कहानी के साथ-साथ गुजरातियों के वहाँ जमने और संघर्ष करने को गूँथा गया है। उपन्यास में निशा के माध्यम से एक गुजराती परिवार की तीन पीढ़ियों का संघर्ष दिखाया गया है। निशा उस की माँ सरोज बेन और निशा की नानी सरला बेन। गुजरात से युगांडा और युगांडा से लेस्टर पहुँचे हैं। इन भारतीयों की कठोर मेहनत करने की क्षमता और कुशल व्यापार बुद्धि ने एक नए देश में भी धीरे-धीरे उन्हें इज़्ज़त दिला दी।

इस उपन्यास की विशेषता यह है कि इस में उपन्यासकार ने संतुलित और निष्पक्ष दृष्टि कोण अपनाया है। भारतीयों के साथ हुए भेदभाव तो दिखाए ही गए हैं परन्तु अंग्रेज़ों के कानून के पाबन्द होने को भी ईमानदारी से दिखाया है। साथ ही, लेस्टर के इतिहास और भूगोल के सुन्दर चित्र खींचे गए हैं। उपन्यास को पढ़ कर लेस्टर का पूरा नक्शा स्पष्ट हो जाता है।

दिव्या माथुर की शुरुआती कहानियों में कहानी का शिल्प कम और संवेदना अधिक है अर्थात कहानी में चरित्र-चित्रण, संवाद, वातावरण की अपेक्षा, वे कथ्य पर फोकस करती हैं, जो उन्हें कहना है, वही उन के लिए मुख्य रहता है। तमन्ना कहानी में एक ऐसी भारतीय बहु की कथा है जो लगातार तनाव में है। झाँसी में उस का एक सड़कछाप प्रेमी था, जो शादी के बाद भी उसे धमकी भरे खत लिखता है। सास उसे समझाती है। पंगा और अन्य कहानियाँ तथा २०५० जैसी कहानियों तक पहुँचते-पहुँचते उन के कहानियों में शिल्प का प्रबल आग्रह दिखाई देने लगता है।

शिल्प का ऐसा ही प्रयोग उन्होंने अपने पहले उपन्यास में किया है। शाम भर बातें नाम के इस उपन्यास में शुरू से आखिर तक केवल संवाद ही संवाद हैं अर्थात बातें ही बातें हैं। इन बातों के बीच ही इंसान की इंसानियत और हैवानियत, व्यवस्था के विद्रूप तथा परिस्थितियों के पेंच सामने आते हैं। उपन्यास एक पार्टी में खुलता है और उस का अंत भी पार्टी के साथ ही होता है। यह पार्टी मकरंद मलिक और मीता मलिक के घर में हो रही है। हैरानी की बात यह है कि लंदन शहर में चलने वाली इस पार्टी में लगभग सभी मेहमान भारतीय हैं। इस की समाजशास्त्रीय पड़ताल की ज़रूरत है कि आख़िर क्या वजह है कि वहाँ भारतीय समुदाय और दूसरे समुदायों के बीच समाजीकरण की प्रक्रिया एकदम मंद है। युवा पीढ़ी में ज़रूर यह बदलाव दिखता है परन्तु पहली भारतीय पीढ़ी पूरी तरह से बंद जीवन जीती है। उन के रहन-सहन और सोचने के तरीके भी भारतीय मध्यवर्गीय चरित्रों की तरह हैं। उच्चायोग से आए अधिकारी अपने को बहुत उच्च स्थान पर मानते हुए अन्य भारतीयों के साथ तुच्छ व्यनवहार करते हैं। शाम भर बातें उपन्यास में लंदन में बसने वाले अधिकांश भारतीयों की मनोवृति और सामाजिक व्ययवहारों का सूक्ष्म चित्रण किया है।

सुधा ओम ढींगरा ने कौन सी ज़मीन अपनी कहानी संग्रह से अपनी जगह बनाई। सुधा जी का लेखन एक सांस्कृतिक सेतु की तरह है। अमेरिका में मस्त और व्यस्त भारतीय पीढ़ी के बीच त्रस्त पीढ़ी के भी चित्र उन की कहानियों में दिखाई देते हैं। उनकी कहानियों में भारत की स्मृति के क्षण भी हैं तो अमेरिका में अपनी पहचान जमाने के चित्र भी हैं। टारनेडो कहानी भारत की याद और उस की खुशबु की कहानी है। वहीं क्षितिज से परे कहानी में एक प्रताड़ित स्त्री के विद्रोह को दर्शाया गया है। कौन सी ज़मीन अपनी कहानी की शुरूआत ही अपने वतन की याद से होती है। 'ओये मैंने अपना बुढ़ापा यहाँ नहीं काटना, यह जवानों का देश है, मैं तो पंजाब के खेतों में, अपनी आख़िरी साँसें लेना चाहता हूँ।' जब वह अपने बच्चों को यह कहता, तो बेटा झगड़ पड़ता, 'अपने लिए आप कुछ नहीं सहेज रहे और गाँव में ज़मीनों पर ज़मीन खरीदते जा रहे हैं।'

यह कहानी एक तरफ नॉस्टेल्जिया की भावुकता को प्रकट करती है तो दूसरी ओर यथार्थ की वीभत्स ज़मीन को भी उजागर करती है। मनजीत सिंह अपनी पत्नी मनविन्दर के साथ अमेरीका में रहता है। दो होनहार बच्चे हैं, जो डॉक्टरी और वकालत पढ़कर वहीं विवाह कर लेते हैं। बेटा और माँ दोनों ही मनजीत सिंह को समझाते रहते हैं कि पंजाब में अपने भाई को ज़मीन खरीदने के लिए बार-बार पैसा न भेजा करे परन्तु वह मानता ही नहीं। बच्चों की शादी के बाद जब वह और उसकी पत्नी मनविन्दर नवाँशहर, पंजाब अपने पैतृक गाँव पहुँचते हैं तो उन के साथ मेहमानों की तरह व्यवहार

किया जाता है। मनजीत को यह अटपटा लगता है। छोटा भाई ही नहीं, माँ और बाप भी बदल जाते हैं।

मनजीत जब अपने पैसों से खरीदी हुई ज़मीनों के हक की बात करता है तो भाई बुरी तरह क्रोध में आ जाता है। रात में मनजीत को भाई की फुसफुसाहटों भरी आवाज़ से पता चलता है कि उस की योजना दोनों की हत्या कर ठिकाने लगाने की बन चुकी है। इस में वह पुलिस को भी शामिल होने की बात कहता है। उस का मन छलनी हो जाता है। 'इसी द्वंद्व में, वह एक रात पानी पीने उठा, तो नीचे के कमरे में कुछ हलचल महसूस की, पता नहीं क्यों शक-सा हो गया। दबे पाँव वह नीचे आया, तो दार जी के कमरे से फुसफुसाहट और घुटी-घुटी आवाज़ें आ रही थीं। दोनों भाई दारजी को कह रहे थे। 'मनजीते को समझा कर वापिस भेज दो, नहीं तो हम किसी से बात कर चुके हैं, पुलिस से भी सांठ-गांठ हो चुकी है। केस इस तरह बनाएँगे कि पुरानी रंजिश के चलते, वापिस लौट कर आए एन.आर.आई. का कत्ल।' मनजीत और मनविन्दर रात को ही चुपचाप घर छोड़कर निकल जाते हैं। मनजीत चलते वक्त मनविन्दर से पूछता है-'जान नहीं पा रहा हूँ कि कौन सी ज़मीन अपनी है '

सुधा ओम ढींगरा की कहानियों की यही विशेषता है कि उस में आदर्श का संसार भी है परन्तु वह मूल रूप से यथार्थ की ज़मीन पर खड़ा है। आदर्श जल्द ही यथार्थ से खण्डित हो जाता है। उनके यहाँ कुछ कहानियाँ ऐसी भी हैं जो विदेश के ही चरित्रों और स्थितियों पर केन्द्रित हैं। यह कहानियाँ वास्तव में एक भारतीय की नज़र से विदेशी भूमियों को देखना है।

उनकी एक कहानी सूरज क्यों निकलता है, को पढ़ते हुए पाठक को सहसा ही प्रेमचन्द के घीसू और माधव याद आने लगें, तो कोई आश्चर्य नहीं। घीसू और माधव के बरक्सद जेम्स और पीटर ज़्यादा निर्लज्ज और अराजक हैं। घीसू और माधव कम से कम काम इसलिए नहीं करना चाहते कि वहाँ काम का कोई उचित मूल्य नहीं बचा है। इसलिए प्रेमचन्द उन्हें ज़्यादा विचारवान भी कहते हैं। परन्तुर सुधा ओम ढींगरा के ये दोनों पात्र काम करना ही नहीं चाहते और अय्याशी पूरी करना चाहते हैं। उन की माँ टैरी भी ऐसी ही थी और लगभग सभी भाई-बहन भी। वे होमलेस होने का बहाना कर भीख माँगते हैं, सूप किचन में मुफ्त में खाना खाते हैं, शैल्टर होम में सो जाते हैं। यह सब सुविधाएँ अमेरिका की सरकार गरीबी रेखा से नीचे रहने वालों के लिए प्रदान करती है।

एक भारतीय की नज़र से इस यथार्थ को देखते हुए कहानीकार ने बहुत ही सूक्ष्म घटनाओं और गतिविधियों का ब्यौरा दिया है। इस में वेश्यावृति, शराबखोरी की लत, ड्रग्स पैडलर्स आदि सब शामिल है।

जय वर्मा ने इधर कहानी के क्षेत्र में कदम बढ़ाया है परन्तु उनकी कहानियों ने एक संवदेनशील कथाकार की उम्मीद जगाई है। सात कदम उन की ऐसी ही कहानी है जो अपनी संरचनात्माक बुनावट और संवेदनात्मक कारीगरी के लिए याद रखने योग्य है।

उषाराजे सक्सेना की कहानी वो रात बेहद चर्चित कहानी रही। एक माँ और उस के छोटे बच्चों के साथ कल्याणकारी राज्य की भूमिका पर केन्द्रित इस कहानी की मर्मस्पर्शी संवेदना झकझोर देती है।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि एक परिघटना के रूप में यह साफ दिखाई देता है कि पूरे प्रवासी साहित्य की बागडोर स्त्री रचनाकारों के हाथ में है। एक नई दुनिया का पता और उस की आंतरिक गतिविधियों की सूचना इन कथाकारों की कहानियों और उपन्यासों से पाठकों को मिलती है। इन कथाकारों की रचनाशीलता ने हिन्दी साहित्य का परिदृश्य और विस्तृत किया है।

संदर्भ-ग्रंथ सूची-

१. कुछ गाँव-गाँव कुछ शहर-शहर, नीना पॉल, यश पब्लिकेशन्स, १/११८४८ पंचशील गार्डन, नवीन शाहदरा, दिल्ली-११००३२

२. कौन सी ज़मीन अपनी, डॉ. सुधा ओम ढींगरा, भावना प्रकाशन, १०९-ए, पटपडग़ंज, दिल्ली-११००९१

३. शाम भर बातें, दिव्या माथुर, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली-११०००२४.

४. चिड़िया और चील, सुषम बेदी, अभिरुचि प्रकाशन, ३/११४, कर्ण गली, विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली-११००३२५.

हवन, सुषम बेदी, अभिरुचि प्रकाशन, ३/११४, कर्ण गली, विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली-११००३२

❒

लघुकथा

चेतना

मधुकान्त

हल्का होना अनिवार्य है। पत्नी पर बस न चले तो नौकर पर...चाहे जिस किसी पर भी।

गोदाम में आए तो सेठजी ने पहरेदार पर हल्का होना चाहा-

''अरे हरामज़ादे हरकू....! अकल मारी गई तेरी....देखता नहीं सारा अनाज धरती पर गिरता जा रहा है।''

''क्या करूँ सेठजी, बोरी फटी हुई है।'' नम्रता से उत्तर दिया गया।

''अबे गधे, हाथ क्यों नहीं लगा लेता। गल जाएगा क्या? शाम को चार रुपये के लिए तो हाथ बड़ी जल्दी फैला देगा और काम धेले का नहीं। स्वर पहले से अधिक कर्कश हो गया था।''

ज़मीन ही कम थी जो पल्लेदारी भी करनी पड़ती थी। बोझ से निकलकर नज़र सेठ की तोंद का परिमाप करने लगी-हर साल बढ़ता है, लेकिन वह अनाज पैदा करके, सिर पर उठाकर भी अपने ही अंदर सुकड़ता जा रहा है।

''अरे रुक क्यों गया पाजी! देखता नहीं बादल चढ़ आए हैं, जल्दी माल उतार!'' बादलों की गरज से सेठ का स्वर दब गया था।

''अब मुझसे नहीं उठती बोरी सेठजी!'' वहीं उतार दिया हरकू ने बोझ को।

''नहीं उठती...क्यों? मेरा सारा माल खराब हो जाएगा...चल तुझे शाम को एक रुपया फालतू दूँगा, जल्दी कर।'' सेठ ने लालच फेंका।

''नहीं सेठजी, मुझे भी जाकर अपनी छत को ठीक करना है। सारी टपकती है।''

''अबे रोटी कहाँ से खाएगा..?''

''रोटी तो मैं ही पैदा करता हूँ।''-कहकर हरकू बाहर निकल आया। पानी गिरने लगा। सेठ ने बहुत लालच दिया पर कोई मज़दूर काम पर नहीं आया।

सामने गरीब बस्ती में मज़दूर अपनी छतों पर मिट्टी चढ़ा रहे थे। वर्षा तीव्र होती जा रही थी।

❒

अमेरिका में बसे प्रवासी और उनकी काव्य साधना- एक नज़र

मंजु मिश्रा

प्रवासी होने भर से ही न तो हम पराये हो जाते हैं और न ही असंवेदनशील! फिर हमारे अपने ही लोगों द्वारा हमें प्रवासी और हमारे साहित्य को प्रवासी साहित्य कह कर मुख्यधारा से काटने की कोशिशें क्यों की जाती हैं?

जीवन के अनुभव एवं हृदय की भावनाओं को व्यक्त करने की छटपटाहट एवं अपनी मिट्टी और भाषा से जुड़ाव, हम प्रवासियों को हमेशा ही अभिव्यक्ति के लिए मजबूर करता रहता है, और इस बात का सार्थक एवं सशक्त प्रमाण है अमेरिका में बसे हुए कवियों की सतत सृजन यात्रा।

यूँ विदेश की धरती पर रहते हुए, हवा के विपरीत चलते हुए, मिली-जुली संस्कृति के अनुभवों को अपने देश की भाषा और परिप्रेक्ष्य से जोड़ते हुए अभिव्यक्त करना अपने आप में एक बहुत ही चुनौतीपूर्ण कार्य है और इस चुनौती को सफलता पूर्वक निभाना भी एक बड़ी उपलब्धि मानी जा सकती है। जीवन की आपा-धापी में व्यस्त रहते हुए भी अमेरिका में हिन्दी कविता से जुड़े लोगों की बात करें तो ऐसे समर्थ काव्य साधकों की सूची बहुत लम्बी है, जो अपने प्रयासों से वैश्विक स्तर पर कविता का गौरव बढ़ा रहे हैं।

कुछ कवियों की रचनाओं पर चर्चा कर रही हूँ, जिनका अमेरिका के काव्य साहित्य में महत्त्वपूर्ण योगदान है।

ओहायो प्रान्त की सुदर्शन प्रियदर्शिनी कहानीकार, उपन्यासकार एवं कवयित्री हैं और इनकी कविताएँ वजूद को तलाशती, धीर-गंभीर हैं। लटकी हुई हैं बर्फ़ सी / गिलहरियाँ / मेरे वजूद की यहाँ..../ डरी-डरी / सहमी-सी / थामे ठहनियाँ। सुदर्शन जी की कविताओं का मूल स्वर नैराश्य भाव लिये है।

नॉर्थ कैरोलाइना में बसी प्रतिष्ठित कथाकार, कवयित्री सुधा ओम ढींगरा नाटक, थियेटर, साक्षात्कार, कविता, कहानी, सारी विधाओं पर समान रूप से महारत रखती हैं, उनकी कविताओं में ज़िन्दगी के इंद्रधनुषी रंग नज़र आते हैं। सुधा जी की कविताएँ सिर्फ कविता भर नहीं होतीं, वो ज़िन्दगी का फलसफा होती हैं, उनकी एक रचना की कुछ पंक्तियाँ....'जीवन की भट्ठी में / भावनाएँ / संवेग / अभिलाषाएँ / इच्छाएँ/ दानों सी भून डालीं / जीवन का साथ फिर भी ना मिला / ज़िन्दगी बालू सी हाथ से सरक गई।'

लॉस एंजेल्स में रहने वाली रचना श्रीवास्तव की रचनाएँ हमारी ज़िन्दगी के बहुत करीब से जुड़ी होती हैं। रिश्तों को बहुत बारीकी से परखती है उनकी नज़र.. बहुत सरल शब्दों में व्यक्त करती हैं वो अपने भाव, जो सीधे दिल को छूते हैं.. उनकी एक छोटी कविता 'माँ' से कुछ पंक्तियाँ--'माँ रिश्तों के गुलदान में रोज़ ही सजाती संवेदनाओं के नए पुष्प / डालती स्नेह का छींटा ताकि बनी रहे ताज़गी पुराने रिश्तों में।' रचना जी की एक अलग तेवर की यह रचना भी क़ाबिले तारीफ है, जो अत्यन्त कम शब्दों में हमारे समाज में नारी की स्थिति बयान करती है-'लड़कियाँ / माँ, बहन, पत्नी / सब समझी जाती हैं / पर इन्सान नहीं।' रचना कविता, कहानी, लेख, साक्षात्कार सभी विधाओं में सक्रिय हैं, वो अवधी में भी लिखती हैं तथा अनुवाद भी करती हैं।

अमेरिका के न्यूजर्सी में रहने वाले अनूप भार्गव का हिन्दी कविताओं के प्रति समर्पण भाव अद्भुत है। उनकी कविताएँ और बिम्ब अनुपम होते हैं। उनकी एक अत्यंत छोटी मात्र १६ शब्दों की कविता लेकिन भाव और अर्थ कितने गूढ़ हैं-'जज़्बातों की उठती आँधी, हम किसको दोषी ठहराते, लम्हे भर का क़र्ज़

कैलिफ़ोर्निया की मंजु मिश्रा हिंदी साहित्य में एम.ए. हैं और पेशे से प्रबंधन क्षेत्र में कार्यरत हैं। 'ज़िंदगी यूँ तो' काव्य संग्रह है और देश-विदेश की हिन्दी की मुद्रित एवं अंतर्जाल की प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। ५० से अधिक हाइकू, क्षणिका, मुक्तक इत्यादि विभिन्न संकलनो में सहभागिता। अखिल भारतीय मंचीय कवि पीठ, उत्तर प्रदेश द्वारा आयोजित अंतर्राष्ट्रीय हिंदी कविता समारोह-२०१४ में विश्व हिंदी सेवा सम्मान से सम्मानित।
संपर्क-3966 Churchill Dr, Pleasanton CA 94588
Manjumishra@gmail.com

लिया था सदियाँ बीत गईं लौटाते।'

न्यूजर्सी की ही रजनी भार्गव हैं उनकी रचनाएँ पढ़ते हुए रेखा-चित्र सी अनुभूति होती है। उनकी रचनाएँ सीधे पाठक के हृदयतल तक पहुँचती हैं और उनके भाव काफी गहरे तक पैठ कर पाठक से संवाद स्थापित करते हैं। 'बर्फ़ की दोपहरी, शीशम के परदे, आड़ी-तिरछी धूप / इस पीली धूप में, लम्बे पेड़ की परछाइयाँ जब, मेघ पर आ बैठी थीं और, तुमने मेरी गुनगुनी पीठ पर / अपना नाम फूँक कर गोद दिया था' या फिर यह 'धूप आँगन में उतरी, साँप सीढ़ी के पल बने, सलेटी आसमान में रंगीन पतंगें लहराईं, डोर को उँगली में लपेटे मैं तारों को खींच लाई / सर्द हवा को मफलर में छुपकर / हाथ की तपिश से बर्फ पिघलाई।'

न्यूजर्सी की एक और कवयित्री तथा कथाकार हैं अनिल प्रभा कुमार। इनकी कविताओं में एक शालीन विद्रोह है तथा आशा और आस्था का नीर है। 'बेटियाँ कोख में मरती रहीं/ और द्रौपदियाँ नग्न होती रहीं/ और तुम आँखों में बाँधे पट्टी/ गौरवान्वित होती रहीं/ माँओं, गांधारियों, नारियों/ खोल दो / आँखों पर बँधी इस पट्टी को/ झुलसा दो / उन घिनौने हाथों को / जो बढ़ रहे हैं नोचने तुम्हारे अंश को।' कविताओं का मूल स्वर विद्रोह का बिगुल बजाता लगता है।

क्यूपर्टिनो में रहने वाले संजय माथुर की रचनाएँ जितनी साधारण दिखती हैं, उतने ही गहरे अर्थ अपने में समेटे होती हैं, ज़िन्दगी के बहुत करीब होती हैं। देखिये एक बानगी इनकी रचनाओं की 'सूरज पकड़ने की ज़िद / भला क्यों / जल जाने का डर है ! / धूप सेंकें / और अपने साये से खेलें / तन को सेंक और मन को ठंडक मिलेगी।'

बे एरिया सेन्होजे में रहने वाली अंशु जौहरी की रचनाओं के तेवर तो निराले ही होते हैं. 'बदलते मौसमों के फलसफे / हमें न सुनाओ ऐ दोस्त ! / हम वो सूखा दरख़्त हैं / जिसने/ मूसलाधार बारिश में / गिरती हुई बिजली को पनाह दी थी।'

वाशिंगटन निवासी राकेश खण्डेलवाल की रचनाएँ भाव, शिल्प, प्रवाह हर दृष्टि से उत्कृष्ट हैं। गीत की कुछ पंक्तियाँ-'दृष्टि को अपनी भिगोकर, गंध में कस्तूरियों की / मैं तुम्हारे रूप का शृंगार कुछ नूतन करूँ तो / ये मेरी अनुभूति का उत्कर्ष ही कहलायेगा।' एक अन्य गीत-'चाहे या अनचाहे / हर पल मिली व्यथा / रही ज़िन्दगी की इकलौती यही कथा / कितनी बार कोशिशें कीं / कुछ नया लिखें /किन्तु परिश्रम सारा ही रह गया वृथा'

कैलिफोर्निया निवासी रेखा मैत्र को पढ़ना एक सुखद अनुभव की अनुभूति सामान है। रेखा जी जीवन के रोज़मर्रा के अनुभवों को बहुत सादगी से लेकिन सशक्त ढंग से अपनी रचनाओं में पेश करती हैं। 'मेरे अपने गीत / मुझे माफ़ी दे देना / जब-जब मैंने तुमको अपने शब्दों का जामा पहनाया/ शब्द शरारती बच्चों जैसे / छूट-छूट कर भाग गए हैं / मुश्किल में आए / तब तक बात बिला जाती है।'

ह्यूस्टन निवासी इला प्रसाद यूँ तो कथाकार हैं, लेकिन इन की कविताएँ भी प्रभावशाली होती हैं। पाठक के हृदय पर गहरी छाप छोड़ती हैं। एक रचना दूरियाँ में व्यक्त वेदना बस देखते ही बनती है ..'सब कुछ बड़ा है यहाँ / आकार में / इस देश की तरह / असुरक्षा, अकेलापन और डर भी / तब भी लौटना नहीं होता / अपने देश में।'

बे एरिया में रहने वाली शकुंतला बहादुर की कविताएँ परंपरागत ढंग से पाठक को ज़िन्दगी की धारणाओं से अवगत कराती हैं। शकुंतला जी ने अपनी रचनाओं में जीवन के लगभग हर पहलू को छुआ है। उनकी कविताओं में जीवन को सार्थक बनाने वाले सन्देश होते हैं। 'समय की सलाइयों पर पलों के फंदों को हम / निरन्तर बुनते ही तो रहते हैं / अतीत को उधेड़ते और भविष्य को बुनते हैं / कभी कुछ घटाते और कभी कुछ बढ़ाते हैं / कुछ याद करते और कुछ बिसराते हैं / कभी कोई पूरा जीवन बुन जाता है / तो किसी का अधूरा छूट जाता है / इसी उधेड़-बुन में / सारा जीवन बीत जाता है।'

फ्रीमोंट निवासी डॉ.अनीता कपूर की मानवीय संवेदनाओं पर बहुत गहरी पकड़ है। अनीता जी की कविताओं में कल्पनाओं की उड़ान अनूठी होती है। हाइकु जैसे सीमित शब्दों के छंद में भी वो अपनी बात किस खूबसूरती कहती हैं .. देखिये एक उदहारण-'माँ तुम सीप / मैं हूँ सीप का मोती / तुझ-सा दिखूँ।' या फिर यह-'जल ही गई / सिगरेट उम्र की / धुआँ भी नहीं।'

फ्रीमोंट में ही रहने वाली नीलू गुप्ता जी को विश्व हिंदी सचिवालय मॉरीशस द्वारा आयोजित कविता प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त हुआ है। उनकी पुरस्कृत कविता, 'यहाँ और वहाँ' की कुछ पंक्तियाँ-'कैसा लगता है यहाँ और कैसा लगता था मुझे वहाँ, सच बात तो यह है कि सभी कुछ मिला है हमें यहाँ, पर न दे पाई यहाँ की ये स्वर्णिम मिट्टी हमें यहाँ, सोंधी भीनी महक जो देती थी मेरे देश की मिट्टी वहाँ, अपनों को छोड़ आई हूँ मैं यहाँ।'

बे एरिया की अर्चना पांडा मंचीय कवियों में एक जाना-माना नाम है। उनकी रचनाएँ और उनकी बेमिसाल प्रस्तुति श्रोताओं के हृदय से भावनात्मक रिश्ता जोड़ती हैं। 'दिल ज़िंदा है वहीं जहाँ आँखों में सपने रहते हैं / परदेस सही, पर देस वही जहाँ सारे अपने रहते हैं।'

सैनरामोन की पल्लवी शर्मा, कैलिफोर्निया की शेफाली गुप्ता, सिएटल के अभिनव शुक्ल, वर्जीनिया की शशि पाधा, अलाबामा की नूतन मिश्रा, सभी काव्य की अलग-अलग विधा में रचनाएँ लिख रहे हैं। सच कहूँ तो अमेरिका के कवियों की यह तो बस एक झलक भर ही है।

भारत से दूर रह अपने हृदय में भारत लिए हुए ये प्रवासी रचनाकार अपने देश, अपनी भाषा, अपनी संस्कृति से अथाह प्रेम करते हैं और इसी प्रेम को व्यक्त करते हुए वो कथा, कहानी, कविता के माध्यम से अपनी संस्कृति को बार-बार जीते हुए, नए साहित्य के सृजन में लगे रहते हैं।

हिन्दी साहित्य तथा विशेष रूप से काव्य को समृद्ध बनाने में इनके अमूल्य योगदान को सिर्फ प्रवासी साहित्य का तमगा दे कर मुख्य धारा से अलग-थलग करके नहीं देखा जाना चाहिए। अच्छे साहित्य को बस अच्छे साहित्य की नज़र से ही देखा और परखा जाना चाहिए।

अपने ये दो शे'र और एक क्षणिका से मैं लेख का समापन करती हूँ-

कश्तियाँ लहरें किनारे यूँ तो सब हैं साथ-साथ
बस कभी मिल बैठ कर गुफ़्तगू होती नहीं।।

.....

पीले पड़े तो शाख ने भी पत्ते गिरा दिये
वक्त बुरा हो तो भला कौन साथ देता है।।

.....

चाँदनी
तारों के बटन लिये हाथ में
ढूँढ़ती रही
रात भर
कुरता
चाँद की नाप का!

❑

गीत

विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में रजनी मोरवाल के गीत, नवगीत, कविता, लघुकथा, कहानी, लेख आदि का निरन्तर प्रकाशन। अहमदाबाद की रजनी मोरवाल के 'सेमल के गाँव से' कविता संग्रह और दो गीत संग्रह हैं 'धूप उतर आई' और 'अँजुरी भर प्रीति'। कई सम्मानों से सम्मानित हैं।
संपर्क: सी-२०४, संगाथ प्लेटिना, मोटेरा, अहमदाबाद-३८०००५
rajani_morwal@yahoo.com

जब से तुम परदेश बसे

स्वप्न सभी वीरान हो गए
जब से तुम परदेश बसे हो।

परख लिया बैरी दुनिया को
दु:ख में संगी कब कोई है ?
बरसों से बिरहा की बदली
सुधियों के आँगन रोई है,
रिश्ते भी अनजान हो गए
जब से तुम परदेश बसे हो।

भीगा मन रो-रोकर बाँधे
पोर-पोर टूटन की डोरी,
सावन को दिखलाई हैं मैंने
तन की सब सीमाएँ कोरी,
संवेदन सुनसान हो गए
जब से तुम परदेश बसे हो।

साँस-साँस पर नाम लिखा है
धड़कन भी नीलाम हुई है,
सिहरन की बाँहें अलसाईं
देखो अब तो शाम हुई है,
दर्द स्वयं पहचान हो गए
जब से तुम परदेश बसे हो।

ooo

जवाँ जब चाँद इठलाया

न पूछो किस तरह कटी विरह में चाँदनी की रात
परेशाँ मन भटककर रह गया जैसे अधूरी बात।

नहीं संयम रहा खुद पर
जवाँ जब चाँद इठलाया,
खिली चंपा की ख़ुशबू ने
महकता इत्र बिखराया।

सिसकती रात में बस काँपता है मौन पीपल पात।

कि सिरहन ने गवाही दे रहे
तन पर कसे तेवर,
लगा खुलकर बिखरने को हुए
ढीले पड़े ज़ेवर।

दहकती कामनाओं ने दबे पाँवों लगाई घात।

हुई बेचैन अब साँसें
ठिकाने को तरसती-सी,
मिलन की आस में
ठहराव के दर पर बरसती-सी।

मगर यौवन सँभलकर दे रहा था लालसा को मात।

ooo

दोस्त सयाने

छलक गए आख़िर इस पल में
उनकी नफ़रत के पैमाने।

मुसकानें अधरों पर लादे
वर्षों तक जो साथ चले थे,
या यूँ कह लो गर्दन तक वे
अहसानों के बोझ तले थे,

आँख चुराते फिरते हैं अब
दुश्मन बनकर दोस्त सयाने।

कविता की गलियों ने जब भी
कभी हमारा साथ कराया,
हाथ मिलाकर बढ़े दोमुँहे
जैसे कोई श्राद्ध सिराया,

नाम हुआ जब कुछ मेरा तो
लगे बिचारे वे घबराने।

ताने दे-दे हार थके जब
उलाहनों के झाड़ उगाए,
शब्दों के कोड़े लेकर के
वार पीठ पर है बरसाए,

मैंने तो बस हँसकर झेले
सभी तीर जो लगे निशाने।

❒

कविताएँ

श्रीनगर (गढ़वाल), उत्तराखण्ड की डॉ. कविता भट्ट का एक काव्य-संग्रह है और लगभग तीस शोध-पत्र एवं अनेकों कविताएँ प्रकाशित। स्नातकोत्तर-दर्शनशास्त्र, योग, अंग्रेज़ी, समाजकार्य। डिप्लोमा-योगशिक्षा, महिला-सशक्तीकरण, डी.फिल.-दर्शनशास्त्र (योगदर्शन) संपर्क: दर्शनशास्त्र विभाग, हे.न.ब. गढ़वाल केन्द्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर (गढ़वाल), उत्तराखण्ड।
mrs.kavitabhatt@gmail.com

वह अब भी ढो रही है

अस्थियों के कंकाल शरीर को
वह आहें भर, अब भी ढो रही है,
जब अटूट श्वासों की उष्णता,
जीवन की परिभाषा खो रही है।
अब भी पल्लू सिर पर रखे हुए,
आडम्बर के संस्कारों में जीवन डुबो रही है।
क्या लौहनिर्मित है यह सिर या कमर?
जिस पर पहाड़ी नारी पशुवत् बोझे ढो रही है।
जहाँ मानवाधिकार तक नहीं प्राप्य
वहाँ महिला-अधिकारों की बात हो रही है।
इस लोकतन्त्र पंचायतराज में वह अब भी,
वास्तविक प्रधान-हस्ताक्षर की बाट जोह रही है।
नशे में झूम रहा है पुरुषत्व किन्तु,
ठेकों को बन्द करने के सपने सँजो रही है।
कहीं तो सवेरा होगा इस आस में,
रात का अँधियारा अश्रुओं से धो रही है।
पशुवत् पुरुषत्व की प्रताड़नाएँ,
ममतामयी फिर भी परम्परा ढो रही है।
पत्थर-मिट्टी के छप्पर जैसे घर में,
धुएँ में घुटी, खेतों में खपकर मिट्टी हो रही है।
शहरी संवर्ग का प्रश्न नहीं,
पीड़ा ग्रामीण अंचलों को हो रही है
वातानुकूलित कक्षों की वार्ताएँ-निरर्थक, निष्फल,
यहाँ पहाड़ी-ग्रामीण महिलाओं की
चर्चा हो रही है।
एक ओर महिलाओं की बुलन्दियों के झण्डे गड़े हैं,
दूसरी ओर महिला स्वतन्त्रता
बैसाखियाँ सँजो रही है।
०००

बूढ़ा पहाड़ी घर

तुम्हें बुला रहा, मैं, तुम्हारा, बूढ़ा पहाड़ी घर,
कंक्रीट-अरण्यों से चले आओ निकलकर।
माना तुम्हारे आस-पास होंगें आकाशचुम्बी भवन,
परन्तु क्या ये घरौंदा नहीं अब तुम्हें नहीं स्मरण?
खेले-कूदे जिसकी गोदी में, धूल-मिट्टी से सन
जहाँ तुमने बिताया, अपना प्यारा-नन्हा सा बचपन।
तुम्हें बुला रहा, मैं, तुम्हारा, बूढ़ा पहाड़ी घर,
कंक्रीट-अरण्यों से चले आओ निकलकर।
तुम्हारे पिता को मैं अतिशय था प्यारा,
उन्होंने उम्र भर मेरी छत-आँगन को सँवारा।
चार पत्थर चिने थे, लगा मिट्टी और कंकर,
लीपा था मेरी चार दीवारों पर मिट्टी-गोबर।
उन्होंने तराशे थे जो चौखट और लकड़ी के दर,
लगी उनमें दीमक हुए जीर्ण-शीर्ण और जर्जर।
तुम्हें बुला रहा, मैं, तुम्हारा, बूढ़ा पहाड़ी घर,
कंक्रीट-अरण्यों से चले आओ निकलकर।
चार पौधे लगाये थे जो पसीना बहाकर,
सिर्फ़ वे ही खड़े हैं मुझ बूढ़े के पास
बूढ़े वृक्ष बनकर।
जो संदूक रखे थे मेरी छत के नीचे ढककर,
जंग खा गये वो पठालियों से पानी टपककर।
उसी में रखी थी तुम्हारे बचपन की स्मृतियाँ संजोकर,
धगुलियाँ, हँसुली, कपड़े तुम्हारी माँ ने सँभालकर।
तुम्हें बुला रहा, मैं, तुम्हारा, बूढ़ा पहाड़ी घर,
कंक्रीट-अरण्यों से चले आओ निकलकर।
थी रसोई, चूल्हा बनाया था,
माँ ने लगा मिट्टी-गोबर,
मुँगरी-कोदे की रोटी बनायी थी करारी सेंक कर।
मेरी स्मृतियों में कर रहा है विचरण,
तुम्हारा ठुमकना, रोटी का टुकड़ा हाथों में लेकर।

काल-परिवर्तन का मुझे आभास न था तब,
तुम्हें ले जायेगा, यह रोटी का टुकड़ा
मीलों दूर अब।
और खो जाएँगी तुम्हारी अठखेलियाँ सिमटकर,
रह जाओगे तुम कंक्रीट के भवनों में खोकर।
तुम्हें बुला रहा, मैं, तुम्हारा, बूढ़ा पहाड़ी घर,
कंक्रीट-अरण्यों से चले आओ निकलकर।
तुम्हें तो मैं विस्मृत हो चुका हूँ,
किंतु तुम्हारी प्रतीक्षा में मैं बूढ़ा घर खड़ा हूँ।
अभी भी मैं हर घड़ी-पल यही सोचता हूँ,
अभी भी मैं रोता हूँ और समय को कोसता हूँ।
क्या अब मैं मात्र भूखापन ही परोस सकता हूँ?
या वह रोटी का टुकड़ा तुम्हें मैं पुन: दे सकता हूँ?
कहीं न उलझ जाना इन प्रश्नों में खोकर,
अब भी रह सकते हैं हम सहजीवी बनकर।
तुम्हें बुला रहा, मैं, तुम्हारा, बूढ़ा पहाड़ी घर,
कंक्रीट-अरण्यों से चले आओ निकलकर।
तुमको मैं दूँगा बिना मोल आश्रय-प्रेम जी भर,
और तुम मुझको देना वही बचपन का आभास भर।
अपनी संतानों के बचपन में जाना ढल,
और दे देना मुझे बचपन का वह प्रेम निष्छल।
आ सकोगे मुझ बूढ़े का मर्मस्पर्शी निमंत्रण पाकर?
माता-पिता की अंतिम इच्छाओं को सम्मान देकर।
निर्णय तुम्हारा है.............आमंत्रण मेरा है!
तुम्हारी प्रतीक्षा में मैं, तुम्हारा, बूढ़ा पहाड़ी घर,
कंक्रीट-अरण्यों से चले आओ निकलकर।
❐

कविताएँ

दिल्ली विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर प्रिया राणा युवा कवयित्री एवं स्त्री विमर्शक हैं। कई पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं।
संपर्क: 901 ई, राणा प्रताप गली नंबर 2, छज्जू गेट के पास, बाबरपुर, शाहदरा, दिल्ली 32
priyarana1504@gmail.com

संसद में औरत

संसदों की इस दुनिया में
आज भी फैसले नहीं होते खास
फिर भी जहाँ देखो वहाँ
संसद ही संसद है....

मेरे पड़ोस का हर घर संसद है
हर नुक्कड़, गली का चौराहा
क्या गाँव, क्या शहर
हर तरफ संसद है..

एक औरत के लिए
इन्ही संसदों में स्वतंत्रता की
उसकी लंबाई बढ़ाई
तो कभी घटाई जाती है
और
हज़ारों तोहमतें लगाई जाती हैं..

इन्ही संसदों में होते है
उसके वजूद के फैसले
जहाँ औरत कभी ऐसी तो
कभी वैसी बनाई जाती है.....

तैयार होते है यहाँ
नए-नए कानून
बंदिशों के लिहाफ में
लिपटे हुए
सुरक्षा के बहाने से उन पर
मोहर लगाई जाती हैं..

संसदों की इस दुनिया में देखो
कैसे हर रोज़
औरत होने की सज़ा पाई जाती है
और वजूद के उसकी
धज्जियाँ उड़ाई जाती हैं।
❐

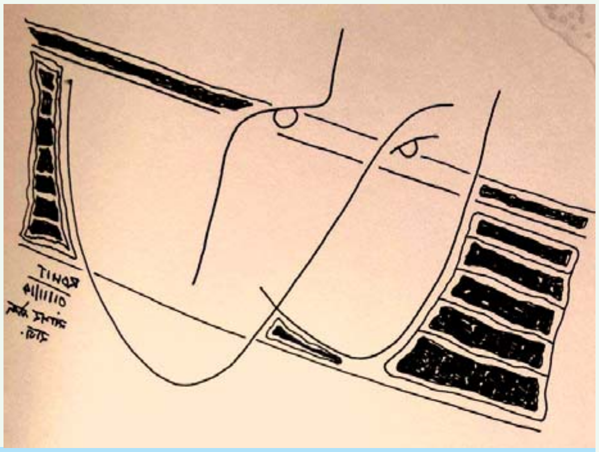

इलाहाबाद की प्रेम गुप्ता 'मानी' के अनुभूत, दस्तावेज़, मुझे आकाश दो, काथम (संपादित कथा संग्रह), लाल सूरज (17 कहानियों का एकल कथा संग्रह), शब्द भर नहीं है ज़िन्दगी, अगले जनम मोहे बिटिया न कीजो (कविता संग्रह),सवाल-दर-सवाल (लघुकथा संग्रह) और यह सच डराता है (संस्मरणात्मक संग्रह)हैं।
संपर्क: एम.आई.जी-२९२,कैलाश विहार, आवास विकास योजना सं-एक, कल्याणपुर, कानपुर-२०८०१७ (उ.प्र)
premgupta.mani.knpr@gmail.com

कुछ अजीब नहीं लगता

कितना अजीब लगता है
कभी-कभी
बिम्ब-प्रतिबिम्ब के माध्यम से
खुद को परखना
खुरचना
अपनी छाती में जमे सवालों को
या बंद मुट्ठी से
रेत सी गिराना
अपने अहम को
सूरज की आँच से पिघलते हुए
कितना कठिन है
गर्म रेत पर चलना
और किसी भूखे बच्चे के मुँह से
दूध छीन कर
अपने सफ़ेद नर्म रोएं वाले
गुदगुदे पिल्ले को पिलाना
पर हम यह सब करते हैं
संस्कृतिवान् बनने की भूख
हमें कहाँ ले जा रही है...
सोचने का वक़्त कहाँ है?
आगे, सबसे आगे जाने की चाह
बिम्ब-प्रतिबिम्ब को धूमिल करती है
फिर,
बस...रेल व तीर्थ की रेलमपेल में
रोज़-ब-रोज़ मरते लोग
भूखे बच्चे
अणुबम के धमाके
अपने ही बहेलिए के हाथों
पल-पल मरती औरत
झक्क-सफ़ेद कपड़ों के भीतर
गहरे पैठ बनाती काली आत्मा
मासूम बच्चों के कोमल अंगो का खुला बाज़ार
काली...कोलतार सनी सड़क पर
उतरता कोठा
समन्दर की गहराई को अपने भीतर समेटे
नीला इन्द्रधनुषी आकाश
चिमनियों के धुएँ से आज पूरा काला हो चुका है
पर फिर भी...
हमें,
कुछ भी अजीब नहीं लगता
सिवा...खिली हुई ज़िन्दगी के...
❐

कविताएँ

गुड़गाँव की सुशीला शिवराण की कविताएँ और हाइकु कई पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। हाइकु, ताँका और सेदोका संकलनों में रचनाएँ सम्मिलित। जयपुर लिटरेचर फ़ेस्टिवल एवं बीकानेर साहित्य एवं कला उत्सव में एक रचनाकार के रुप में काव्यपाठ।
sushilashivran@gmail.com

धरती उम्मीद से है

प्रेमी अंबर
दग्ध प्रेयसी धरा के लिए
बरस पड़ता है बनके मेघ।
प्यासी धरती
सोखती है बूँद-बूँद
अंबर का प्रेम।
प्रेम की सौंधी महक
उठती है धरती के बदन से
धरती की कोख में
बीज देता है अंबर
पूरी की पूरी सृष्टि।
बेकल धरती
हो जाती है तृप्त
जानते नहीं
धरती उम्मीद से है!
०००

एक नई भोर

तुम पुरुष हो ना
क्यों न हो तुममें दंभ
तुम पैदा ही ताकतवर हुए
तुम्हारा बनाया समाज
ख़ूब पोसता है तुम्हारे दंभ को
सिखाता है तुम्हें
कि तमाम कमियों
तमाम ख़ामियों के बावज़ूद
तुम्हीं हो मुखिया
घर-संसार के मालिक
रखना ही होगा तुम्हें अंकुश
कि स्त्रियाँ
अगर लाँघ गईं देहरी
तो नाप लेंगी आकाश!
सदियों से
बह रहा है सामंतवाद
तुम्हारी नस-नस में
और
छटपटा रही हैं स्त्रियाँ
आज भी
एक गवाक्ष को....

नैराश्य के अंधकार में
देख कुछ उम्मीद के जुगनू
स्त्री के जुझारू सपने
पा लेते हैं नया हौंसला
जुटाते हैं सारी ताकत
तौलते हैं पंख
भरते हैं उड़ान
अनजान क्षितिज की ओर ....
साथ है उनके
कुछ जुगनुओं की रोशनी
उम्मीद की डोर
कि क्षितिज के पार
खड़ी है बाँहें फ़ैलाए
एक नई भोर।
०००

डर

कच्ची उम्र के अबोध मन में
रोप दिए जाने कितने डर-
हिफाज़त के नाम पर
बढ़ती रहीं पाबंदियाँ
वय के साथ बढ़ते अजाने डर
कोरे मन में बिठाए गए
किस्म-किस्म के डर-
अजनबियों का डर
कभी अजाने अँधेरों का डर
खिलखिलाती हँसी का डर
सपनों का डर
किशोर मन
पहचानने लगा था
अपनी देह के इर्द-गिर्द
उभरते नए-नए डर-
शिकारी आँखों की सरगर्मियाँ
अनजाने रास्तों पर घिर जाने का डर
निरापद घर में ताकती भूखी निगाहें
अपनेपन के मुखौटे ओढ़े
भेड़ियों का डर
चढ़ती उम्र के साथ
बढ़ते रहे यों भांति-भांति के डर
मेलों और बाज़ारों में
गलियों और गलियारों में
हर मोड़ पर बेखौफ़ विचरती
नज़रों की दहशत
सफ़र में सरसराते लिजलिजे स्पर्श
रोज़ी के ठौर-ठिकानों में
इश्किया कारिन्दों का डर
बॉस की बेहया बदनीयती का डर
पस्त होते हौंसलों के पर
हावी होती दहशत की परछाइयाँ
आपसी रिश्तों में पनपता लोभ का नासूर

जननी की पावन कोख में पलती
अजन्मी बेटियों पर मौत का डर
बस कट रही है ज़िंदगी
जी रही है जननी-बेटी-भार्या-भगिनी
देह की संधियों में पसर रहा है
वही विषैला डर
आहिस्ता-आहिस्ता
डर के अदीखे बंधनों में मौन-मूक-बेबस
गहराती जा रही है रात
घुलकर विलीन हो जाना
गोया नियति हो जैसे-
स्त्री की अस्मिता का
होना तार-तार उन हाथों
होता है जिन पर
सुरक्षा का भार।
❐

कविताएँ

अभिनव शुक्ल दो बार अमेरिका में वृहद् काव्य यात्रा कर चुके हैं। फिलहाल सिएटल में एक प्रतिष्ठित कम्प्यूटर सम्बन्धी प्रतिष्ठान के गुणवत्ता विभाग में कार्यरत हैं तथा अपनी कविताओं की सुगंध सारे संसार में बसे भारतीयों के ह्रदय में बिखेर रहे हैं। देश-विदेश की लगभग पचास संस्थाएँ सम्मानित कर चुकी हैं। उनका नया काव्य संग्रह 'हम भी वापस जाएंगे' है।

भाषा

मौन की भाषा को समझना,
फिर भी सरल है,
कठिन तो होता है,
शब्दों के वास्तविक अर्थ को जानना,
भाषा में छिपे मौन को पहचानना.
ooo

लोग

मिलते ही गले लग जाते थे,
हाथ पकड़े-पकड़े करते थे बात,
कंधे में हाथ डाले घुमा लाते थे बाज़ार,
बाँह को तकिया बना कर सो जाते थे,
उड़ेल कर रख देते थे,
अपनी बातों में अपने दिल को,
भूत-प्रेत के सच्चे किस्से सुनाते,
टूटे-फूटे स्वरों में मन का गीत गुनगुनाते,
मुस्कुराते, उजले,
कैसे लोग थे जो ये सब कर लेते थे,
मैं तो ठीक से 'हैलो' कहना नहीं सीख पाया हूँ
आज तक।
ooo

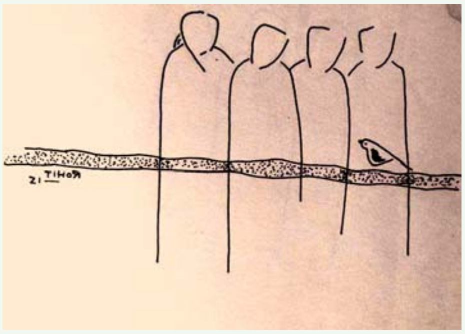

चिड़िया

चहचहा कर एक चिड़िया उड़ चली,
इस पेड़ से उस पेड़ तक,
उस पेड़ से उस पेड़ तक,
उस पेड़ से फिर इस पेड़ तक,
वह किसी भी पेड़ पर ज़्यादा देर नहीं रुकी,
पर जब तक रुकी, चहचहाई,
और चहचहाते हुए ही उड़ी,
पेड़ के पत्तों ने उसके गीत पर नृत्य किया,
वे अभी भी झूम रहे हैं,
जबकि चिड़िया जा चुकी है,
हम भी तो जीवन में कितने पेड़ों से गुज़रे हैं,
हमसे कितनी अच्छी है ये नन्हीं सी चिड़िया।
ooo

मैंने कल दीवारों पर कुछ चित्र बनाए

मैंने कल दीवारों पर कुछ चित्र बनाए,
आज सुबह तक जग कर उनमें रंग भरे,
फिर कुछ दूर बैठ ज़मीं पर,
जब उन सबको देख रहा था,
उनमें खुद को ढूँढ़ रहा था,
तभी कहीं से उड़ता-उड़ता,
मंद पवन का झोंका आया,
मेरी आँखें बंद हो गईं,
मैं सपनों में डूब गया।
आँख खुली जब,
तब यह पाया,
रंग वो सारे बदल चुके हैं,
दीवारों के पास गया तो,
दिल ने ये महसूस किया कि,
दीवारें ही बदल चुकी थीं,
अगर किसी ने वो दीवारें,
कभी कहीं पर देखीं हों तो,
मुझको लेकर वापस कर दे,
वो बदरंग पुरानी मिट्टी,
गोबर से लिपी दीवारें,
बदले में ये चमचम करती,
नई दीवारें ले जाए,
इनमें मुझको डर लगता है,
उनमें से खुशबू आती थी,
इनमें हूँ मैं कैद हो गया,
पर वो मुझको बहलाती थीं,
वो दीवारें जिन पर मेरे,
सपनों के कुछ चित्र बने हैं,
वो दीवारें जिनके आगे,
खुशियों का एक गाँव बसा है,
मैंने कल दीवारों पर कुछ चित्र बनाये।
ooo

यूँ लगता है जैसे मानो

रेत का सागर,
घने बवंडर,
धूल की आँधी,
तपता सूरज,
शुष्क दिशाएँ,
प्यासा सूरज,
जलती हुई एकाकी राह,
पार करी है,
और तुम्हारे पास बैठकर,
यूँ लगता है जैसे मानो,
शीतल जल के मृदु स्रोतों में,
तन विचरण करता आया हो।
रात अधूरी बात सी कट कर,
दिन में जा मिल जाएगी,
विश्वासों की यदि मृत्तिका,
अमर बेल खिल जाएगी,
पुनः दूर होंगे,
हम और तुम,
अंतर्मन के इक कोने में,
साथ रहेगा,
अपना हर पल,
स्वप्नों की फैलेगी चादर,
स्मृतियों की रेत का सागर,
घने बवंडर।
❑

कविताएँ

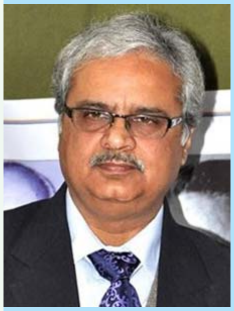

सौरभ पाण्डेय ई-पत्रिका ओपन बुक्स ऑनलाइन डॉट कॉम प्रबन्धन मण्डल के सदस्य हैं। काव्य-संकलन 'परों को खोलते हुए' का संपादन। काव्य-संग्रह 'इकड़ियाँ जेबी से' प्रकाशित। त्रैमासिक पत्रिका 'विश्वगाथा' के परामर्शदात्री सदस्य। रचनाएँ विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित।
एम-II / ए-१७, ए.डी.ए. कॉलोनी,
नैनी, इलाहाबाद-२११ ००८ (उप्र)
संपर्क : ०९९१९८८९९११
saurabh312@gmail.com

नदी, जिसका पानी लाल है

संताप और क्षोभ

इनके मध्य नैराश्य की नदी बहती है, जिसका पानी लाल है।
जगत-व्यवहार उग आए द्वीपों-सा अपनी उपस्थिति जताते हैं,
इस नदी की यह हताशा है--
कि, वह बहुत गहरी नहीं बही अभी
या, नहीं हो पाई 'आत्मरत' गहरी, कई अर्थों में।
यह तो नैराश्य के नंगेपन को अभी और.. अभी और..
वीभत्स होते देखना चाहती है।

जीवन को निर्णय लेने में ऊहापोह बार-बार तंग करने लगे
तो यह जीवन नहीं मृत्यु की तात्कालिक विवशता है
जिसे जीतना ही है
घात लगाये तेंदुए की तरह...
तेंदुए का बार-बार आना कोई अच्छा संभव नहीं

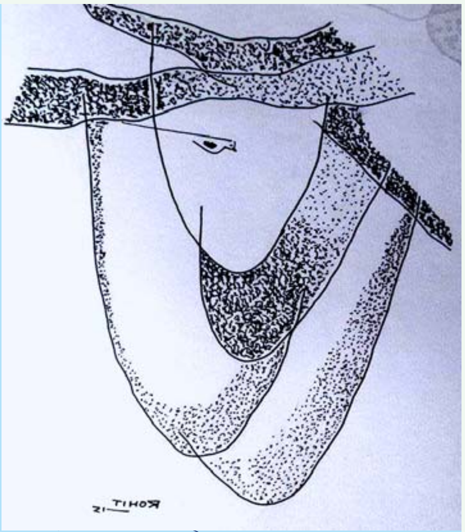

वह बेलाग होता चला जाता है
कसी मुट्ठियों में चाकू थामे दुराग्रही मतावलम्बियों की तरह!
संताप और क्षोभ के किनारे और बँधते जाते हैं
फिर
नैराश्य की नदी और सीमांकित होती जाती है
फिर
ऐसे में जगत-व्यवहार के द्वीपों का यहाँ-वहाँ जीवित रहना
नदी के लिए हताशा ही तो है!

बन्द करो ढूँढ़ना संभावनाएँ.. सम्मिलन की..
मत पीटो नगाड़े...
थूर दो बाँसुरियों के मुँह...
मान लो.. कि रक्त सने होंठों से चूमा जाना
विह्वल प्रेम का पर्याय है...
मांसल सहभोग के पहले की ऐंद्रिक-केलि है
यही हेतु है !

जगत के शामियाने में नैराश्य का कैबरे हो रहा है
जिसका मंच संताप और क्षोभ के उद्गावों ने सजाया है
ऐंद्रिकता का आह्वान है--बाढ़!
जगत-व्यवहारों के द्वीपों को आप्लावित कर मिटाना है...

नदी को आश्वस्ति है
वो बहेगी.. गहरे-गहरे बहेगी..
जिसका पानी लाल है...

❒

शार्लट, नार्थ कैरोलाइना की रेखा भाटिया राष्ट्रवादी और स्त्रीवादी कविताएँ लिखती हैं। शार्लट के रेडियो में भारतीय कार्यक्रमों की संयोजक हैं। नृत्य और चित्रकला में रुचि।

प्रवासी मन

कहाँ खो गया मेरा मन अपनों की पुकार सुनकर,
कहते हैं मुझे वो प्रवासी सीना ठोंक के,
अंश-अंश बिखरा पड़ा है मेरी भावनाओं का,
क्या इतना भी ज्ञान नहीं उन्हें,
एक दर्द, एक टीस लिए जीना कितना कष्टप्रद है।
कितनी माताओं के प्यार को हम तरसे हैं,
जन्मदायी, प्राणदायी, पालनहार,
कई रूप, कई नाम हैं उनके,
एक संग मन लगाया,
फिर भी छूटा नहीं दूसरी का साया,
टुकड़ों में बँटा हुआ मन किसके संग हो ले,
कर्मवीर, धर्मवीर, कर्तव्यशील हैं,
मानवता के भाव लिए हम सहजशील हैं,
अच्छाई निभाने में कहीं कोई बाधा नहीं,
समाज, राजनीति हमारे नैतिक पतन का आधार नहीं,
आशावादी हैं, भ्रष्टाचार से परे,
निडरता से जीते हैं अपनी पहचान लिए,
भारतीय मूल्यों का गहना पहने,
अपनी संस्कृति, सभ्यता की पोशाक ओढ़े,
भाग्य-रेखाओं के खेल में उलझे प्रवासी पंछी हम,
इस मंथन में असमंजित जब नीर बहे मन से,
अहसास दिलाए,
भारतीय बोध से आत्मा अभी गीली है,
कोई समझाए उन्हें
दूरियाँ तो सिर्फ भौगोलिक ही बनी हैं,
सोते-जागते ढूँढ़ते है जिन्हें हर समय हम आसपास,
विश्वास दिलातें हैं वे,
बीते हुए कल का अंशमात्र नहीं है हम!

❒

कविताएँ

दिल्ली की पारुल सिंह बाटनी में पोस्ट ग्रेजुएट गृहिणी हैं। स्पेशल बच्चों व व्यक्तियों के लिए बनी कई राष्ट्रीय व अन्तरराष्टीय संस्थाओं और पेरेन्टस ग्रुप्स से जुड़ी हैं। प्रकृति प्रेमी हैं, नदियाँ, झील, सरोवर, समंदर, पेड़, पर्वत, फूल, तितली आदि आकर्षित करते हैं।
psingh0888@gmail.com

'मैं' और 'तुम'..

'मैं' और 'तुम' की इस लड़ाई में
मेरे पास खोने को सिर्फ गुलामी है
मैं जीत गई तो आज़ादी मिलेगी
और हार गई तो गुलामी खो दूँगी
पर तुम! तुमने सोचा है कभी
तुम्हारा क्या-क्या लग गया दाँव पर.....?
खिड़कियाँ ..

नए मौसमों की दस्तक
जब भी देती हैं हवाएँ
मेरे कमरे की खिड़कियाँ
सिमट कर कुछ और
भिड़ जाती हैं।
गली,मौहल्लों में खुलने वाली खिड़कियाँ
बंद ही रखी जाती हैं।
सदियों से।
०००

मुस्कान..

वो जो इक मुस्कान पड़ी होती है
किसी के होठों के कोनों पर यूँ ही
गैर ज़रूरी, फालतू सी
जिसे किसी को दे भी दो तो
होंठों का कुछ नहीं जाता
उस एक मुस्कान के लिए
कोई उम्र भर तरस कर
मर जाता है।
उस एक मुस्कान का मिल
जाना ही उसकी ज़िन्दगी
की जमानत थी जैसे....
०००

खुली हवा ..

खुले आसमानों की
खुली हवा
तू मुझे बहुत पसंद है सखी
कभी घर आना
मुझे अपने साथ उड़ा ले जाना
हम पहाड़ों को छुएँगे
पेड़ों से आठखेलियाँ करेंगे
समंदर से लड़ेंगे
बादलों से झगड़ेंगे
पर सुन ! तू घर आये, मुझे ना पाये
तो रसोईघर में ढूँढ़ना
या उसके बिस्तर की सिलवटों में
ना मुझे इन जगहों पर पाए तो समझना
सखी!
तुझे आने में देर हो गई
मैं तो कब की चली गई
खुले आसमानों की
खुली हवा ....
०००

कई बार मन करता है.....

कई बार मन करता है
सब छोड़-छाड़ कर
हवा को चीरते हुए
एक सीधी रेखा पर
रोशनी से भी तेज़ चल कर
सेकंड के किसी हिस्से में
क्षितिज के उस पार चली जाऊँ....

क्षितिज के उस पार
लगता है मेरी दुनिया है
मेरी अपनी दुनिया
समुन्दर किनारे दूर तक फैले रेत
पत्थरों, खजूर के पेड़ों और
घने जंगलों वाला टापू है

ऊँचे-ऊँचे पेड़ों से छनती धूप के नीचे
गुलाबी फूलों की लताओं से बने
झूले पर में सो रही हूँ, बेफ़िक्र

कभी शाम ढले समंदर किनारे घूम रही हूँ
नंगे पाँव एक दम अकेली
लहरों से गीली रेत
पैरों के नीचे दरकती
गुदगुदी-सी कर रही है

हवाएँ ! ये हवाएँ मेरी अपनी है
दूर तक घूम कर दौड़ कर देखती हूँ
ये फिज़ाएँ मेरी अपनी हैं
ये मुझसे मेरी साँसों के आने-जाने का
हिसाब नहीं माँगती

ये झूला, ये लहरे मेरे वजूद को नहीं नकारती
ये मुझे अपना कह के खुश हैं
ये सब मेरे हो के खुश हैं

पता नहीं क्षितिज के उस पार
है भी के नहीं मेरी अपनी दुनिया
पर कई बार मन करता है। ..
०००

कई बार मन करता है....

सुन रहे हो,
कई बार मन करता है।
बहुत जी चाहता है, कि
दुनिया की सारी
व्हील चैयर्स के पहियों को
पैरों में तब्दील कर दूँ।
तेज़ दौड़ने वाले पैरों में,
और लगा दूँ उन सब को
जो बैठे हैं उन कुर्सियों पर
कहूँ, जाओ भागो, दौड़ो,
खड़े होकर कैसी दिखती है

ये दुनिया देखो।
चलने से रगों में कैसा
महसूस होता है लहू महसूसों।

कई बार मन करता है।
बहुत जी चाहता है, कि
बिन बाँहों के जो लड़ रहे हैं
दुनिया से
और जो निसक्त पड़े हैं बिस्तरों पर
उन्हें लताओं की बाँहें दे दूँ,
मोगली की फुर्ती दे दूँ,
और कहूँ जाओ,
अब हो जाओ गुत्थम-गुत्था
खूब खेलो कराटे,
चख कर देखो अपने हाथ से
मुँह में निवाला डालने का मज़ा।

कई बार मन करता है।
बहुत जी चाहता है, कि
वो जिनमें कम है अक्ल,कहते हैं हम,
उन्हें थोड़ी मेरी, थोड़ी तुम्हारी
थोड़ी इसकी, थोड़ी उसकी
चुटकियाँ भर-भर अक्ल दे दूँ
कहूँ, के देखो अपने ही सहारे
जीने का मज़ा क्या होता है,
अपने काम खुद करना
कितनी तस्सली देता है, देखो,
अकेले अपने फैसले लेकर,
अकेले रहकर,घूमकर, जीकर, देखो।
और वो जो थोड़ी सी साज़िशें, गोलमाल,
झूठे वायदे,
दुनिया खत्म करने के इरादे,
हम करते हैं
तुम सब भी करो यारों।

मेरा बहुत मन करता है।
सच बहुत जी चाहता है।
पर मैं कुछ भी नहीं कर पाती।
झूठ कहते थे तुम कि
'तुम सब कुछ कर सकती हो'
देखो मैं कुछ नहीं कर सकती।
झूठे हो तुम।
❐

सविता अग्रवाल 'सवि' कैनेडा की हिंदी संस्था हिंदी रायटर्स गिल्ड की सदस्या और इसकी परिचालन निदेशिका हैं। कविताओं के अतिरिक्त लघुकथाएँ, हाइकु और संस्मरण अंतरजाल की और विभिन्न हिंदी पत्रिकाओं में छपते रहते हैं।
savita51@yahoo.com

प्रतिबिम्ब

एक दिन अपनी परिपक्व देह में मैंने
एक अनोखी अनुभूति का अहसास किया
जब अपने तन में मैंने तुम्हारे होने के
अहसास को महसूस किया।
तुमने मेरी देह में अपना अस्तित्व
शनैः शनैः बढ़ने दिया
और मेरे तन से
मेरी हर चाह, हर सोच को
अपने में बसा लिया
जब तुम्हें लगा
तुम मुझ सी बन जाओगी
अपने को इस संसार में लाने का न्योता दिया।
मेरी प्रसव पीड़ा ने, मुझ से ही
एक और मुझ को जन्म दिया
तुम मुझ से पलकर बड़ी हो गईं
पता न चला कब? मैं तुम में एकबार
फिर बड़ी हो गई!
एक दिन अचानक तुम्हारे चित्र में
अपना चेहरा देखा
शायद वह चेहरा मैं स्वयं भूल गई थी।
अपने ही अक्स से अपरिचित थी,
इसलिए तुम्हारे चित्र में मैं अपना अक्स
घंटों देखती रही, तब लगा
मेरे जाने के बाद भी
मैं तुम में, 'मैं' बनकर
जीवित रहूँगी
❐

नीलम मलकानिया... लेखिका, उद्घोषिका और रेडियो जापान की हिन्दी सेवा में भाषा विशेषज्ञ हैं।
siddhimalkania@gmail.com

रूप बदलती औरत

कहती है दुनिया, रूप बदलती है औरत,
टिकता नहीं मन का घड़ा,'त्रिया चरित्र'।
हाँ रूप बदलती है औरत,
फिर बदल देती है सब कुछ।
मछली पकड़ने के काँटे सी,
पड़ी रहती उपेक्षित ख़ामोशी में।
खो अस्तित्व अपना बस इतंज़ार में,
सफलता करके नाम परिवार के।
बन जाती है औरत इक चक्की,
अनायास नुकीली पथरीली राहों से,
हटाती चुभन सख़्त मुसीबतों की।
बिछाती रहती बारीक आटा दुआओं का।
माँ-बीवी होने के दो पाटो में बँटी,
तैयार करती रहती क़िस्मत अपनों की।
वो मथानी भी तो औरत ही है ना,
घूमती रहती अनवरत खट्टी मलाई में।
कड़ी मेहनत से निकाल लाती है,
उजला मक्खन अधिकारों का।
समाज की हर बुराई को छितरा,
मिठास कर देती है अपनों के हवाले।
नीम बन जाती है कभी औरत।
कड़वी-कड़वी और कड़वी,
ना फूल सुंदर ना फल मीठा,
फिर भी जड़ से फुनगी तक,
आती रहती है काम..दातुन,निम्बोली और पत्ती बन...
उफ़्फ़ कितने रूप बदलती है औरत.....
❐

दोहे

अशोक अंजुम के १५ मौलिक और ३५ सम्पादित पुस्तकें प्रकाशित। 'अभिनव प्रयास' त्रैमासिक पत्रिका का संपादन। काव्य मंचों पर व्यंग्य कवि, ग़ज़लकार के रूप में चर्चित। कई सम्मान, पुरस्कार। दोहा संग्रह 'प्रिया तुम्हारा गाँव ' पर ' नीरज पुरस्कार-२०१४'।
संपर्क : स्ट्रीट-२, चन्द्र विहार कॉलोनी (नगला डालचंद) बायपास, अलीगढ-२०२००१
ashokanjumaligarh@gmail.com

ना इसकी परवाह है, ना उसकी परवाह।
बस तेरी ही आरज़ू, बस तेरी ही चाह।।

रोम-रोम झंकृत करे, प्रिया तुम्हारी याद।
चलो अभी करते रहें, सपनों में संवाद।।

सारे के सारे मिले, जो भेजे पैग़ाम।
जब-जब आईं हिचकियाँ, लिया आपका नाम।

कैसे लगे समाधि अब, कैसे कम हो भार।
राग-रंग ले मेनका, खड़ी हृदय के द्वार।।

कहना था हमको बहुत, शब्द हुए सब मौन।
आँखों के संवाद को, देखें रोके कौन।।

रात गई करवट लिए, हुई रसपगी भोर।
खुली खिड़कियाँ आपकी, मन में उठीं हिलोर।।

अरे वक्त! दे तो जरा, पल-भर को विश्राम।
पगले लिखना है मुझे, पत्र प्रिया के नाम।।

लोग लगे जब बाँटने, पग-पग पर अंगार।
मूरत निकला बर्फ की, तेरा-मेरा प्यार।।

रथ के पीछे धूल थी, आँसू भीगे गाल।
ख़्वाबों में मिलते रहे, रेशम के रूमाल।।

भोला देवर क्या करे, दौड़े सुबहो-शाम।
छोटी भाभी माँगती, फिर-फिर खट्टे आम।।

निभ पाता कैसे भला, तेरा-मेरा प्यार।
तेरे-मेरे बीच थी 'मैं' की इक दीवार।।

आमंत्रण था आँख में, किंतु होंठ थे मौन।
समय रुका किसके लिए, दोषी बोलो कौन।।

तुमने छेड़े प्रेम के, ऐसे तार हुजूर।
बजते रहते हैं सदा, तन-मन में सन्तूर।।

मधुमय बन्धन बाँधकर, कल लौटी बारात।
हरी काँच की चूड़ियाँ, खनकीं सारी रात।।

आवेदन ये प्रेम का, प्रिये! किया स्वीकार।
होठों के हस्ताक्षर, बाकी हैं सरकार।।

मिले ओठ से ओठ यूँ, देह हुई झनकार।
सहसा मिल जाएँ कभी, बिजली के दो तार।।

आमंत्रण देता रहा, प्रिया तुम्हारा गाँव।
सपनों में चलते रहे, रात-रात भर पाँव।।

प्रिये तुम्हारा गाँव है, जादू का संसार।
पलक झपकते बीततीं, सदियाँ कई हज़ार।।

प्रिये तुम्हारे गाँव की, अजब-निराली रीत।
हवा छेड़ती प्रेम-धुन, पत्थर गाते गीत।।

तोड़ सको तो तोड़ लो, तुम हमसे सम्बंध।
अंग-अंग पर लिख दिए, हमने प्रेम-निबंध।।

कौन पहल पहले करे, चुप्पी तोड़े कौन।
यूँ बिस्तर की सलवटें, रहीं रात-भर मौन।।

धूल झाड़कर जब पढ़ीं, यादों जड़ी किताब।
हर पन्ने पर मिल गए, सूखे हुए गुलाब।।

खुशबू से मन भर गया, खिले याद के फूल।
मैं तुम में गुम हो गया, तोड़े सभी उसूल।।

मैं तुमको दूँगा भुला, तुम भी जाना भूल।
मैने कहा 'कबूल है?', उसने कहा 'कबूल '।।

❒

ग़ज़ल

सुशील ठाकुर साहिल की तीन ग़ज़लें

***

कई साल से हम न जागे न सोये
कभी तुम भी रोये कभी हम भी रोये

इसी शह्र में दोनों का है बसेरा
इधर मैं भी खोया उधर तुम भी खोये

जो लेकर गए थे उम्मीदें वफ़ा की
चले आ रहे है वो आँखें भिगोये

कहा जिसको नापाक दरिया उसी में
सहारत की ख़ातिर बदन को डुबोये

निखार आये गुल पर न ज़ीनत बढ़ेगी
जो शबनम कली पर न मोती पिरोये

***

किसी मासूम की बेचारगी आवाज़ देती है
मुझे मजबूर होठों की हँसी आवाज़ देती है

कोई हंगामा कर डाले न मेरी लफ्ज़े-ख़ामोशी
मेरी बहनों की मुझको बेबसी आवाज़ देती है

तुम्हारे वास्ते वो रेत का ज़रिया सही, लेकिन
कभी जाकर सुनो, कैसे नदी आवाज़ देती है

मेरे हमराह चलकर ग़म के सहरा में तू क्यों तड़पे
तुझे ऐ ज़िन्दगी, तेरी ख़ुशी आवाज़ देती है

मैंने क़िस्मत बना डाली है अपनी बदनसीबी को
मगर, तुमको तुम्हारी ज़िन्दगी आवाज़ देती है

***

निगाहें मेरी जाती हैं जहाँ तक
तुम्हीं तुम हो ज़मीं से आसमाँ तक

महब्बत की अज़ाँ देता रहूँगा
कोई आये नहीं आये यहाँ तक

अभी उल्फ़त का पानी है कमरभर
ज़रा देखें ये जाता है कहाँ तक

दिले-नादान अब तो बाज़ आ जा
उसे हम छोड़ आये हैं मकाँ तक

खिले हैं हर जगह हिन्दी के गुन्चे
नहीं महदूद ये हिन्दोस्ताँ तक

शबाबो-मैकदा से तेरी रग़बत
कभी नीलाम कर देगी मकाँ तक

ख़िलाफ़े-ज़ुल्म बोलूँगा ही,चाहे
पड़े ज़ंजीर पैरों से ज़ुबाँ तक

❐

सी. 11/22, ऊर्जानगर कालोनी, महागामा,
ज़िला: गोड्डा, झारखण्ड इंडिया, पिन : 814154
मोब. : 9955379103
Email: sushil.thakur5@gmail.com

रमेश तैलंग की तीन ग़ज़लें

***

ग़मों की ज़िंदगी में इंतिहा नहीं कोई।
सिवाय सहने के पर रास्ता नहीं कोई।

नसीब रोज़ ठिकाने बदलता रहता है
कहाँ तलाशूँ कि पक्का पता नहीं कोई।

उजाड़ कर हजार घर, चली गई नफ़रत
हैं ज़ख्म लाखों ज़िगर पर, दवा नहीं कोई।

हरेक मौत का हिसाब, चंद रुपयों में
दलाली का दिलों से वास्ता नहीं कोई।

अजीब शहर है रहते हैं सभी साथ यहाँ,
मगर किसी को भी पहचानता नहीं कोई।

***

मेरे बारे में उसने जाने क्या-क्या सोचा है।
पर मुझे उसकी नीयत पर अभी भरोसा है।

उसकी रुसवाई उसके चेहरे पे झलकती है,
प्यार में ऐसा भी कभी-कभार होता है।

हँसते-हँसते मेरे आँसू भी निकल आते हैं
चुटकुला क्या कभी दामन को यूँ भिगोता है?

एक किस्सा जो मोहब्बत से शुरू हो, आख़िर
किसी तकरार पे जाकर वो ख़त्म होता है।

उसकी मौजूदगी जुदा नहीं होती मुझसे,
मैं करूँ याद जब भी, सामने वो होता है।

***

चल दिए हाथ छुड़ाकर, सभी जाने वाले।
अब कहाँ ढूँढें हम रूठों को मनाने वाले?

कोई दरख़्त जब भी छाँह देने लगता है
कुल्हाड़ियाँ चला देते हैं ज़माने वाले।

कश्तियाँ किसकी बचीं और किसकी डूब गईं
फ़िक्र करते कहाँ तूफ़ान उठाने वाले।

यहाँ पे हादसों का दौर है कि थमता नहीं
वहाँ पे खुश हैं आँकड़ों को दिखाने वाले।

बचाके रखना अश्क अपनी-अपनी आँखों के
बहुत रुलाएँगे कमबख़्त रुलाने वाले।

❐

506-गौरगंगा-1, वैशाली, सेक्टर-4
ग़ाज़ियाबाद-201012, उत्तर प्रदेश
मोब. : 9211688748
Email: rtailang@gmail.com

हाइकु

डॉ. सुरेन्द्र वर्मा

०००

चीखी चिड़िया
सारा जंगल रोया
उसके साथ।

०००

माटी-वंदना
समर्पण में झरा
हरसिंगार।

०००

जलाते नहीं
दहकते पलाश
रंग भरते।

०००

अकेला पात
अटका है डाल पे
राह देखता।

०००

पहाड़ ढोती
पहाड़-सी लड़की
दिन-ब-दिन।

०००

बेटी पहाड़
बाप की बूढ़ी पीठ
कैसे सँभाले !

०००

उम्र गुज़ारी
समझ ही न पाए
समझदारी।

०००

जीवन छोटा
पर जब लौ जिया
आलोक दिया।

०००

बाहर का क्या
अंदर अँधेरों को
दिया दिखाओ।

❒

डॉ. अर्पिता अग्रवाल

०००

सूर्य रश्मियाँ
ज्यों स्वर्ण शलाकाएँ
बुहारें नभ।

०००

उषाकालीन
नभ में मुस्कुराया
भोर का तारा।

०००

रोया आसमाँ
बूँदों के मोती गिरे
भीगी थी धरा।

०००

शीशे-सी नदी
आकाश से चंद्रमा
देखे दर्पण।

०००

अस्त चंद्रमा
जैसे कटी पतंग,
ओझल हुआ।

०००

याद-पिटारा
छिटकी चाँदनी में
खुला, बिखरा।

०००

बिखर पड़े
इन्द्रधनुषी रंग
आँसू-बूँद में।

०००

प्रकृति-कन्या
पहने टीका मणि
सूर्य-चन्द्र की।

०००

बेटी नदिया
घर,बाहर सीचें
दे हरियाली।

❒

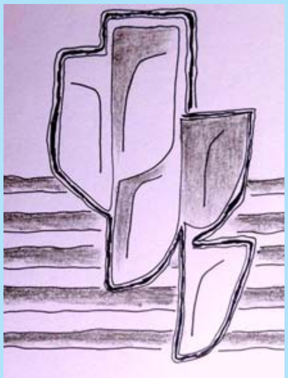

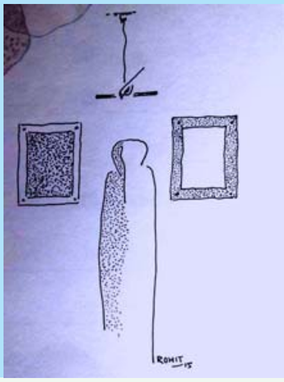

हाइकु

डॉ.गोपाल बाबू शर्मा

०००

कँगूरे हँसे
पत्थर कब दिखे
नींव में धँसे।

०००

बात निराली-
पत्थर को प्रणाम
प्राणी को गाली।

०००

सोन चिरैया
खा जाएँ नोचकर
घर के बाज़।

०००

जीवन ऐसे,
पानी पर बहता
फूल हो जैसे।

०००

जिंदगानी है
इसके सिवा कि ये
आग-पानी है।

०००

यौवन-रूप
सर्दियों की साँझ ज्यों
भागती धूप।

०००

तुम्हारी हँसी-
आँखों के दर्पन में
चाँद-सी बसी।

०००

घना जंगल
भोली-भाली हिरनी
सौ-सौ ख़तरे।

०००

आम बौराए
प्रकृति सुन्दरी के
कानों में बाले।

❒

पाकिस्तान के कराची में निवास करने वाली वरिष्ठ साहित्यकार ज़ेबा अल्वी हिन्दी और उर्दू के बीच सेतु का कार्य कर रही हैं। हिन्दी के कई प्रतिष्ठित रचनाकारों का उर्दू में अनुवाद कर चुकी हैं, जो पाकिस्तान की उर्दू की प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं।

संपर्क : बी-105, अफ़नान आर्केड, ब्लॉक-15, गुलिस्ताने जौहर, कराँची, पाकिस्तान

पेशावर की दर्दनाक घटना के बाद, जिसमें मासूम बच्चे मारे गए थे; पाकिस्तान से आदरणीय ज़ेबा अल्वी जी का लिखा पत्र 'हिन्दी चेतना' के नाम-

एक बे रब्त ख़त

प्रिय वन्दना हम ठीक हैं
आज तक !
तुम्हारी ख़ैरियत ख़ुदा से
नेक मतलूब* है।

तुम्हारी आँखों के समक्ष
वे दृश्य नहीं हैं तो
हम समझते हैं कि तुम
ख़ैरियत से होगी!

तुम्हारे आने वाली नसलों के
स्नान के लिए पानी है
हमारी नसलें लहू
गुस्ल कर रही हैं।

तुम्हारे यहाँ पीले बसंत की
तैयारी है फिर गुलाल की
हमें किसी बसंत की प्रतीक्षा नहीं है
न किसी बहार की!

अब हमें कहा जा रहा है
पहाड़ियों पर चढ़ के
कि अब जो हम करेंगें
तो पिछले सारे दृश्य तुम भूल जाओगे!

हमारे बच्चे सोते में
चौंक-चौंक उठते हैं
उनकी कपटियों में
साँएँ-साँएँ, धूँ-धाँ की
लोरियाँ हैं!

तुम्हारे देस के आम बच्चे
अपने टिफिन में एक पराँठा
अचार की एक फाँक
ख़ुशी-ख़ुशी खाते हैं!

हम अपने बच्चों को बरगर कोल्ड ड्रिंक से
छका रहे हैं
टी. वी . प्रोग्रैम खानों के
नुसख़ों से भरे हैं और
'थर'* में बच्चे भूक से
बिलक-बिलक कर मर रहे हैं!

तुम्हारे बाबू जी अगर देखते तो
बहुत नाराज़ होते कि
हम दावतों में जी भर कर
'रिज़्क़'* का तिरस्कार
करते हैं!

तुम्हें हम क्या बताएँ-
बचपन में हम एक खेल
खेला करते थे-'तीन तिगाड़ा, बिच्छू मारा, ताज़ा ताज़ा ख़ून दिखाओ'
फिर दिन में सूरज की ओर
और रात में लालटेन की ओर
मुट्ठी बंद कर लाल-लाल ख़ून दिखाते थे
अब टी.वी. का रिमोट
वही काम करता है

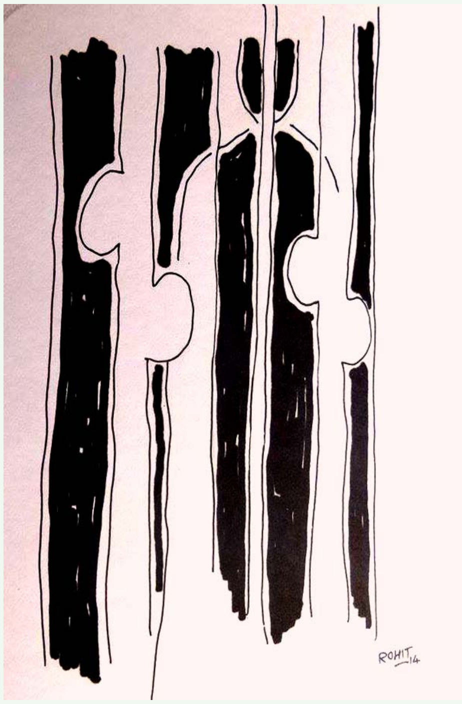

'न तीन तिगाड़ा न बिच्छू मारा
बस ताज़ा-ताज़ा ख़ून!'

इतने ताबूत तुमने सपने में भी
नहीं देखे होंगे
वे बहुत भाग्यवान् थे जिन्हें
अपनों के ताबूत तो मिल गए
आज ! आज क्या हुआ ?
'अपनों' को 'अपने'
कोयलों के रूप में मिले!

हमारा क़ुरआन शुरू होता है
'इक़रा'* से
अगर इसी क़ुरआन के 'दावेदार'
सीधा वार कर रहे हैं
'ज्ञान' पर 'इल्म' पर!

हमारे फ़ैसले दूसरे करते हैं
हम कभी एक 'पेज' पर
नहीं आते
हमने अपनी 'इस्तेलाहात'* भी
ग़ैरों से ली हैं!

हमें हमारी किताबों ने
बताया, पढ़ाया, दिखाया
'सिराते मुसतक़ीम'*

'थामो ख़ुदा की रस्सी को मज़बूती से'
'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्'
पर आज हम
बिखर गए हैं
भटक रहे हैं!

तुमने भी अपनी दादी नानी से
सूना होगा जब वे तुम्हें
'धम धम्मा' कह कर
बिस्तर पर प्यार से गिराती होंगी
अब हमारे बच्चे धम धमाके करके
ख़ाक-व-ख़ून पर
सुला दिए जाते हैं!

हम सब छोटे थे तब
बड़े भाई की 'सैकल'*
घर आई थी
तभी सूना था-'छर्रे', 'रिम'
'पिसटन' और 'बालबेयरिंग'
अब ये सब 'जैकेट' से निकल कर
करते है दीवारें छलनी
फिर याद आती है लखनऊ की
'बेर्ला गारद' !

हमने अपने नवासे की
सारी जैकटें फेंक दी हैं
अब 'जैकेट' का नाम सुनते ही
बारूद की बू आने लगती है!

नवासे को पता नहीं हम क्यों
उसकी जैकटें फेंक आते हैं
यह लिबस* अब 'रक्त पिपासु' और
'पिशाच' बन गया है!

हाँ सुनो! दिल्ली से मित्र
अली जावेद आए
बेटों ने फ़रमाइश की
सियाल कोट के
फ़ुटबालों की
हाँ, हाँ वही सियालकोट
'बाले सियालकोटिया'* वाले का
जिनका तराना तुम आज भी
गाती हो!

हम अपने नवासे की
नयी फ़ुटबाल भी फेंक आए
वह बहुत रोया.....
'बड़ी महँगी थी नन्ना वह'
अब सरों के फ़ुटबाल
सस्ते हैं और
सियालकोटिये महँगे!

हाँ, आज तुम्हारे राजेश्वर बोले-
'मुसल्लों', 'कटुवों' की अब भारत में
'शुद्धी'* होगी
यहाँ अब तुम 'काफ़िर' नहीं हो
हम आपस में ही काफ़िर-काफ़िर
खेलते हैं!

शुद्धी फिर भी जीने का
अधिकार नहीं छिनेगी
हमारे अपने तो हमसे
जीने का अधिकार भी
छीन लेते हैं!

तुम्हें हम अपने देश के कवि का शेर सुनाते हैं-
फ़ुटपाथ पे बैठा हुआ वह सोच रहा है-
हम सोच रहे हैं कि वह घर क्यों नहीं जाता
'घर' बचा होगा तो वह जाएगा!

वन्दना ऐसे बहुत दृश्य हैं
हम कहाँ तक तुम्हें दिखाएँ!
०००

*मतलूब -चाहना
*थर -राजस्थान से मिला वह रेगिस्तानी इलाक़ा है, जहाँ मौत का डेरा है
*रिज़्क़ -ऊपर वाले की दी सारी नेमतें
*इक़रा -पढ़ो
*पेज
*इस्तेलाहात -टेक्निकल वर्ड एवं टर्मनोलॉजी
*सिराते मुसतक़ीम -सीधा रास्ता
*सैकल -साइकल
*लिबस -पहनावा
*बाले सियालकोटिया -कवि अल्लामा इक़बाल
*शुद्धी -शुद्धि

अविस्मरणीय

नज़ीर बनारसी

डरता हूँ रुक न जाए कविता की बहती धारा
मैली है जब से गंगा, मैला है मन हमारा।
छाती पे आज उसकी कतवार तैरते हैं
राजा सगर के बेटो तुम सबको जिसने तारा।
कब्ज़ा है आज इस पर भैंसों की गन्दगी का
स्नान करने वालो जिस पर है हक़ तुम्हारा।
श्रद्धाएँ चीख़ती है विश्वास रो रहा है
ख़तरे में पड़ गया है परलोक का सहारा।

किस आईने में देखें मुँह अपना चाँद-तारे
गंगा का सारा जल हो जब गन्दगी का मारा।
इस पर भी इक नज़र कर, भारत की राजधानी
क़िस्मत समझ के जिसको राजाओं ने सँवारा।

बूढ़े हैं हम तो जल्दी लग जायेंगे किनारे
सोचो तुम्हीं जवानो क्या फ़र्ज़ है तुम्हारा।
कविता 'नजीर' की है तेरी ही देन गंगे
तेरी लहर लहर है उसकी विचारधारा।
०००

नज़ीर बनारसी
जन्म: २५ नवम्बर १९०९ ;
निधन: २३ मार्च १९९६

संस्मरण

फूलों की महक-सा गमकता हुआ कथाकार: विकेश निझावन

सैली बलजीत

वह अपनी कहानियों के जरिये मेरे दिल की तहों तक उतर जाने वाला कथाकार है। उसने जाने कितनी बार मेरे दिल की तहों तक सेंध मारी है। उसने अपनी कहानियों की भव्यता को आजतक भी कम नहीं होने दिया। डॉ. धर्मवीर भारती के संपादन में धर्मयुग में सतत छपना क्या कम उपलब्धि है उसकी। उन दिनों विकेश निझावन की जितनी भी कहानियाँ धर्मयुग, सारिका, साप्ताहिक हिन्दुस्तान आदि में प्रकाशित हुईं, उनकी कतरनें आज भी मेरी फाइलों में कहीं पड़ी होंगी। ऐसा था मेरे मित्र विकेश की कहानियों से मेरा इश्क।

उससे विधिवत पत्राचार कुछ सालों तक चला था। लेकिन इतना तो तय था कि हम एक दूसरे की कहानियों के माध्यम से तो एक दूसरे से जुड़े रहे हैं। मैं अगर आम आदमी की बदहाली को उकेरती कहानियाँ लिखता रहा हूँ, तो विकेश ने ता-उम्र घर-बाहर के संसार से जुड़ी पारिवारिक टूटते सम्बन्धों की कहानियों पर कलम चलाई है। वह घर-बाहर की कहानियाँ लिखने वाला प्रमुख हस्ताक्षर है।

वह अम्बाला में जन्मा और पला-बढ़ा शख़्स है। कहानियों का सृजन उसका जुनून ही तो है। तभी तो आज साठ साल की उम्र पार करने के बाद भी वह उसी क्रम से सृजनरत है।

'सारिका' के कमलेश्वर के संपादन में तो अविस्मरणीय अंक निकले हैं। उन दिनों सारिका पढ़ना मेरा भी जुनून था..... विकेश का जुनून तो था ही.....संभवत हर रचनाकार ने सारिका का सिर चढ़ कर बोलने वाला जादू देखा होगा। बल्कि मेरे जैसे अदना सा रचनाकार तो 'सारिका' पढ़ते-पढ़ते कथाकार हो गए। ऐसा जादू कमलेश्वर जैसा आदमी ही दिखा सकता था। विकेश निझावन ने 'सारिका' में अपनी कहानियों का लोहा मनवाया था। अब सारिका की बातें करने लगूँ ? बस इतना भर ही कहूँगा कि लगभग सत्तर से सतत्तर सन् तक की सारिका के तमाम अंक मेरे पास आज भी सुरक्षित हैं। इनमें विकेश की कहानियाँ भी हैं.. यही सूत्र मुझे उसके और समीप ले जाने के लिए बहुत है। विकेश की सारिका और धर्मयुग में छपी कहानियों के साथ तस्वीरों और आज के विकेश को देखने में रत्तीभर भी फ़र्क नहीं दिखा.... फ़र्क सिर्फ़ उम्र का है और बालों पर उग आई चाँदी उसे और भी परिपक्व बना रही है। वह उसी तरह फुर्तीला और छरहरा-सा दिखता है बल्कि उम्र की ढलान ने उसे और भी कर्मठ और ज़िम्मेवार बना दिया है।

मुझे इस बात का क्षोभ रहेगा....हम इतने साल पहले क्यों नहीं मिले? सिर्फ़ पत्र-मित्रों की तरह ही अपने-अपने घरौंदों में आदान-प्रदान क्यों करते रहे? कितने साल हमने बिना मिले ही क्यों गँवा दिए?

भाई कुमार नरेन्द्र और मधुदीप दोनों ईमानदारी से प्रकाशन चलाने वाले शख़्स हैं। बीस साल पूर्व जब मैं 'मकड़जाल' के सिलसिले में मधुदीप से मिला तो वह बोला था सैली जी, एक गुस्ताख़ी कर रहा हूँ, आपके उपन्यास का नाम बदलकर 'मकड़जाल' रखा है।

मुझे अच्छा लगा था। उपन्यास का फिर केन्द्रबिन्दु भी तो इसी मकड़जाल के ताने-बाने से रचा-बसा है। अच्छा किया आपने, मैंने अपनी स्वीकृति देते हुए कहा था।

विकेश निझावन की भी कई किताबें आई हैं दिशा से भी और पारुल से भी। भाई नरेन्द्र चलाते हैं पारुल प्रकाशन, उनसे मिले?

नहीं तो।

तो मिलवाता हूँ, यह हैं कुमार नरेन्द्र और सैली जी को तो जानते ही होंगे! अच्छे कथाकार हैं, इनका उपन्यास 'मकड़जाल' दिशा से आ रहा है, मधुदीप ने कुमार नरेन्द्र से मेरा परिचय करवाया था।

१२८८, लेन ४, श्री राम शरणम् कॉलोनी, डलहौज़ी रोड, पठानकोट १४५००१, पंजाब।

उनके आवास भी साथ-साथ ही हैं। वे मिलकर विमर्श करते हैं तो अच्छा लगता है। मैं दिशा से आई किताबें 'रैक्स' में से निकाल देखने लगा था। वहीं मुझे विकेश निझावन का कहानी संग्रह 'महासागर' भी पड़ा मिला तो मैं झट से निकाल पृष्ठ पलटने लगा था। भाई कुमार नरेन्द्र बोले थे इसी साल आया है यह संग्रह।अच्छा लिखते हैं विकेश....आप जानते हैं उन्हें?

जानता हूँ, मेरे परिचित हैं, मैं तो विकेश की कहानियों का मुरीद हूँ।

महासागर में भी अच्छी कहानियाँ हैं आप किताब रख लें।

सच ही अगर नरेन्द्र किताब की ऑफर न करते तो मैंने स्वयं उससे माँग लेनी थी, क्योंकि विकेश की कहानियों का मोह संवरण कर ही नहीं सकता कभी।

आज भी 'महासागर' मेरे रैक्स में पड़ी है। जब दिल करता है निकाल कर पढ़ लेता हूँ।

बड़े साल हमारे बीच कोई संपर्क सूत्र नहीं रहा था लेकिन, उसकी कोई भी कहानी मेरी दृष्टि से छूटी नहीं थी।

वह एकाएक मेरे वजूद पर अपना जादू दिखाने लगा था। एक दिन उसका पत्र देख कर विस्मय तो हुआ ही, प्रसन्नता भी हुई थी। पत्र में उसने 'पुष्पगंधा' पत्रिका निकालने की योजना से अवगत करवाया था। मुझे पत्रिका के प्रचार-प्रसार हेतु ढेर-सी जिम्मेदारियाँ सौंपीं थीं उसने और नई कहानी तुरन्त भिजवाने का आदेश भी दिया था।

मैंने दूसरे ही दिन अपनी नई कहानी भाई बलविन्द्र के रेखांकनों सहित भिजवा दी थी। उसे कहानी पसन्द आई थी। साथ ही बलविन्द्र के रेखांकन भी। उसका एक दिन फोन आया था, सैली जी, कहानी अगले अंक में दे रहा हूँ। बलविन्द्र भाई के रेखांकन भी बहुत बढ़िया हैं।

आपने रेखाांकनों की फ़िक्र नहीं करनी मेरे पास बहुत पड़े हैं।

भाई साहब कहाँ रहते हैं?

आपके अंबाला के पास ही रहते हैं यानी चण्डीगढ़ में।

तो उनसे मिलूँगा मैं।

कहानी अच्छी लगी आपको मेरी?

कमाल की कहानी है। अब आगे से आप कहानियाँ भिजवाना नहीं भूलना।

मुझे अंक भिजवाना

प्रवेशांक तो मिल गया था न?

पत्रिका बहुत बढ़िया निकाली है। मेरी शुभकामनाएँ तो आपके साथ हैं ही।

वह गद्गद् हो उठा था। फ़ोन बंद हो गया। मुझे विकेश का नया रूप अच्छा लगा। वह संपादक की ज़िम्मेवारियाँ निभाने वाला कुशल संपादक लगा था मुझे।

थोड़े ही समय में 'पुष्पगंधा' ने साहित्य जगत में अपनी धाक जमा ली है। वह अब भी उसी क्रम में मुझसे बतियाता है, उसके बतियाने का अलग ही स्टाइल है। यही स्टाइल उसकी पहचान है। मैं उससे बतिया कर हल्का हो जाता हूँ। अब तो हम अपनी आंतरिक बातें भी साझी करने लगे हैं। उसने मुझे कैसे पाश में बाँध लिया है।

उससे मिलने की आतुरता हर बार टूट जाती रही है। चण्डीगढ़ जाकर भी उससे मिलने की चाह लेकर ही लौट आता रहा हूँ।

पिछली बार चण्डीगढ़ गया तो उससे बातचीत हुई थी।

कैसे हो विकेश भाई? मैंने पूछा था।

सैली जी मज़े में हूँ। पत्रिका के कहानी विशेषांक पर काम चल रहा है, आपकी कहानी भी ली है इसमें।

चण्डीगढ़ आया था इस बार मिलने का मन बनाया है।

आ जाओ यार हर बार आने का कहते हो अम्बाला एक घण्टे का रास्ता है आ जाओ, मिलने को मन करता है।

मैं कोशिश करूँगा। बेटे के ज़रूरी काम निपटाने हैं.. उसके ऑस्ट्रेलिया जाने से पहले। उसे दिल्ली एयरपोर्ट पर छोड़ने आना है, रास्ते में अम्बाला रुकेंगे।

बधाई लें मैं आपका इन्तज़ार करूँगा.... वह प्रसन्न हो गया था।

इस बार भी मैं अम्बाला नहीं जा पाया था। घरेलू व्यस्तताओं के आगे हथियार डाल दिए थे। स्वदेश दीपक, राकेश वत्स, सुभाष रस्तोगी के शहर की गलियाँ देखने को जाने कब से तरस रहा हूँ। विकेश निझावन ने अब मेरे सामने अंबाला आने के कितने द्वार खोल दिये हैं....उसकी पेन्टिंग्ज़ के कितने तिलिस्मी रहस्य अभी जानने हैं।

इस बीच उससे फ़ोन वार्ताएँ जारी रही थीं। वह बढ़िया चित्रकार भी है। उसके छुटपुट रेखांकन ही देखे हैं अभी। वह अब भी उसी गति से पेन्टिंग्ज़ के लिए समय निकाल लेता है। चण्डीगढ़ जाकर मुझे एक ही ललक होती है कि अंबाला जाकर आऊँ।

भाई बलविन्द्र ने बतााया था कि विकेश उसे मिलने एकाध बार वहाँ उसके आवास पर आया था। लेकिन मैं उससे मिलने को तरस गया था। वह चण्डीगढ़ आता है तो 'पुष्पगंधा' के लिए बलविन्द्र से रेखांकन ले जाता है कभी आवरण चित्र तो कभी पेन्टिंग्ज़ के छाया चित्र.... उसे चित्रकारी से कैसा लगाव है। इतने परिश्रम से भला कौन पत्रिका निकालता है।

पत्रिका निकालने का कौशल वह सीख गया है। हमारी भाभी विजय का भी योगदान कम नहीं। 'पुष्पगंधा' में उसके पसीने की गंध दिखने लगी है अब।

अमितेश्वर बेटे का ऑस्ट्रेलिया वापस जाने का दिन आ गया था। हमने इस बार चण्डीगढ़ होते हुए दिल्ली पहुँचना था। एयरपोर्ट पर इसी साल मई के मध्य में चिलचिलाती धूप में हम टैक्सी से दिल्ली के लिए चले थे। इस बार अंबाला हर हाल में रुकना था विकेश के पास....

मैंने विकेश को अग्रिम सूचित कर दिया था।

वह लहलहा उठा था।

हमें अपने आवास की भौगोलिक स्थिति से भी अवगत कराता रहा था।

वह हमें अपने घर के पास वाले लैंडमार्क 'ग्लैक्सी शॉपिंग मॉल' के बाहर खड़े दिखा तो

हमने टैक्सी तुरन्त रुकवा ली। वह मुझे आलिंगन में लेते हुए बोला था--बस थोड़ी दूर ही है मेरे पीछे आ जाओ।

कुछ क्षणों में उसका एस्टेटनुमा बंगला हमारे सामने था।

घर की दीवारें उसकी आदमकद पेन्टिंग्ज़ से सुशोभित हुई दिखी थीं। सच ही उसकी पेंटंग्ज़ में आकर्षण है। अलग शैली में ऐसा काम मैंने पहली बार देखा था।

'आज हमारा मिलन हो ही गया, सैली जी।' उसने कहा था।

'आज तो मिलकर जाना ही था।' मैंने हिलोरते हुए कहा।

'बैठते हैं गपशप होगी खाना खाते हैं..'

'खाना तो हमने दोपहर को खा लिया था.... हाँ बैठूँगा, हमारे पास एक घंटे का समय है, बेटे की रात की फ़्लाइट है। बहुत समय है।'

'मैं अपने परिवार से तो मिला दूँ,' वह तरल हो गया था।

वह हमें अपनी संगिनी, बेटे अरुण से मिलाकर बहुत प्रसन्न हुआ। उसके बाद उसके घर की आर्ट गैलरी देखने लगे थे, कहीं ड्रिफ्ट वुड की कलाकृतियाँ, कहीं कलात्मक लेम्पशेड, कहीं कलात्मक रैक्स, कहीं अद्भुत फर्नीचर, कहीं एन्टीक कलात्मक दस्तावेज़ों का संग्रह, कहीं पक्षियों के लिए निर्मित घोंसले, कहीं मनीप्लांट की अद्भुत सज्जा, कहीं उसकी प्रकाशित कृतियों की सजावट, सब कुछ हमें बींधता चला गया था सिलसिलेवार....

उसके घर के लॉन में जाने कितने अद्भुत फूलों की किस्में हैं। इन सब के पीछे उसकी कलात्मक दृष्टि है, मैं उसके 'पुष्पगंधा' वाले औपचारिक विभाग में आ गया था। करीने से सजे 'रैक्स' में उसकी समस्त किताबें सजी हुई देख मैं प्रसन्न हो उठा था।

'काफी किताबें आ गई हैं आपकी।' मैंने उसे बधाई दी थी।

'ज़िन्दगी की यही तो पूँजी है। एक लेखक के यही तो सपने हैं।'

'अब लगे रहो। साहित्य में अभी तो जाने कितने मरहले आने हैं।'

'सैली जी, बहुत लिखा है ज़िन्दगी में, लेकिन थककर बैठ जाना थोड़े सीखा है, आप भी तो अभी तक सक्रिय हैं।'

'रिटायरमैंट के बाद तो लगता है, इतने साल बेकार में ही निकल गए, अब भी क्षोभ है कि जितना काम करना था, अभी पूरा कहाँ हुआ है, अब तो लिखने का मज़ा आने लगा है, मैं कुछ किताबें और लेकर जाऊँगा आपकी, मेरे पास तो सिर्फ़ महासागर ही पड़ी है।'

'किताबें तो आपको भेंट करनी ही हैं, आप बताइये कौन सी लेनी हैं। आप स्वयं छाँट लें रैक्स में से।'

'नहीं भाई, आपको जो अच्छी लगती हैं, मैं वही ले जाऊँगा।'

उस दिन उसने अपनी पसंदीदा दो किताबें 'कोई एक कोना' तथा 'एक टुकड़ा आकाश' अपने हस्ताक्षरों सहित भेंट की थीं मुझे।

और हम अल्प समय की अधूरी सी प्रथम भेंट से संतुष्ट हो गए थे। फिर से मिलने का वायदा करते हुए, हम टैक्सी में बैठ गए थे, दिल्ली का लम्बा सफर सामने था और धूप लगभग यौवन पर थी।

वह अब पत्रिका के कार्य में व्यस्त रहता है। बीच-बीच में हमारे मध्य टैलीफ़ोन वार्ताएँ तो होती ही हैं।

'खूबसूरत शहर और चीखें' मेरा शीघ्र प्रकाश्य संपादित कहानी संग्रह है। उसमें कुछेक मित्रों की कहानियाँ छूट गई थीं। विकेश के अतिरिक्त सुदर्शन वशिष्ट, राजेन्द्र राजन, अश्विनी मानव, धर्मपाल साहिल, लेखराज, कुलभूषण कालड़ा आदि कथाकारों की कहानियाँ भी लेनी थीं।

एक दिन उसे फ़ोन मिलाया तो वह बोला-कहिए सैली जी, कैसे हैं?

आप सुनाएँ आपकी कहानी लेनी है। संपादित संग्रह में कब तक भिजवाएँगे ? मुझे शीघ्र चाहिए।

आपके पास मेरी किताबें हैं, जो अच्छी लगे ले लीजिए।

आप अपनी पसन्द की भिजवाएँ तो ठीक रहेगा।

कहा ना आपका अधिकार है, जो ठीक लगे.. रख लें।

कोई एक कोने में तो घर-परिवार की कहानियाँ हैं, मुझे आम आदमी की तकलीफों का चित्रण करने वाली कहानी चाहिए, मैंने पढ़ी हैं सभी, मेरे मन के अनुरूप कोई लगी तो मैं बता दूँगा।

'आप बता देना नहीं तो मैं भिजवा दूँगा।'

दूसरे दिन मैंने अपनी फाइल निकाली थी, उसकी किताबें निकालीं थीं, मैं उसकी उपयुक्त कहानी के लिए छटपटा उठा था।

तीन-चार दिनों के बाद मैंने उसकी कहानी महासागर का चयन करके उसे फ़ोन से सूचित कर दिया था। कहानी के कथ्य और संरचना पर हम बतियाए भी थे।

वह अपने कन्धों पर परिवार की ज़िम्मेदारियाँ ढोने वाला साहित्यकार तो है ही, इसके साथ वह साहित्य के प्रति भी निष्ठा से समर्पित है। वह अपनी गृहस्थी चलाने हेतु धनोपार्जन के अनेक साधनों में परिश्रम से जुटा रहता है, अंधे घोड़े की तरह। आज्ञाकारी बेटा अरुण उसकी पत्रिका के लिए अपना श्रम जुटा रहा है। औलाद की यही तो ज़िम्मेदारी होती है, इसीलिए तो इन्सान औलाद माँगता है।

विकेश राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त रचनाकार है। उसकी किताबों पर उसे हरियाणा साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत भी किया गया है। अंबाला की गलियाँ उसकी शिराओं में सरसराती हैं। अंबाला के बाज़ार, सड़कें उसे दुलारते हैं, उसे पहचानते हैं . ज़िन्दगी की हर सुविधा उसके पास है, कार से लेकर आलीशान कोठी और कोठी में उसका अद्भुत रचना संसार,उसकी संगिनी है, आज्ञाकारी बेटा अरुण है। पत्रिका के प्रचार-प्रसार में हाथ बँटाने वाली बेटी इंदु भाटिया है।

वह आज भी दोस्तों का चहेता है। दोस्त उसे प्यार करते हैं। फिर उस जैसे शख़्स से सभी प्यार ही तो करेंगे; क्योंकि उसके पास प्यार की खान है, आशीषों का कोरा थान है, प्यार बाँटना कोई उससे सीखे और कहानियाँ बुनने की कला, कोई सानी है उसका?

उसका फ़ोन आने का अभिप्राय एक जीवन्त ठहाके से रूबरू होना है। वह होंठों पर मुस्कराहट के छोटे-छोटे अंश लेकर बतियाता है तो लगता है फ़ज़ा में मिसरी घुल गई हो, आकाश उसकी महक से सराबोर हो उठा हो जैसे....और एक साथ गुलमोहर और रजनीगंधा के अनेक फूल झोली में भर गया हो कोई जैसे। और वह सकुचाते हुए जब मटक कर चलता है तो लगता है, अपने हिस्से की ज़मीन और आकाश उसके साथ-साथ चलने लगे हों जैसे....। साहित्य-जगत् को लगभग बीस कृतियाँ देने वाला वह शख़्स अभी थका थोड़े है, उसके लिए मंज़िलें फलाँगना अब कोई कठिन बात थोड़े है।

❏

औरतपन

रेनू यादव

रिसर्च/ फेकल्टी असोसिएट
हिन्दी विभाग
गौतम बुद्ध युनिवर्सिटी, यमुना एक्सप्रेस-वे,
नियर कासना, गौतम बुद्ध नगर, ग्रेटर नोएडा-
२०१ ३१२
renuyadav0584@gmail.com,
renu@gbu.ac.in

'नहीं-अपना कोई हमदर्द
यहाँ नहीं है। मैंने एक-एक को
परख लिया है।
मैंने हरेक को आवाज़ दी है
हरेक का दरवाज़ा खटखटाया है
मगर बेकार... मैंने जिसकी पूँछ
उठायी है उसको मादा पाया है।

मादा-अर्थात् निष्क्रिय, नपुंसक। धूमिल की ये पंक्तियाँ चाहे किसी भी अर्थबोध से पूरित हों किंतु मादा शब्द पुरुष वर्चस्ववादी सत्ता के लिए एक गाली की तरह प्रयोग किया गया है। औरतों की तरह रोना, औरतों की तरह बोलना, औरतों की तरह चलना (माफ कीजिए मर्दों की तरह औरतों की चाल भी असहनीय है, नज़ाकत ही औरतों का गहना है !!) आदि व्यंग्य मर्दों के लिए किसी शर्मनाक बात से कम नहीं। चुगलीबाज़ी करना, कानाफुसी करना, भुनभुनाना आदि सब औरतों के हिस्से में... मर्द कभी ऐसी हरकत कर ही नहीं सकतें यदि वे करते भी हैं तो औरतों से प्रभावित होकर !! ढींढ़ होना, पैर भारी होना औरतों की प्राकृतिक विशेषता है, जिसकी उपयोगिता से ही उनकी मूल्यवत्ता को आँका जाता है किंतु यही विशेषता मर्दों के लिए गाली बन जाती है!

गालियों का अपना एक मनोसामाजिक संसार है। एक ही समाज में स्त्री-पुरुष को दिए गए अलग-अलग संस्कारों की भाँति उन्हें गाली अलग-अलग प्रकार से दी जाती है, अधिकतर गालियाँ जो पुरुषों को दी जाती हैं वह स्त्री-योनि पर आधारित होती हैं, जबकि पुरुष-लिंग पर आधारित गालियाँ अत्यंत कम हैं। सामाजिक स्तर स्त्रियों के लिए अनेक गालियाँ है, जो कि पुरुष के लिए उन गालियों के समतुल्य गाली बनी ही नहीं है। इन गालियों से बेबाक तरीके से औरतों के चरित्र का सर्टिफेकेट दे दिया जाता है अथवा स्त्री-पुरुष के लिए अलग-अलग मापदंड निर्धारित किये जाते हैं। जैसे भारत में पतिपरायण स्त्री के लिए 'पतिव्रता' शब्द तथा पति जो स्त्री से प्रेम करे उसके लिए 'जोरू का गुलाम' शब्द प्रचलित है। परस्त्रीगमन करने वाले पुरुष के लिए कोई गाली नहीं जबकि उसी परस्त्री के लिए 'रखैल' गाली प्रसिद्ध है। इसी प्रकार एक से अधिक पुरुषों से संपर्क में रहने वाली स्त्रियों के लिए कुछ कम तथा कुछ अधिक अर्थबोध के साथ 'रंडी', 'छिनाल' या 'वेश्या' शब्द प्रचलित है तो पुरूषों के लिए कोई शब्द प्रचलित ही नहीं, बल्कि उनके नाजायज़ एवं निर्दोष बच्चे के लिए 'हरामी' गाली धड़ल्ले से दी जाती है। विधवा के लिए 'राँड' शब्द प्रचलित है और विधुर के लिए अपमानजनक शब्द नहीं मिलतें (कहीं कहीं रँडुवा कहा जाता है)।

बच्चा न जनने वाली स्त्रियों को दी जाने वाली गाली 'बाँझ' तथा पुरुष के लिए 'नपुंसक' गाली दोनों ही अत्यंत घातक एवं अपमानजनक होता है, किंतु पुरुष के लिए अपमानजनक इसलिए अधिक होता है, क्योंकि उनके लिए सेक्स करना और गर्भाधान के लिए सक्रिय वीर्य पौरुषत्व की निशानी है। हमारी सांस्कृतिक संकल्पना में पुरुष का नपुंसक होना अकल्पनीय एवं असहनीय होता है, जबकि यह सत्य है कि स्त्री-पुरुष कोई भी नपुंसक हो सकता है। पुरुष-स्त्रियों को दी जाने वाली अधिकतर गालियाँ स्त्री-यौनिकता पर केंद्रित हैं किंतु पुरुष-केन्द्रित गालियाँ बहुत कम हैं तथा स्त्री-केन्द्रित गालियों से कम अपमानजनक भी। इसमें आश्चर्य नहीं कि वर्चस्ववादी सत्ता में स्त्री यौनिकता से जुड़ी गालियाँ देकर पुरुषवर्ग अपनी मर्दाना ताकत को न केवल प्रदर्शित करते हैं बल्कि स्त्रियों को हीनतर और स्वयं को सर्वश्रेष्ठ साबित करने के लिए प्रयोग करते हैं तथा ये गालियाँ लोगों की जिह्वा और बोलचाल की भाषा में इस प्रकार रच-बस गई हैं कि वे इन गालियों को अपने व्यावहारिक जीवन से अलग नहीं कर पातें। किंतु आश्चर्यजनक यह है कि भारतीय संस्कृति में पुरुष के लिए पत्नीव्रता, बदचलन, रखैल, बाँझ और राँड होने की कोई संकल्पना ही नहीं।

यह सत्य है कि आज समाज अति तीव्रगति से बदल रहा है किंतु ये गालियाँ आज भी भारतीय संस्कृति में औरतों के चरित्र और जीवन पर प्रश्नचिन्ह बनकर खड़ा करती हैं। सवाल यह है कि आज चहुँमुखी विकास की दुहाई देते हुए सत्ता की ओरियानी के नीचे औरतपन या औरतियाना हरकत अथवा मादा कहकर पुरुषों को दी जाने वाली गाली औरत के अस्तिस्व को क्या कटघरे में खड़ा नहीं करता अथवा उसे मनुष्यता से कम नहीं आँका जाता? राँड, बाँझ, रखैल, छिनाल शब्द क्या उनके साथ आत्मघात नहीं करतें, जबकि पुरुष भी समभोगी होता है? प्रेम के पुजारी अर्धनारीश्वर को तो पूजते हैं तो फिर जोरू का गुलाम किस देश की संस्कृति है ?

यह अत्यंत चिंतनीय विषय है कि हम आज भी समाज में सभ्य अथवा संक्रमित संस्कृति में एक गाली की तरह ही प्रयोग हो रहे हैं। जब समाज की जड़ों से प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष गालियाँ साफ़ नहीं की जाएँगी, तब तक समता, समानता और सद्भावना के व्यापक फलक पर आधी आबादी का कोई साफ सुथरा भविष्य अंकित नहीं हो सकता...

❒

पुस्तक समीक्षा

काव्य संग्रह: आँख ये धन्य है,
कवि: नरेंद्र मोदी,
पन्ने: १०४/ मूल्य: रु. २५०, प्रकाशक: विकल्प प्रकाशन, २२२६, प्रथम तल, गली नं. ३३, पहला पूस्ता, सोनिया विहार, दिल्ली, ११००९४।
फोन: ०९२११५५९८८६
अनुवाद: डॉ. अंजना संधीर

आँख ये धन्य है–जो सपनों को साकार होते देख रही है

समीक्षक: देवी नागरानी
अनुवाद: डॉ. अंजना संधीर

पथरीली राहों पर चलकर अपने रास्ते खुद बनाने वाले पथिक, कहने में नहीं, करने में विश्वास रखते हैं। प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी की काव्यात्मक रचनाएँ 'आँख ये धन्य है' का गुजराती से हिन्दी में अनुवाद डॉ. अंजना संधीर ने किया है। इस कृति में नरेंद्र मोदी मानवता का प्रतिनिधित्व करते हुए 'कारगिल' नाम की रचना में लिखते हैं–-'धधकते अंगारे समान 'वीर जवानों की गरम साँसों से पिघलती बर्फ़ / झरना बन बहती थी/ झरने की गति में/ समाया था सुजलाम...सुफलाम....!'

इसी प्रवाह में गतिमान होते हुए वे आगे लिखते हैं–'भारत का भाव और झरने की कोख से/ फूट रहा है/ वन्दे मातरम का गान'

सपनों के बीज बोने वाले कवि, जीवन के यथार्थ से जूझकर अपने जिए हुए कल और आज के संधिपूर्ण हक़ीक़त को सामने लाते हैं। इसमें कई प्रश्न भी हैं और कई समाधान भी हैं, जिनके संदर्भ में वे अपनी मनोभावनाओं को एक अर्थपूर्ण अभिव्यक्त के रूप में लिख रहे हैं–'सपनों के बीज मैं/ अपनी धरती पर बीजता हूँ/ और प्रतीक्षा करता हूँ पसीना बहकर/ कि वे अंकुरित हों उनका वह वृक्ष बने/ फिर किसी विराट पुरुष की बाहों समान / उनकी शाखाएँ फैलें/ पक्षी उनपर घोंसले बनाएँ/ और आकाश को छूने लगें....!/उनके कंठ से नदी की कलकल की/ ध्वनि समान ईश्वरीय गीतों के स्वर लहराएँ।'

ये लिखे हुए शब्द नहीं हैं, यह एक ही संदेश है जो हर युग में कर्मयोगी, अपनी सकारात्मक सोच और निष्ठा से मानव हित के लिए, चुनौतियाँ स्वीकारते अपना रास्ता खुद बना लेते हैं। संदेश अनुकरणीय है...यह बार-बार याद दिलाता है कि मानवता में विश्वास नहीं खोना चाहिए। नरेंद्र मोदी की काव्य सरिता भी राह से गुज़रती हुई अपनी रवानी में कह रही है–-'भाग्य को कौन पूछता है यहाँ? मैं तो चुनौती स्वीकारने वाला मानव हूँ/ मैं तेज उधार नहीं लूँगा/ मैं तो खुद ही जलता हुआ लालटेन हूँ।'

अपनी सोच को शब्दों में बुनते हुए कहते हैं– 'मैं खुद ही मेरा वंशज हूँ/ मैं खुद ही मेरा वारिस हूँ'

एक स्थान पर उनका कथन है–'मेरे शब्द तलवार हैं/ बहते शब्द हैं कलरव करता पानी/ एक दूसरे के लिए परस्पर पूरक खड्ग-नदी की वाणी।'

कवि जहाँ गुनाह, ज़ुल्म और नाइन्साफ़ी की दलदल देखता है, वहाँ मानवता के हितों में कुछ करने की तमन्ना में, उद्देश्यों को बचाने के लिए बीहड़ में गहरे उतरता है। क्योंकि चुप रहना, कुछ कर पाने की क्षमता रखते हुए कुछ न कर पाना उसकी नज़र में एक पाप है। उसकी बानगी के अंदाज़ देखिये–-'किसी की निंदा सुनना/ और चुप रहना पाप है। सत्य बोल स्वीकार करे जो/ उसके सब गुनाह माफ़ है।'

और उनके मन के संकल्प, भारत माँ के सीने से सब बोझ हटाकर उसे एक हँसता, खेलता, महकता चमन बनाने को आतुर कह उठते हैं–'काँटों को चुन लिया, फूल का झीना गलीचा बिछाया/ सूखी इस धरती पर/ बीज दिया इंद्रधनुष/ पसीने का तिलक ढूँढता / है मेरा भाग्य ललाट।'

ये भारत के सेनानियों के वाक्य हैं। ये वो पल

देवी नागरानी
9-डी, कॉर्नर व्यू सोसायटी
15/33 रोड बांद्रा, मुम्बई 400050
dnangrani@gmail.com

हैं जो उन्होंने अपने सुखों को त्यागकर समस्त विश्व के शांतिपूर्ण विकास के लिए समर्पित किए हैं। हमारा राष्ट्र ध्वज एक आदर्श का प्रतिनिधित्व करता है और अपने रंगों से हमें दशा और दिशा दर्शाता है– 'केसरिया–हिम्मत और त्याग/ श्वेत–सत्य और शांति / हरा–विश्वास और शौर्य।'

अल्लामा इक़बाल का अमर गीत : सारे जहाँ से अच्छा हिंदोस्ताँ हम / हम बुलबुलें हैं इसकी, यह गुलसिताँ हमारा।' आज भी हौसलों में परवाज़ भर देता है। इसी ऊर्जा को नरेंद्र मोदी की कलम बयाँ करते हुए ऐलान करती है–––'वन्दे मातरम.... ये शब्द नहीं है/ यह मंत्र है हमारा / स्वतन्त्रता संग्राम की ऊर्जा का स्रोत अपना/ विकास का ये राजमार्ग है/ संकल्पित इस राष्ट्रजीवन का महामार्ग है।'

आज हम फिर उसी राष्ट्रीय युग के नवनिर्माण के मोड़ पर खड़े हैं हम, जहाँ अपनी बात रखते हुए नरेंद्र मोदी ने लिखा है–'मेरी रचनाओं का यह नीड़/ आपको निमंत्रण देता है/ पल दो पल आराम लेने पधारो /मेरे इस नीड़ में/ आपको भाव जगत मिलेगा।' हैरानी हुई पढ़कर। ये कविताएँ तो उनके प्रधान मंत्री बनने से पहले गुजराती भाषा में प्रकाशित हुईं अब डॉ. अंजना संधीर के प्रयास से हिन्दी में अनुवाद स्वरूप हमारे सामने आया है। इन रचनाओं में हमारे भारतवर्ष की आन, बान, और शान के प्रतीकात्मक बिम्ब रचे बसे हैं।––'आज़ादी के महयज्ञ की आहुति है ये / राष्ट्रभक्ति का सूत्रधार ये/ गणतंत्र के हृदयतंत्र का महामंत्र है ये/ विकास की निरंतर धड़कती / झुके नहीं ऐसी बेमिसाल पहचान रहे।' पठनीयता के इस मोड़ पर विषम और विचित्र नाम की कविता पर सोच ठिठक कर सवाल करती है–क्या प्रेम इतना विषम और विचित्र हो सकता है ? ऐसे कैसे हो सकता है कि एक फूल खिले और भँवरा गुंजन न करे?, घंटा बजे, और देवालय न खुले?, दीपक जले, और मंदिर न जगमगाए? ऐसे कैसे हो सकता है? नहीं हो सकता! एक विश्वास का दीपक झिलमिलाता है और कवि का आत्मविश्वास कह उठता है–'मेरे देश को प्रेम करे / वो मेरा परमात्मा !' संग्रह के आख़िरी पन्नों पर शपथ नुमा तहरीर, एक उपलब्धि के रूप में दस्तावेज़ है–इन सभी संभावनाओं के साथ 'आँख ये धन्य है' कृति पठनीय है।

❒

झरने के शीतल जल की तरह पारदर्शी भाषा

पूनम माटिया

उपन्यास : रंग ज़िन्दगी के
लेखक : मुकेश दुबे
प्रथम संस्करण : 2015
मूल्य : 150.00 रुपये
प्रकाशक– शिवना प्रकाशन, पी. सी. लैब, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड, सीहोर–466001(म.प्र.) फोन : 07562405545

कभी दूर तक सीधे चले जाते हैं, कभी मोड़ ही ख़त्म नहीं होते; कभी पहाड़ की चढ़ाई मालूम देती है, कभी नदी के बहाव संग बहते चले जाते हैं; कभी प्रतिरोध मुँह फाड़े खड़े हो जाते हैं और कभी कोई अनदेखा, अनजाना किसी दैवी शक्ति की भाँति मूर्त रूप में उपस्थित हो, हाथ थाम सभी अड़चने पार करा मंज़िल के निकट ले जाता है। बस ऐसी ही होती है हम इंसानों की ज़िन्दगी और मुकेश दुबे (लेखक) ने यही रंग अपनी कलम से कोरे काग़ज़ पर उकेर दिए हैं अपने तीसरे उपन्यास 'रंग ज़िन्दगी के' में।

सरल,सहज झरने के शीतल जल की तरह पारदर्शी भाषा में, बिना भाषा की क्लिष्टता में उलझाए कहानी बढ़ती चली जाती है जैसे माँ बच्चे का स्वेटर बुनते हुए ध्यान रखती है कि कहीं कोई गाँठ न आ जाए, बस गला, कंधे और बाजू की छटाई ऐसे हो कि कहीं कुछ अत्यधिक फँसा न हो,न ही कहीं से कुछ ढलके।

कहानी के पात्र भी गाँव की निश्छल पृष्ठभूमि से उठ कर असल ज़िन्दगी की तरह यहाँ से वहाँ स्थानांत्रित होते हैं पढ़ाई और नौकरी की तलाश में।

आजकल के झूठ, धोखे, फ़रेब से भरे माहौल में लेखक एक ऐसी दुनिया को चित्रित करता है जहाँ एक ऐसे स्वच्छन्द, निस्वार्थ मित्रता, इंसानियत, भाईचारे और बेजोड़ प्रेम के जज़्बे से हम रू–ब–रू होते हैं जिसकी कल्पना मात्र ही प्रफुल्लित कर जाती है।

किसी हिंदी फिल्म की कहानी की भांति नायक में वो सभी खूबियाँ नज़र आती हैं जो होनी चाहिए बस खलनायक नहीं कहानी में पर वक़्त अपनी भूमिका हर जाविये से निभाता है।

लेखक को बधाई एक ऐसे कैरीयर की छोटी छोटी बातों और उसकी उत्कृष्टता तथा उससे मिलने वाली सामाजिक प्रतिष्ठा से अवगत कराने के लिए जिसे डॉक्टरी से साधारणतया कम आँका जाता रहा है।

❒

पूनम माटिया
पॉकेट ए, 90 बी, दिलशाद गार्डन, दिल्ली 95
poonam.matia@gmail.com
Mob:9312624097

पुस्तकें

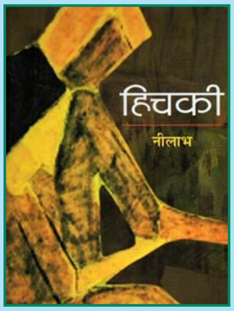

हिचकी
(उपन्यास)
लेखक: नीलाभ
प्रकाशक: नयी किताब
1 / 11829,
प्रथम मंज़िल, पंचशील
गार्डन, नवीन शाहदरा,
दिल्ली -110032
मूल्य: 175 /-रुपये

जहाँ मैं साँस ले रहा हूँ अभी
(कवितासंग्रह)
लेखक: नीलाभ
प्रकाशक: नयी किताब
1 / 11829, प्रथम मंज़िल,
पंचशील गार्डन, नवीन
शाहदरा, दिल्ली -110032
मूल्य: 250 /-रुपये

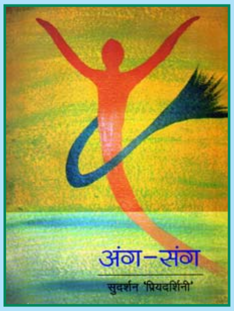

अंग-संग
(कविता संग्रह)
लेखिका: सुदर्शन प्रियदर्शिनी
प्रकाशक: बोधि प्रकाशन
ऍफ़ -77, सेक्टर 9, रोड
नंबर-11, करतारपुरा
इंडस्ट्रियल एरिया, बाईस
गोदाम, जयपुर-302006
मूल्य: 100 /-रुपये

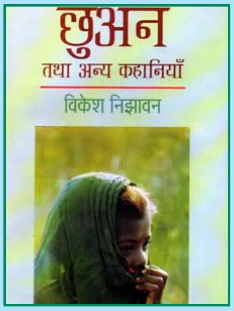

छुअन
तथा अन्य कहानियाँ
लेखक: विकेश निझावन
प्रकाशक: विश्वास प्रकाशन
557 -बी, सिविल लाइन्स,
आई. टी. आई. बस स्टॉप
के सामने, अम्बाला शहर-
134003 (हरियाणा)
मूल्य: 325 /- रुपये

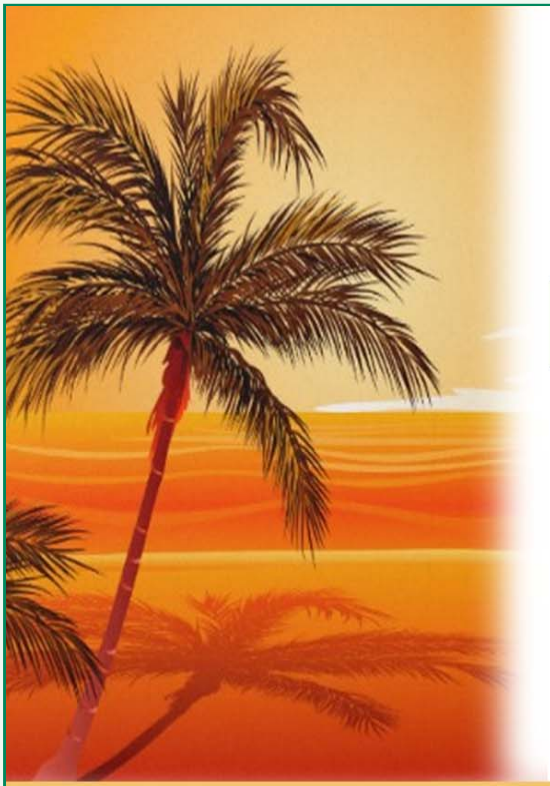

PRIYAS
INDIAN GROCERIES
1661, Denision Street,
Unit#15
(Denision Centre)
MARKHAM,ONTARIO.
L3R 6E4
Tel: (905) 944-1229,Fax :(905)415-0091

डॉ. कमल किशोर गोयनका को वर्ष २०१४ का 'व्यास सम्मान' देने की घोषणा

केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल के माननीय उपाध्यक्ष एवं प्रख्यात लेखक डॉ. कमल किशोर गोयनका को वर्ष २०१४ का व्यास सम्मान प्रदान किए जाने की घोषणा की गई है। यह सम्मान २०१२ में प्रकाशित उनकी शोधपरक पुस्तक 'प्रेमचंद की कहानियों का कालक्रमानुसार अध्ययन' के लिए दिया जाएगा।

के.के. बिरला फ़ाउंडेशन द्वारा १९९१ में स्थापित प्रतिष्ठित व्यास सम्मान के अंतर्गत सम्मान-अलंकरण के साथ ढाई लाख रुपये की सम्मान राशि प्रदान की जाती है। के.के. बिरला फाउंडेशन द्वारा साहित्य के क्षेत्र में तीन बड़े साहित्यिक सम्मान व पुरस्कार दिए जाते हैं। यह सम्मान पिछले दस वर्षों में प्रकाशित भारतीय नागरिक की उत्कृष्ट हिंदी कृति पर दिया जाता है।

10वाँ विश्व हिन्दी सम्मलेन, भोपाल में आयोजित होगा

डॉ. कमल किशोर गोयनका ने बताया कि विदेश मंत्री सुषमा स्वराज की अध्यक्षता में एक मीटिंग हुई, जिसमें निर्णय हुआ कि 10वाँ विश्व हिन्दी सम्मलेन, भोपाल में सितम्बर में आयोजित होगा और जिसका विषय स्वीकृत हुआ है -हिन्दी विश्व सार्थकता, विस्तार और सम्भावनाएँ। हमेशा की तरह विश्व हिन्दी सम्मलेन का आयोजन विदेश मंत्रालय ही करेगा।

राष्ट्रीय संगोष्ठी, कविता गोष्ठी एवं सृजनलोक सम्मान समारोह आयोजित

हिंदी साहित्यिक पत्रिका 'सृजनलोक' और हिंदी विभाग, एस आर एम विश्वविद्यालय, कट्टनकुलातुर, चेन्नई के संयुक्त तत्वावधान में 'आज की हिंदी कविता और उसकी प्रवृत्तियाँ' विषय पर आयोजित एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी १३ मार्च २०१५ को एस आर एम विश्वविद्यालय, चेन्नई के टी. पी. गणेशन सभागार में सफलतापूर्वक संपन्न हुई।

इस कार्यक्रम की संयोजक हिन्दी विभाग एस आर एम विश्वविद्यालय, चेन्नई की सहायक प्रवक्ता डॉ. रज़िया बेगम थीं। यह कार्यक्रम दो सत्र में संपन्न हुआ। प्रथम सत्र में 'आज की हिंदी कविता और उसकी प्रवृत्तियाँ' विषय पर विद्वानों और प्रतिभागियों द्वारा परिचर्चा की गई। द्वितीय सत्र में कविता गोष्ठी का आयोजन किया गया।

इस कार्यक्रम में सृजनलोक की तरफ से 'सृजनलोक सम्मान समारोह' का भी आयोजन किया गया। इस सत्र का संचालन डॉ. रज़िया बेगम ने किया। जिसमें छह साहित्यकारों को उनके क्षेत्रों में उनके द्वारा किये गए विशेष कार्यों के लिए 'सृजनलोक सम्मान २०१५' प्रदान किया गया। सम्मान पानेवाले साहित्यकार और उनके कार्यक्षेत्र इस प्रकार हैं- डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी-आलोचना सम्मान, इश्वर करुण-साहित्य श्री (गीतकार),संतोष अलेक्स-युवा कवि सम्मान, विजय कुमार-काव्य रत्न सम्मान, सुमित पी. वी.-युवा अनुवादक, डॉ. भवानी सिंह-लोक साहित्य शोध सम्मान।

उक्त सभी सम्मान मुख्य अतिथि नन्द किशोर आचार्य, डॉ. आर. बालासुब्रमणियन निदेशक, विज्ञान एवं मानविकी संकाय, एस आर एम विश्वविद्यालय, चेन्नई, एवं डॉ. व्यास मणि त्रिपाठी के हाथों प्रदान किया गया।

इस अवसर पर संतोष श्रेयांस को डॉ. आर. बालासुब्रमणियन निदेशक, विज्ञान एवं मानविकी संकाय, एस आर एम विश्वविद्यालय, चेन्नई ने सम्मनित किया। सम्मान समारोह सत्र का संचालन डॉ. रज़िया बेगम ने किया।

'स्पंदन प्रवासी कथा सम्मान' सुधा ओम ढींगरा को

'स्पंदन प्रवासी कथा सम्मान' (प्रवासी कथा साहित्य के लिए) सुधा ओम ढींगरा के नाम को घोषणा हुई थी और २१ मार्च को स्पंदन संस्था भोपाल की ओर से आयोजित समारोह में सुधा ओम ढींगरा यह सम्मान लेने पहुँच नहीं पाईं तो पंकज सुबीर ने उनकी तरफ से इस सम्मान को ग्रहण किया। प्रख्यात कथाकार गोविंद मिश्र इस कार्यक्रम के अध्यक्ष थे, जबकि सम्मानित रचनाकारों पर वक्तव्य कहानीकार मुकेश वर्मा ने दिया।

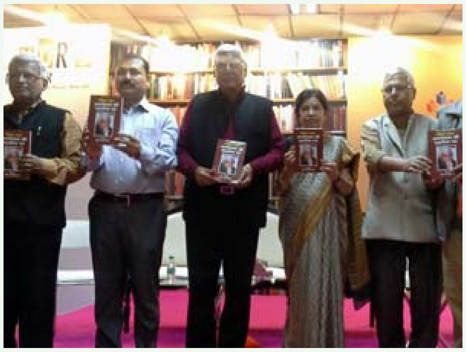

'माँ गाँव में है' और 'दिविक रमेश: आलोचना की दहलीज पर' का लोकार्पण

दिविक रमेश के नवीनतम कविता संग्रह 'माँ गाँव में है' एवं प्रेम जनमेजय द्वारा सम्पादित 'दिविक रमेश : आलोचना की दहलीज पर' का लोकार्पण सुविख्यात कथाकार और चिन्तक मैत्रेयी पुष्पा की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर डॉ. अजय नावरिया, प्रताप सहगल, डॉ. जितेन्द्र श्रीवास्तव और प्रेम जनमेजय ने विशेष रूप से विचार व्यक्त किए। सभागार में मदन कश्यप, नवनीत पांडेय, गिरीश पंकज, रमेश तेलंग, सुरेन्द्र सुकुमार, महेन्द्र भटनागर, लालित्य ललित, रूपा सिंह, राजेन्द्र सहगल, राधेश्याम तिवारी सहित अनेक साहित्यकार और पुस्तक प्रेमी उपस्थित थे।

अध्यक्ष में मैत्रेयी पुष्पा ने बताया कि उन्हें संग्रह का शीर्षक बहुत ही अच्छा लगा। माँ गाँव में है कि नहीं लेकिन हमारी जड़े गाँव में हैं। उन्होंने कहा कि मुझ कथाकार को शायद इसलिए बुलाया गया है कि मैं गाँव से हूँ, गाँव को मानती हूँ, लेकिन मैं कविता पढ़ती हूँ। इसके बाद उन्होंने अपनी पसन्द की कविता के रूप में 'बेटी ब्याही गई है' कविता का पाठ किया और काव्यमय टिप्पणी भी की। संचालन प्रेम जनमेजय ने किया। चर्चा प्रारम्भ करते हुए प्रेम जनमेजय ने कहा कि दिविक रमेश हमारे समय के बहुत ही महत्त्वपूर्ण कवि-साहित्यकार हैं। लेकिन कुछ षड्यंत्रों के चलते उनके महत्त्व को पूरी तरह रेखांकित नहीं होने दिया गया हैं।

डॉ. प्रेम जनमेजय तथा सर्वेश अस्थाना को 'काका हाथरसी हास्य रत्न सम्मान'

२० फरवरी २०१५ को वर्ष २०१३ का 'काका हाथरसी हास्य रत्न सम्मान' प्रसिद्ध व्यंग्यकार डॉ. प्रेम जनमेजय को तथा वर्ष २०१४ का 'काका हाथरसी हास्य रत्न सम्मान' लोकप्रिय मंचीय कवि श्री सर्वेश अस्थाना को प्रदान किया गया।

प्रगति मैदान में विश्व पुस्तक मेले के 'लेखक मंच' पर आयोजित इस कार्यक्रम में प्रसिद्ध विद्वान डॉ.प्रभाकर श्रोत्रिय तथा पूर्व राजनायिक श्री वीरेन्द्र गुप्त द्वारा दोनों व्यंग्यकारों को इस पुरस्कार से सम्मानित किया गया। पुरस्कारस्वरूप दोनों महानुभावों को अंगवस्त्र, श्रीफल, प्रशस्ति-पत्र तथा पुरस्कार की राशि पच्चीस-पच्चीस हज़ार रुपये प्रदान की गई।

इस अवसर पर काका हाथरसी पुरस्कार ट्रस्ट के सचिव डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल ने ट्रस्ट के पुरस्कारों की रूपरेखा प्रस्तुत की और बताया कि काका हाथरसी द्वारा अपने स्रोत से स्थापित इस ट्रस्ट द्वारा प्रथम पुरस्कार १९७५ में हास्यरस के जाने-माने कवि श्री ओमप्रकाश आदित्य को दिया गया था। तबसे अब तक चालीस हास्य-व्यंग्यकारों को सम्मानित करने का सौभाग्य ट्रस्ट को प्राप्त हुआ है। काका हाथरसी पुरस्कार ट्रस्ट के उपाध्यक्ष प्रो. अशोक चक्रधर ने काका हाथरसी के जीवनवृत्त को रोचक ढंग से प्रस्तुत किया और डॉ. मुकेश गर्ग ने श्री काका हाथरसी से जुड़े अनेक रोचक संस्मरण सुनाए।

अनेक विख्यात साहित्यकारों तथा व्यंग्य लेखकों ने उपस्थित होकर इस कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई। कार्यक्रम का सफल संचालन स्नेहा चक्रधर ने किया।

डॉ. प्रेम जनमेजय को लाइफ़ टाइम अचीवमेंट सम्मान

हिंदी के लब्ध प्रतिष्ठ साहित्यकार, भाषाविद्, शिक्षक और 'व्यंग्ययात्रा' के यशस्वी संपादक डॉ. प्रेम जनमेजय को उनकी उल्लेखनीय साहित्यिक सेवा के लिए 'सृजनगाथा डॉट कॉम लाइफ टाइम अचीवमेंट अवार्ड' से अलंकृत किया जाएगा। साहित्यिक वेब पत्रिका सृजनगाथा डॉट कॉम द्वारा यह सम्मान विगत 7 वर्षों से हिंदी के किसी वरिष्ठ रचनाकार को उसके अप्रतिम रचनात्मक योगदान के लिए दिया जाता है।

आधुनिक हिंदी व्यंग्य की तीसरी पीढ़ी के समर्थ व्यंग्यकार श्री जनमेजय को 17 मई से 24 मई, 2015 तक होनेवाले 7 दिवसीय 10 वें अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन (लमही से लुम्बिनी) में इस सम्मान से नवाज़ा जाएगा।

हरकीरत 'हीर ' का काव्य संग्रह 'दर्द की महक' पुरस्कृत

केंद्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा संचालित हिन्दीतर भाषी हिन्दी लेखक पुरस्कार योजना के अंतर्गत माननीय मानव संसाधन विकास मंत्री द्वारा गठित उच्चस्तरीय चयन समिति के निर्णय के अनुसार वर्ष 2013 के लिए गुवाहाटी निवासी कवयित्री हरकीरत 'हीर' की कृति 'दर्द की महक' का चयन एक लाख रुपये के पुरस्कार हेतु किया गया है।

पुण्य स्मरण संध्या में साहित्यकारों को सम्मानित किया गया

सीहोर के बी. बी. एस. क्लब तथा शिवना प्रकाशन द्वारा आयोजित पुण्य स्मरण संध्या में स्व. जनार्दन शर्मा, स्व. नारायण कासट, स्व. अम्बादत्त भारतीय, स्व. ऋषभ गांधी, स्व. कैलाश गुरु स्वामी, स्व. कृष्ण हरि पचौरी, स्व. मोहन राय तथा स्व. रमेश हठीला को काव्यांजलि अर्पित की गई। इस पुण्य स्मरण संध्या में स्व. बाबा अम्बादत्त भारतीय स्मृति शिवना सम्मान श्रीमती स्वाति तिवारी को, जनार्दन शर्मा स्मृति शिवना सम्मान श्री मोहन सगोरिया को, स्व. रमेश हठीला शिवना सम्मान शायरा श्रीमती इस्मत ज़ैदी को तथा स्व. मोहन राय स्मृति शिवना सम्मान श्री रियाज़ मोहम्मद रियाज़ को प्रदान किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता मध्य प्रदेश साहित्य अकादमी की सचिव श्रीमती नुसरत मेहदी ने की जबकि मुख्य अतिथि के रूप में नगरपालिका अध्यक्ष श्री नरेश मेवाड़ा तथा विशिष्ट अतिथि के रूप में इछावर के विधायक श्री शैलेन्द्र पटेल उपस्थित थे।

दीप प्रज्वलन तथा दिवंगत साहित्यकारों, पत्रकारों को अतिथियों द्वारा श्रद्धांजलि अर्पित करने के साथ कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ। बी बी एस क्लब की ओर से वसंत दासवानी ने पुष्प गुच्छ भेंट कर सभी अतिथियों का स्वागत किया। तत्पश्चात शिवना प्रकाशन द्वारा साहित्यकारों को सम्मानित किया गया। अतिथियों ने स्व. बाबा अम्बादत्त भारतीय स्मृति शिवना सम्मान जानी मानी कथाकारा श्रीमती स्वाति तिवारी को, जनार्दन शर्मा स्मृति शिवना सम्मान सुप्रसिद्ध कवि श्री मोहन सगोरिया को, स्व. रमेश हठीला शिवना सम्मान वरिष्ठ शायरा श्रीमती इस्मत ज़ैदी को तथा स्व. मोहन राय स्मृति शिवना सम्मान सीहोर के ही वरिष्ठ शायर श्री रियाज़ मोहम्मद रियाज़ को प्रदान किया गया। सभी को शॉल श्रीफल सम्मान पत्र तथा पुष्प गुच्छ भेंट कर ये सम्मान प्रदान किये गये। इस अवसर पर शिवना प्रकाशन की आठ पुस्तकों, मुकेश दुबे के तीन उपन्यासों 'क़तरा-क़तरा ज़िंदगी', 'रंग ज़िंदगी के' तथा 'कड़ी धूप का सफ़र', नुसरत मेहदी के उर्दू ग़ज़ल संग्रह 'घर आने को है', अमेरिका की कवयित्री सुधा ओम ढींगरा के काव्य संग्रह 'सरकती परछाइयाँ', पूर्व पुलिस महानिरीक्षक श्री आनंद पचौरी के काव्य संग्रह 'चलो लौट चलें' तथा मुम्बई की कवयित्री मधु अरोड़ा के काव्य संग्रह 'तितलियों को उड़ते देखा है', हिन्दी चेतना ग्रंथमाला 'नई सदी का कथा समय' का विमोचन किया गया। सम्मान समारोह के पश्चात कवि सम्मेलन में सम्मानित तथा आमंत्रित कवियों ने अपनी प्रतिनिधि रचनाओं का पाठ किया। स्वाति तिवारी, मोहन सगोरिया, इस्मत ज़ैदी, नुसरत मेहदी, तिलकराज कपूर, रियाज़ मोहम्मद रियाज़, मुकेश दुबे, गौतम राजरिशी, हरिवल्लभ शर्मा तथा वंदना अवस्थी दुबे ने अपनी प्रतिनिधि रचनाओं का पाठ कर दिवंगत साहित्यकारों को काव्यांजलि प्रदान की। कार्यक्रम में बड़ी संख्या में शहर के सुधी श्रोता, पत्रकार एवं प्रबुद्ध जन उपस्थित थे। अंत में आभार शैलेश तिवारी ने व्यक्त किया।

विश्व पुस्तक मेले में व्यंग्य – विमर्श

प्रख्यात आलोचक डॉ. नित्यानंद तिवारी, दिविक रमेश, अजय नावरिया ने, विश्व पुस्तक मेले के 'लेखक मंच' पर सुधा ओम ढींगरा एवं लालित्य ललित संपादित 'सार्थक व्यंग्य का यात्री: प्रेम जनमेजय' तथा प्रेम जनमेजय की पंजाबी में के एल गर्ग द्वारा अनूदित कृति का लोकार्पण किया। डॉ. नित्यानंद तिवारी ने कहा कि मैं प्रेम जनमेजय के व्यंग्य रचनाकर्म के कारण आश्वस्त हूँ कि वे हिंदी व्यंग्य को एक दिशा दे रहे हैं। मेरे वे विद्यार्थी रहे हैं और मुझे इसका गर्व है। तिवारी जी ने विस्तार से व्यंग्य के सौंदर्यशास्त्र एवं उसके स्वरूप की चर्चा की। उन्होंने पुस्तक के गेट अप को भी सराहा। प्रसिद्ध कवि दिविक रमेश ने प्रेम जनमेजय की प्रशंसा की कि वे अपनी रचनाओं के माध्यम से संवाद उपस्थित करते हैं। प्रेम वंचितों पर व्यंग्य नहीं करते हैं और इस दृष्टि से वे एक संपूर्ण मनुष्य हैं। हमारा साहित्य है ही मनुष्यता के लिए। प्रेम जनमेजय ने व्यंग्य को एक गंभीर रचनाकर्म माना है एवं उसे एक विधा के रूप में प्रतिष्ठा दिलाई है। सुधा ओम ढींगरा एवं लालित्य ललित द्वारा संपादित यह कृति उनके रचनाकर्म को और अधिक समझने का अवसर प्रदान करेगी। अजय नावरिया ने कहा कि प्रेम जनमेजय ने मुझे पढ़ाया नहीं पर मैं उनके कॉलेज का विद्यार्थी रहा हूँ और उन्हें अपना गुरु मानता हूँ। एक गुरु की भाँति उन्होंने मुझे निरंतर स्नेह दिया है। मैंने उनकी जीवन शैली एवं रचनाकर्म बहुत समीप से देखा है, उन्होंने गंभीर व्यंग्य के लिए भगीरिथी प्रयत्न किए हैं। पुस्तक का शीर्षक बहुत ही सार्थक हैं एवं संपादकों ने बहुत गंभीरता से इसे तैयार किया है। प्रेम जनमेजय का एक बड़ा योगदान यह भी है कि वे युवा पीढ़ी के रचनाकर्म को सामने लाए हैं। तरसेम गुजराल ने कहा कि यह कृति न केवल प्रेम जनमेजय के व्यंग्य लेखन को समझने के लिए महत्पूर्ण है अपितु इसके माध्यम से सामयिक व्यंग्य को भी बेहतरी से समझा जा सकता है। प्रेम जनमेजय ने हिंदी व्यंग्य को एक व्यापक आयाम दिया है। उन्होंने इस कृति के संपादकों के कुशल संपादन की भी सराहना की। इस अवसर पर राजधानी के 50 से अधिक रचनाकार उपस्थित थे। संचालन पंकज सुबीर ने किया।

विश्व पुस्तक मेले में ही 'व्यंग्य यात्रा' ने दो महत्त्वपूर्ण आयोजन किए।

साहित्य मंच के अंतर्गत डॉ. गौतम सान्याल के व्यंग्य संकलन ' बिहार पर मत हंसों ' एवं आलोचनात्मक कृति 'आख्यानशास्त्र' का लोकार्पण डॉ. नामवर सिंह, विश्वनाथ त्रिपाठी, नित्यानंद तिवारी, संजीव एवं प्रेम जनमेजय ने किया। डॉ. नामवर सिंह ने कहा कि युवा आलोचक गौतम सान्याल ने आख्यानशास्त्र पर वह महत्त्वपूर्ण कार्य किया है, जो हम जैसे बुजुर्ग आलोचक नहीं कर पाए। इस पुस्तक मेले में मैंने ऐसी गंभीर चर्चा किसी अन्य मंच पर नहीं देखी। उन्होंने गौतम सान्याल की व्यंग्य चेतना की भी प्रशंसा की। विश्वनाथ त्रिपाठी ने कहा कि गौतम सान्याल के पास आलोचक की पैनी दृष्टि है। उनका अध्ययन बहुत विशाल है और मुझे विश्वास है कि यह कृति एक महत्त्वपूर्ण कृति सिद्ध होगी। संजीव ने एक कथाकार की दृष्टि से इस कृति को देखा और गौतम सान्याल के साथ व्यतीत पुराने समय को याद करते हुए कहा कि मैंने इन्हें और इनके लेखन को बहुत करीब से देखा है प्रेम जनमेजय ने कहा कि गौतम सान्याल के पास आलोचना की एक अलग भाषा है। वे वस्तु की गहराई में जाकर एक चिंतन प्रस्तुत करते हैं। इस अवसर पर मंच ने लालित्य ललित की व्यंग्य कृति ' जिंदगी तेरे नाम डार्लिंग' का भी विमोचन किया।

युवा व्यंग्य लेखन पर गंभीर चर्चा

'व्यंग्य यात्रा' के तत्वावधान में विश्व पुस्तक मेले के लेखक मंच पर युवा व्यंग्य लेखन पर गंभीर चर्चा हुई। प्रेम जनमेजय द्वारा हिंदी के युवा व्यंग्य लेखकों की रचनाओं के संकलन ' हँसते हुए रोना' का लोकार्पण आबिद सुरती, शेरजंग गर्ग, बलराम, गौतम सान्याल एव सुशील सिद्धार्थ ने किया। इस अवसर पर आबिद सुरती, शेरजंग गर्ग, बलराम, गौतम सान्याल एव सुशील सिद्धार्थ के अतिरिक्त गिरीश पंकज अनूप श्रीवास्तव और गिरिराजशरण अग्रवाल ने हिंदी युवा व्यंग्य लेखन पर अपने महत्त्वपूर्ण विचार साझा किए। संचालन पंकज सुबीर ने किया।

RBC Dominion Securities

Tel : (905) 764-3582
Fax : (905) 764-7324
1800-268-6959

Professional Wealth Management Since

Hira Joshi, CFP
Vice President & Investment Advisor

RBC Dominion Securities Inc.
260 East Beaver Creek Road
Suite 500
Richmond Hill,Ontario L4B 3M3
Hira.Joshi@rbc.com

रमणिका फ़ाउण्डेशन सम्मान समारोह

रमणिका फ़ाउण्डेशन द्वारा आयोजित वर्ष २०१३-१४ का सम्मान समारोह, २१ फरवरी, २०१५ को साहित्य अकादेमी के सभागार में सम्पन्न हुआ। रमणिका फ़ाउण्डेशन आदिवासियों, दलितों और स्त्रियों के अधिकारों के लिए किए जा रहे संघर्षों को स्वर देने वाला एक ऐसा मंच है, जो इस दिशा में कई वर्षों से प्रयासरत है। आदिवासी, दलित और स्त्री विमर्श के साथ जनवादी लेखन तथा अनुवाद के क्षेत्र में दिए जाने वाले ये सम्मान, हाशिए के शब्दों को रेखांकित करने और पूरी शक्ति के साथ उनके समर्थन में खड़े होने के अपने संकल्प की ओर बढ़या गया एक क़दम है। ये सम्मान हिन्दी के प्रख्यात कवि केदार नाथ सिंह के हाथों, वरिष्ठ पत्रकार-'जनसत्ता' के संपादक ओम थानवी की अध्यक्षता में हुए कार्यक्रम में प्रदान किए गए। सम्मान प्राप्त करने वाले लेखकों में सर्वश्री महादेव टोप्पो, जोराम यालम नाबाम, अजय नावरिया, अनिता भारती, असग़र वजाहत एवं जे.एल. रेड्डी हैं। इस अवसर पर सम्मान स्वरूप प्रत्येक लेखक को २१,००० रुपये की राशि, प्रतीक चिन्ह तथा प्रशस्ति पत्र प्रदान किए गए। रमणिका फ़ाउण्डेशन द्वारा ये सम्मान प्रत्येक तीन वर्ष पर प्रदान किए जाते हैं।

विश्व पुस्तक मेले में नवगीत पर चर्चा

दिल्ली स्थित प्रगति मैदान में संपन्न हुए विश्व पुस्तक मेला - 2015 में पहली बार नवगीत पर चर्चा हुई।

'समाज का प्रतिबिम्ब हैं नवगीत' विषय का प्रवर्तन करते हुए संचालक एवं नवगीतकार ओमप्रकाश तिवारी ने कहा कि नवगीत लिखे तो लगभग 50 वर्ष से जा रहे हैं, लेकिन आज भी इस काव्य विधा को छंद मुक्त कविताओं की तुलना में यह कहकर उपेक्षित किया जाता है कि छंदबद्ध कविताएँ दैनंदिन जीवन की समस्याएँ बयान नहीं कर पातीं।

वरिष्ठ नवगीतकार राधेश्याम बंधु ने इसे गेय कविता के साथ षड्यंत्र बताते हुए कहा कि जनमानस की अभिव्यक्तियाँ गीतों के जरिए ही अभिव्यक्त हो सकती हैं और यह दायित्व आज के नवगीतकार बखूबी निभा रहे हैं। गीत विधा को भारतीय समाज का अभिन्न अंग बताते हुए नवगीतकार सौरभ पांडे ने कहा कि गीत वायवीय तत्त्वों को सरस ढंग से ले आते हैं, जबकि नवगीत आज के समाज के सुखों-दुखों को सरसता से सामने लाते हैं। नवगीत समीक्षक आचार्य संजीव सलिल ने कहा कि काव्यात्मक ढंग से सुख-दुख की बात करना ही रचनाकर्म है और यह तत्त्व आज के नवगीतों में भली-भाँति देखने को मिल रहा है।

विषय का समापन करते हुए वरिष्ठ नवगीतकार डॉ. जगदीश व्योम ने कहा कि नवगीत अपनी विशिष्ट शिल्प-शैली के कारण हिंदी साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। डॉ. व्योम के अनुसार नई कविता जो बात छंदमुक्त होकर कहती है, वही बात लय और शब्द प्रवाह के माध्यम से नवगीत व्यक्त करते हैं।

पुस्तक मेले के साहित्य मंच पर हुए इस परिसंवाद में जगदीश पंकज, गीता पंडित, शरदिंदु मुखर्जी, महिमा श्री, योगेंद्र शर्मा एवं वेद शर्मा आदि नवगीतकारों ने नवगीत के विभिन्न आयामों पर चर्चा की। परिसंवाद को सुनने बड़ी संख्या में श्रोता उपस्थित थे।

भूटान की राजधानी थिंफू के अंतरराष्ट्रीय मंच पर पहुँची भारत की लेखिकाएँ

23 फरवरी 2015 विश्व मैत्री मंच (संलग्न हेमंत फाउण्डेशन)द्वारा भूटान की राजधानी थिम्फू में अंतरराष्ट्रीय महिला लघुकथा सम्मेलन आयोजित किया गया, जिसमें भूटान समेत भारत के विभिन्न राज्यों से आई महिला रचनाकारों ने भाग लिया । सम्मेलन दो सत्रों में सम्पन्न हुआ । प्रथम सत्र की अध्यक्षता पटना से आईं जानी मानी लेखिका डॉ. मिथलेश कुमारी मिश्रा ने की तथा मुख्य अतिथि के रूप में औरंगाबाद से आईं वरिष्ठ लेखिका अनुया दलवी उपस्थित थीं ।

कार्यक्रम का आरम्भ डॉ. रोचना भारती (नासिक) की गाई सरस्वती वन्दना से हुआ। संस्था की सदस्याओं ने अतिथियों का स्वागत किया। संस्था की अध्यक्ष संतोष श्रीवास्तव ने अपने स्वागत भाषण में संस्था के उद्देश्यों पर प्रकाश डाला और इस मिशन को विश्व स्तर पर ले जाने के लिए सभी से सहयोग की अपील की । संस्था का परिचय कार्याध्यक्ष डॉ. ज्योति गजभिये (मुम्बई) ने दिया । इस अवसर पर विश्व मैत्री मंच द्वारा प्रकाशित कविता संग्रह 'बाबुल हम तोरे अँगना की चिड़िया' सहित 12 पुस्तकों का लोकार्पण हुआ। लघुकथा के विभिन्न आयामों पर आलेख पढ़े गए तथा लघुकथा पाठ की समीक्षा संतोष श्रीवास्तव ने की। डॉ. मिथलेश कुमारी मिश्रा ने अपने अध्यक्षीय भाषण में लघुकथा के विभिन्न आयामों पर प्रकाश डालते हुए श्रोताओं की शंकाओं का समाधान किया। कार्यक्रम का संचालन मधु सक्सेना ने तथा आभार प्रदर्शन लक्ष्मी यादव ने किया।

द्वितीय सत्र में नीता श्रीवास्तव (रायपुर)के कुशल संचालन में 18 रचनाकारों ने काव्यपाठ किया । इस सत्र की अध्यक्षता डॉ. विद्या चिटको (अमेरिका) ने की। अनुया दलवी ने मराठी नाटक ''नट सम्राट'' की एकल प्रस्तुति की। इस कार्यक्रम में भारत के बिहार, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, मराठवाड़ा, दिल्ली, अमेरिका एवं भूटान के शिक्षा विभाग से जुड़े हुए जंबा याशी, करमा वांगमों, लुंगटेंन वांगमों, सोनम चौटन की उपस्थिति उल्लेखनीय रही ।

नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेले में शिवना प्रकाशन-ढींगरा फाउण्डेशन-हिन्दी चेतना के स्टॉल की चित्रमय झलकियाँ

नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेले में हॉल क्रमांक 12 में 288 नंबर पर स्थित 'शिवना प्रकाशन-ढींगरा फाउण्डेशन- हिन्दी चेतना' का स्टॉल।

एनबीटी द्वारा प्रकाशित तथा सुधा ओम ढींगरा द्वारा संपादित प्रवासी कहानियों के संकलन 'इतर' का विमोचन करते अतिथि।

अभिनव शुक्ल अपने नए काव्य संग्रह को वरिष्ठ ग़ज़लकार श्री लक्ष्मीशंकर वाजपेयी को भेंट करते हुए।

नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेले में 'शिवना प्रकाशन-ढींगरा फाउण्डेशन-हिन्दी चेतना' के स्टॉल पर सनी गोस्वामी तथा शहरयार अमजद ख़ान।

लेखक मंच पर कार्यक्रम में कहानीकार वंदना राग, सामयिक के श्री महेश भारद्वाज, कवि नीरज गोस्वामी तथा वरिष्ठ कथाकार श्री मुकेश वर्मा।

डॉ. प्रेम जनमेजय पर प्रकाशित ग्रंथ के साथ वरिष्ठ व्यंग्यकार श्री गिरीश पंकज तथा अट्टहास के संपादक श्री अनूप श्रीवास्तव।

डॉ. प्रेम जनमेजय, डॉ. गिरिराज शरण अग्रवाल, श्री तरसेम गुजराल, हिन्दी चेतना के स्टॉल पर डॉ. प्रेम जनमेजय पर प्रकाशित पुस्तक के साथ।

पंकज सुबीर के संग्रह 'कसाब.गांधी@यरवदा.इन' का लेखक मंच से विमोचन वंदना राग, महेश भारद्वाज, नीरज गोस्वामी तथा मुकेश वर्मा द्वारा।

कवयित्री पारुल सिंह, शायरा नुसरत मेहदी, शायर नीरज गोस्वामी, कहानीकार मुकेश दुबे तथा कवि अभिनव शुक्ल।

हिन्दी चेतना ढींगरा फाउण्डेशन शिवना प्रकाशन के स्टॉल पर व्यंग्यकार तथा लेखक मंच प्रभारी डॉ. लालित्य ललित, आलोचक डॉ. प्रज्ञा।

सुधा ओम ढींगरा के संग्रह 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' का विमोचन सौरभ शर्मा, वंदना राग, महेश भारद्वाज, नीरज गोस्वामी, मुकेश वर्मा द्वारा।

कवयित्री पारुल सिंह, शायरा नुसरत मेहदी, से उनकी पुस्तक 'मैं भी तो हूँ' पर हस्ताक्षर प्राप्त करते हुए।

'सार्थक व्यंग्य का यात्री: प्रेम जनमेजय' का विमोचन करते डॉ. नित्यानंद तिवारी, दिविक रमेश, डॉ. अजय नावरिया और डॉ. लालित्य ललित।

हिन्दी चेतना के सह संपादक अभिनव शुक्ल का काव्य संग्रह 'हम भी वापस जाएँगे' पुस्तक मेले में लोकार्पित हुआ। वे तथा उनकी पत्नी दीप्ति।

सुप्रसिद्ध कार्टूनिस्ट तथा कथाकार श्री आबिद सुरती हिन्दी चेतना के स्टॉल पर आए, उनके साथ कथाकार मुकेश दुबे तथा पंकज सुबीर।

गीतकार सौरभ पाण्डेय, वरिष्ठ नवगीतकार राधेश्याम बंधु, दोहाकार आचार्य संजीव सलिल तथा शायर नीरज गोस्वामी।

कवयित्री पूनम माटिया, डॉ. सुधा नवल, कवयित्री पारुल सिंह, पंकज सुबीर, शायर नीरज गोस्वामी, वरिष्ठ व्यंग्यकार डॉ. हरीश नवल।

पुष्पगंधा के संपादक तथा वरिष्ठ कहानीकार श्री विकेश निझावन को अपनी पुस्तकें भेंट करते कथाकार मुकेश दुबे।

साहित्यकार तथा छत्तीसगढ़ के कलेक्टर संजय अलंग के साथ डॉ गिरिराजशरण अग्रवाल, डॉ. लालित्य ललित तथा मुकेश दुबे।

पंकज सुबीर अपने नये कहानी संग्रह 'कसाब.गांधी@यरवदा .इन' को अपने कुछ युवा प्रशंसकों को हस्ताक्षरित करके प्रदान करते हुए।

युवा शायर, समीक्षक प्रकाश अर्श, ग़ज़लकार सौरभ शेखर के साथ हिन्दी चेतना के सह संपादक पंकज सुबीर तथा अभिनव शुक्ल।

वरिष्ठ आलोचक भारत भारद्वाज, कहानीकार तरुण भटनागर तथा पाखी के संपादक श्री प्रेम भारद्वाज।

डॉ. सुधा ओम ढींगरा के कहानी संग्रह 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' के साथ युवा आलोचक सरिता शर्मा।

कथाकार तथा उपन्यासकार महुआ माज़ी का शिवना प्रकाशन के स्टॉल पर स्वागत करते पंकज सुबीर।

शिवना प्रकाशन-हिन्दी चेतना द्वारा आयोजित कार्यक्रम 'हिन्दी ग़ज़ल की नई पीढ़ी' में ग़ज़ल पढ़तीं शायरा पारुल सिंह।

डॉ. प्रेम जनमेजय का स्टॉल पर स्वागत करते शिवना प्रकाशन के शहरयार अमजद ख़ान साथ हैं हिन्दी चेतना से अभिनव शुक्ल तथा पंकज सुबीर।

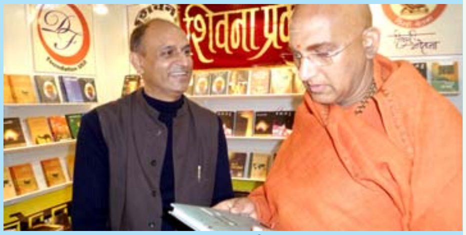

जूना पीठाधीश्वर श्री अवधेशानंद गिरी भी शिवना प्रकाशन-हिन्दी चेतना के स्टॉल पर आए उनका स्वागत करते पंकज सुबीर।

शिवना प्रकाशन-हिन्दी चेतना द्वारा आयोजित कार्यक्रम 'हिन्दी ग़ज़ल की नई पीढ़ी' में उपस्थित शायर तथा अतिथिगण।

डॉ. प्रेम जनमेजय, दूरदर्शन के डॉ. विवेकानंद शर्मा, व्यंग्यकार गौतम सान्याल, समीक्षक वंदना गुप्ता, कथाकार मुकेश दुबे।

शिवना प्रकाशन-हिन्दी चेतना के स्टॉल वरिष्ठ कथाकारा नासिरा शर्मा का स्वागत करते डॉ. लालित्य ललित तथा पंकज सुबीर।

मुकेश दुबे, नुसरत मेहदी, नीरज गोस्वामी, अभिनव शुक्ल, की पुस्तक विमोचन में डॉ. गिरिराज अग्रवाल, श्री गिरीश पंकज, डॉ. हरीश नवल।

कथाकार गीताश्री, गीता पंडित, दूसरी परंपरा के संपादक सुशील सिद्धार्थ तथा कहानीकार विवेक मिश्र हिन्दी चेतना के स्टॉल पर।

कवयित्री वंदना यादव, कवयित्री मधु अरोड़ा, कथाकार तेजेन्द्र शर्मा, उपन्यासकार राजीव रंजन प्रसाद, समीक्षक पूजा प्रजापति, आरती प्रजापति

डॉ. अशोक चक्रधर को प्रेम जनमेजय पर प्रकाशित पुस्तक भेंट करते मुकेश दुबे तथा शायर वीनस केसरी।

एक समय ऐसा भी आया कि शिवना प्रकाशन–हिन्दी चेतना के स्टॉल पर इतने अतिथि आ गए कि स्टॉल छोटा पड़ गया।

कहानीकार तथा आउटलुक की साहित्य प्रभारी आकांक्षा पारे पंकज सुबीर के कहानी संग्रह 'कसाब.गांधी@यरवदा .इन' के साथ।

कवि पवन करण, कथाकार महेश कटारे, कवि कुमार अनुपम, पंकज सुबीर, कवि रविकांत, कथाकार बहादुर पटेल, कवि संदीप नाइक।

सुप्रसिद्ध ग़ज़लकार श्री आलोक श्रीवास्तव, शिवना प्रकाशन से प्रकाशित ग़ज़ल संग्रह 'डाली मोगरे की' का अवलोकन करते हुए।

शीर्ष साहित्यकार चित्रा मुद्गल तथा सामयिक प्रकाशन के श्री महेश भारद्वाज के साथ पंकज सुबीर।

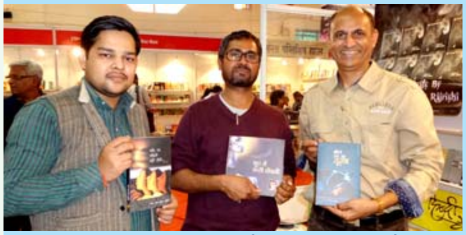

प्रसिद्ध चित्रकार विजेंद्र विज अपने द्वारा डिज़ाइन शिवना प्रकाशन की पुस्तकों के साथ। साथ में हैं अंजुमन प्रकाशन के वीनस केसरी।

वरिष्ठ आलोचक डॉ. नामवर सिंह को हिन्दी चेतना ग्रंथमाला के तहत शिवना प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तक भेंट करते डॉ. प्रेम जनमेजय।

शिवना प्रकाशन हिन्दी चेतना के स्टॉल पर बहुवचन के संपादक तथा वरिष्ठ आलोचक श्री अशोक मिश्र का स्वागत करते पंकज सुबीर।

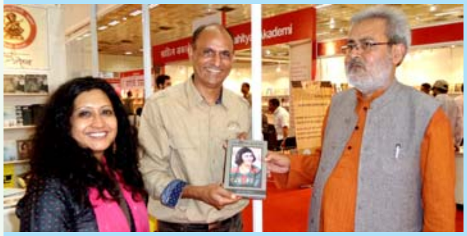

लमही के संपादक श्री विजय राय तथा कहानीकार वंदना राग, सुधा ओम ढींगरा के कहानी संग्रह 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' के साथ।

वरिष्ठ आलोचक डॉ. नामवर सिंह तथा डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी को अपना नया कहानी संग्रह भेंट करते पंकज सुबीर साथ हैं डॉ. प्रेम जनमेजय।

हिन्दी चेतना के सह संपादक तथा कवि और लघुकथाकार श्री रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' का स्वागत करते शायर नीरज गोस्वामी।

इरशाद सिकंदर खान, बिमलेन्दू कुमार, ज़मीर जायसवाल, नीरज गोस्वामी, आलोक मिश्रा तथा प्रकाश अर्श।

सुप्रसिद्ध आलोचक तथा कहानीकार डॉ. पुरषोत्तम अग्रवाल भी शिवना प्रकाशन हिन्दी चेतना के स्टॉल पर आए।

समीक्षक सिद्धेश्वर सिंह, अनुलता राज नायर, वंदना गुप्ता, शिवना प्रकाशन हिन्दी चेतना के स्टॉल पर पंकज सुबीर के साथ।

वरिष्ठ कहानीकार, उपन्यासकार निर्मला भुराड़िया, सुधा ओम ढींगरा के कहानी संग्रह 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' के साथ।

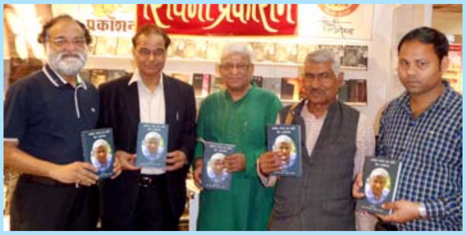

उपन्यासकार प्रदीप सौरभ, लोकायत के संपादक बलराम, डॉ. प्रेम जनमेजय तथा कहानीकार महेश कटारे।

वरिष्ठ पत्रकार तथा स्तंभ लेखक मुकेश कुमार भी शिवना प्रकाशन हिन्दी चेतना के स्टॉल पर आए।

प्रकाश अर्श, आलोक श्रीवास्तव, महेश कटारे, मधु अरोड़ा, अनुरंजन झा, साधना अग्रवाल, गौतम राजरिशी के 'पाल ले इक रोग नादाँ' के साथ।

वरिष्ठ कहानीकार, उपन्यासकार रजनी गुप्त, सुधा ओम ढींगरा के कहानी संग्रह 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' के साथ।

कवि कथाकार तथा उपन्यासकार विमलेश त्रिपाठी के साथ पंकज सुबीर हिन्दी चेतना के स्टॉल पर।

प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्रिका 'हंस' के संपादक दल के श्री विभास वर्मा तथा डॉ. बलवंत कौर का स्वागत करते पंकज सुबीर।

भारतीय ज्ञानपीठ के निदेशक, वरिष्ठ कवि श्री लीलाधर मंडलोई, उपन्यासकार प्रदीप सौरभ के साथ चर्चारत गौतम राजरिशी और पंकज सुबीर।

कवि तथा पहले पहल के संपादक महेंद्र गगन, कवि अशोक पाण्डेय तथा कहानीकार मुकेश वर्मा के साथ पंकज सुबीर।

वरिष्ठ व्यंग्यकार डॉ. प्रेम जनमेजय 'हिन्दी चेतना ग्रंथमाला' के तहत प्रकाशित पुस्तक 'सार्थक व्यंग्य का यात्री: प्रेम जनमेजय' हस्ताक्षरित करते हुए।

सुधा ओम ढींगरा के पंजाबी कथा संग्रह का विमोचन करते सुभाष चंदर, शेरजंग गर्ग, अनूप श्रीवास्तव, प्रेम जनमेजय और आलोक पुराणिक।

अपने ग़ज़ल संग्रह 'डाली मोगरे की...' पर पाठक हेतु हस्ताक्षर करते हुए प्रसिद्ध शायर श्री नीरज गोस्वामी।

घुटने - घुटने पानी भीतर, खड़ी हुई है एक धोबिन,
कपड़े धो- धो उमर गुज़ारी, बीत गया इसका यौवन
इसी काम में बचपन बीता, हुई जवान आई सुसराल
बाप भी धोबी, ससुर भी धोबी, घर बदला ना बदला हाल॥

धो- धो कर औरों के कपड़े, चलती इसकी रोटी-दाल
बारिश हो या धूप, हर धोबी का यही सवाल
कपड़े धोते -धोते सोचे, कितना मुश्किल मेरा काम
धूप पानी की इच्छा करते, मेरी हो गई उमर तमाम॥

चित्र को उल्टा करके देखें

चित्र उलटकर देखो अब तुम, खड़ी हुई है एक सुंदर नारी
सर पर हैट, हाथ में सिगरेट, कहीं है जाने की तैयारी
अपना जीवन जापन करने, ढूँढ़ लिया है ऐसा काम
इस व्यापार में इसे हैं मिलते, बुरे-बुरे ही सब इंसान

वहाँ से मिला हुआ धन ही, इसके जीवन का साधन
अपना तन है बेचना पड़ता, भले करे न इसका मन
परेशान दिल, आँखों में डर, बनी हुई है एक खिलौना
नित मर्दों का दिल बहलाना पड़ता, कितना है यह काम घिनौना !

फिर खुदा से करें प्रार्थना, हे ! मेरे सच्चे भगवान
मेरी किस्मत में लिख देता, कोई अच्छा इंसान
कितना धंधा है यह मुश्किल, क्यों चली मैं यह राह
मैं भी तो बर्बाद हो गई, औरों को भी करूं तबाह॥

चित्रकार :
अरविंद नारले

कवि:
सुरेन्द्र पाठक

अन्याय के खिलाफ कोई भी खड़ा हो सकता है

अमेरिका के शहर मेडिसिन जो ऐलाबामा स्टेट में है, 6 फरवरी 2015 को एक दु:खद घटना घटी, जिससे पूरी दुनिया के भारतीय आक्रोश में आ गए थे। देश के मिडिया ने जी भर कर अमेरिका को कोसा। अमेरिका की रंगभेद नीति पर खूब कटाक्ष कसे गए। भारत से आए एक बुज़ुर्ग को बेरहमी से पीटा गया था; जो अपने पड़ोस में घूम रहे थे और वे अपने बेटे और बहू की सहायता करने यहाँ आए थे, उनके बच्चा हुआ था। पुलिस ऑफ़िसर एरिक पारकर ने अपने दो साथियों सहित उन्हें पीटा जिससे वे लकवा ग्रस्त हो गए। ऐसे व्यवहार के निस्संदेह कई कारण दिए गए। बचाव के लिए बहुत कुछ कहा गया।

आप सोच रहे होंगे कि इस समाचार की चर्चा अब क्यों? 28 मार्च 2015 को ऐलाबामा की फ़ेडरल ग्रैण्ड ज्यूरी ने पुलिस ऑफ़िसर एरिक पारकर को सज़ा सुना दी है, उन्हें दस साल तक की जेल हो सकती है। यह है यहाँ का कानून। अगर यहाँ के भारतीयों ने आवाज़ बुलंद की, तो उनकी ओर ध्यान दिया गया। मैं सिर्फ़ अल्पसंख्या वालों की बात नहीं कर रही, अन्याय के खिलाफ कोई भी खड़ा हो सकता है, चाहे वह दुनिया के किसी भी कोने से हो।

2012 के निर्भय काण्ड के दोषी अभी तक जेल में हैं। क्या लाभ हुआ कैंडल मार्च का? क्या हुआ शोर-शराबे का? कानून में परिवर्तन आया, पर गति तो धीमी ही रही। वर्षों कोर्ट -कचहरियों के चक्कर। बलात्कार और भी बढ़ गए। मित्रो, जब तक कानून व्यवस्था तेज़ी से काम नहीं करेगी, स्त्री विमर्श, नारी आंदोलन, नारी मुक्ति की चर्चाएँ बस चर्चाएँ ही रह जाएँगी, परिवर्तन नहीं आएगा। कानून अँधा है, पर बहरा नहीं। उसकी कार्य प्रणाली तेज़ करने के लिए आपको अपने आंदोलन भी तेज़ करने पड़ेंगे।

यहाँ अगर किसी कानून को पारित करवाना होता है तो उस समय तक उसका पीछा नहीं छोड़ा जाता, जब तक उसे विधिवत व्यवस्था की कार्यप्रणाली में गति नहीं दिलवाई जाती।

पिछले साल मैं भारत में थी। बातचीत में मैंने अक्सर देशवासियों को अमरीका को बुरा-भला कहते सुना। उनके अपने कारण होंगे पर कभी इस देश की कानून-व्यवस्था, कार्य स्थल का अनुशासन, साफ़-सफाई, कार्य प्रणाली, ईमानदारी को भी समझने की किसी ने कोशिश की है?

ख़ैर बात निकलेगी तो दूर तलक जाएगी।

इस पृष्ठ तक आते -आते इस बार फरवरी में हुए पुस्तक मेले की रौनक और उसकी झलकियाँ तो 'हिन्दी चेतना' के पृष्ठों में आप देख चुके होंगे। इस मेले में शिवना प्रकाशन, हिन्दी चेतना और ढींगरा फ़ाउण्डेशन के स्टाल पर आपने हिन्दी चेतना पत्रिका का जिस तरह स्वागत किया, पाठको, आपकी आभारी हूँ।

दो गज़ ज़मीन ढूँढ़ते आ गए मीलों दूर हम....

दोस्तों! हम तो दूर आ गए, भाग्य में लिखा था पर आप तो हमसे जुड़े रह सकते हैं.....

अगले अंक में फिर बातें होंगी, आपको अपना वायदा याद है न ? कौन सा ? अरे इतना जल्दी भूल गए, भाई अपने विचार ज़रूर हमसे साझा किया कीजिए। विचारों का आदान-प्रदान जोड़े रखता है। हमारा आपसी रिश्ता और मज़बूत होगा।

आपकी मित्र

सुधा ओम ढींगरा

यायावरता के अपने ही आनंद होते हैं, एक ठिकाने से दूसरे ठिकाने घूमते हुए जहाँ ज़रा सा साया नज़र आए वहीं ज़रा देर को कारवाँ रुक जाता है। तेज़ धूप से बचने के लिए पेड़ की यह ज़रा सी छाँव कितना सुकून देती है यह कोई यायावर ही जानता है।

सामयिक प्रकाशन : **Website: www.samayikprakashan.com**

चर्चित कथाकारों के कहानी संग्रह

₹ 200.00

मौसम राजनीतिक नौटंकियों और दृश्य-प्रपंचों का हो, लंपटों की अबाध लूट चल रही हो और सामाजिक परिवर्तन का दावा करने वाली ज्यादातर शक्तियां पस्त और परास्त भाव से रिचुअल्स (कर्मकांड) तक सीमित हो चुकी हों, प्रेम भारद्वाज अपने पहले कथा संग्रह **'इंतजार पांचवें सपने का'** में दूसरे अधिसंख्य नये कथाकारों की तरह रूप-विधान में नहीं भरमाते, न ही शौल्पिक कलाबाजियों या भाषिक जगलरी द्वारा अपने आनन्दलोक में मस्त रहकर जबरन चमत्कारों में भटकाते हैं। उनकी दृष्टि हर स्पंदन, हर आलोड़न, हर उथल-पुथल और हर टूट-फूट पर है।

प्रेम भारद्वाज

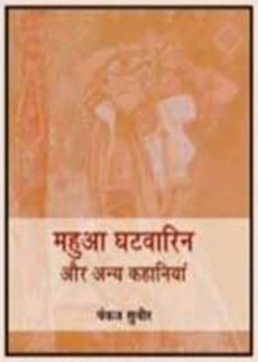

₹ 300.00

युवा पीढ़ी के बहुचर्चित कथाकार पंकज सुबीर की कहानियों का संग्रह **'महुआ घटवारिन और अन्य कहानियां'** वर्तमान दौर का प्रतिनिधि संग्रह है। यहां लेखक की नजर विचारहीन शरीरों की तरह जी रहे उपभोक्ताओं पर तो है ही, बाजार की रणनीतियों पर भी है। यहां व्यक्ति की आवश्यकता का कोई महत्त्व नहीं है। बिलाए जा रहे कथारस को लौटाने के कारगर प्रयास में पंकज सुबीर 'चौथमल मास्साब और पूस की रात' व 'महुआ घटवारिन' जैसी शानदार कहानियां लिखते हैं तो कई पत्रिकाओं में उन पर गहन चर्चा भी होती है। यह अनूठा संग्रह आपको सहेजकर रखना ही पड़ेगा।

पंकज सुबीर

₹ 300.00

युवा पीढ़ी के सुपरिचित रचनाकार अजय नावरिया की बारह कहानियों का संग्रह है **'यस सर'**। अच्छी बात यह है कि अजय नावरिया का कथाकार सपने देखना ही नहीं, उन्हें बुनना भी खूब जानता है। इनमें वह प्रेम और करुणा के साथ-साथ हर तरह के भेदभाव के उन्मूलन को प्रमुखता देता है। हमारी पुरजोर मान्यता है कि जो अजय नावरिया जैसे कथाकार को एक बार पढ़ लेगा, वह दूसरों को भी पढ़ने की सलाह अवश्य देगा।

अजय नावरिया

₹ 200.00

'पार उतरना धीरे से...' चर्चित युवा कथाकार विवेक मिश्र का दूसरा कहानी संग्रह है। विविध सुप्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित होकर इनकी कई कहानियां बहुप्रशंसित रही हैं। विवेक मिश्र अपनी इस अन्यतम विशेषता के कारण नयी पीढ़ी के एक अनूठे हस्ताक्षर के रूप में अपनी पहचान बना रहे हैं। उनके यहां कथा-परंपरा से प्रगाढ़ परिचय तो है ही, अपने समय की चिंताओं को समझते हुए उनका सामना करने की सलाहियत भी है।

विवेक मिश्र

सामयिक प्रकाशन : **E-mail: samayikprakashan@gmail.com**

Samita Mishra Memorial Foundation for Cancer Research

&

Clean & Healthy India Promotions International Inc.

Presents

Tambacco Chhoro
Jeevan Se Nata Jodo

A fight against Cancer

on the occasion of

World No Tobacco Day

Dated 31.05.2015, Time 6pm to 9pm

Venue:

Deputy Speaker Hall, Constitution Club of India,
V.P House, Rafi Marg,
New Delhi -110001

You are cordially Invited by

Samita Mishra Memorial Foundation for Cancer Research
B2B/10, Janakpuri, New Delhi-110058
Web: www.cancerbhao.org
Email ID: cancerbhagao@gmail.com
Contact: 011-46105143, 09289855855

Clean and Healthy India Promotions International Inc.
8040 Hawkshead road,
Wake Forest , NC 27587
Web: www.chipin-inc.org
Contact: 0919 671 9292

If Undelivered Please Return to:
P. C. Lab, Shop No. 3-4-5-6, Samrat Complex Basement, Opp. Bus Stand, Sehore, M.P., Pin-466001, Phone 07562-405545